श्री काशी संस्कृत ग्रन्थमाला २७२

॥ श्रीः ॥

लघुसङ्ग्रहः

[redacted]

191

चौखम्बा संस्कृत संस्थान
पोस्ट बाक्स नं० ११३९
वाराणसी–२२१ ००१ (भारत)

20875

॥ श्रीः ॥

काशी संस्कृत ग्रन्थमाला

२७२

लघुसंग्रहः

'कुन्तला' संस्कृतव्याख्यया, 'ज्योतिः'
हिन्दीव्याख्ययाचोपेतः

सम्पादकोऽनुवादकश्च
डॉ० रामचन्द्रपाठकः
ज्योतिषशास्त्राचार्यः चक्रवर्ति/पी-एच० डी०
सहायक सम्पादकः विश्वपञ्चाङ्गस्य
ज्योतिष विभागः का० हि० वि० वि०
वाराणसी–५

[redacted]

[redacted]

चौखम्भा संस्कृत संस्थान
भारतीय सांस्कृतिक साहित्य के प्रकाशक तथा प्रचारक
पोस्ट बाक्स नं ११३९
जड़ाव भवन, के. ३७/११६, गोपाल मन्दिर लेन
वाराणसी–२२१००१ (भारत)

प्रकाशक । चौखम्भा संस्कृत संस्थान, वाराणसी
मुद्रक : श्रीगोकुल मुद्रणालय, वाराणसी
संस्करण : प्रथम वि० संवत् २०४८
मूल्य : रु० ४०-००

[redacted]

© चौखम्भा संस्कृत संस्थान, वाराणसी
इस ग्रन्थ के परिष्कृत तथा परिवर्धित मूल पाठ
एवं टीका, परिशिष्ट आदि के सर्वाधिकार
प्रकाशक के अधीन हैं।

फोन : ६५८८९

[redacted]

अन्य प्राप्तिस्थान
चौखम्भा विश्वभारती
पोस्ट बाक्स नं० १०८४
चौक (चित्रा सिनेमा के सामने)
वाराणसी-२२१००१ (भारत)
फोन : ५४७६६

THE
KASHI SANSKRIT SERIES
272
*****

LAGHUSANGRHA

Edited with
Kuntla and Jyoti Sanskrit and
Hindi Commentary

By
Dr. RAMCHANDRA PATHAK
Jyotish Shastracharya, Chakravarti|Ph. D.
Assistant Editor Vishwa Panchang
Department of Jyotish
Banaras Hindu University

CHAUKHAMBHA SANSKRIT SANSTHAN
Publishers and Distributors Oriental Cultural Literature
Post Box No. 1139
Jadau Bhawan, K. 37/116, Gopal Mandir Lane
VARANASI–221001 (INDIA)

© *Chaukhambha Sanskrit Sansthan, Varanasi*

Phone : 65889
First Edition : 1991

[redacted]

Also can be had of

CHAUKHAMBHA VISVABHARATI
Post Box No. 1084
Chowk (Opposite Chitra Cinema)
VARANASI–221 001
Phone : 54766

Printers :

SRIGOKUL MUDRANALAYA
Gopal Mandir Lane
Varanasi–221 001

॥ संग्रह भूमि ॥

ज्योतिष शास्त्र विस्तृत एवं व्यापक शास्त्र है। केवल होरा शास्त्र में ही प्रत्येक प्रकरण पर स्वतन्त्र ग्रन्थों का सृजन हुआ है। फलतः विषय की विपुलता तथा विविधता सामान्य अध्येताओं की पकड़ में नहीं आ पाती। इसी दुरुहता के समाधान के लिए संग्रह ग्रन्थों का निर्माण शुरू हुआ। इसी प्रक्रिया में लघुसंग्रह का प्रकाशन हुआ, जो ज्योतिष के जिज्ञासु जनों के द्वारा आज भी आदृत है। शीघ्रबोध, वृहज्ज्योतिसार, फलित संग्रह प्रभृति संग्रह ग्रन्थों का अपना-अपना विशेष महत्व सर्व विदित है। लघुसंग्रह इन्हीं संग्रह-ग्रन्थों के शृङ्खला में अपनी विशेष पहचान बनाए हुए है। इस ग्रन्थ में अनेकशः ऐसे विषय हैं जो अन्य संग्रह ग्रन्थों में संग्रहीत नहीं हैं।

लघुसंग्रह किसके द्वारा संग्रहीत है यह अविदित तथ्य है। मेरे पास लघुसंग्रह की ३ प्राचीन प्रतियाँ हैं पर उनमें से किसी में भी संग्रह कर्त्ता का उल्लेख नहीं प्राप्त होता। यद्यपि इनमें से दो प्रतियाँ जीर्ण रहीं और उनके ऊपरी पृष्ठ नहीं थे तथापि यह इस बात का प्रमाण नहीं है कि संग्रह कर्त्ता का नाम उन्हीं पृष्ठों के साथ रहा हो, क्योंकि लघुसंग्रह का मंगलाचरण इस बात का प्रमाण है——

भवानीं गणनाथं च नत्वा ब्रह्मादि देवताः।
बालानां सुखबोधाय कुर्वेऽहं लघुसंगहम् ॥

इस श्लोक की टीका में किसी भी प्रति में "अहं" का पर्याय संग्रहकर्त्ता का नाम उल्लिखित नहीं है। इसके अतिरिक्त मैंनें अनेक प्राचीन ज्योतिर्विद गुरुओं से लघुसंग्रह के कर्त्ता का नाम जानना चाहा, पर उन लोगों ने भी अनभिज्ञता प्रदर्शित की। यद्यपि मैं ऐसा मानता हूँ कि कहीं न कहीं किसी प्राचीन प्रति में संग्रह कर्त्ता का नाम अवश्य होगा।

लघुसंग्रह में कुछ दुर्बोध विषयों का भी समावेश किया गया है।

स्वयं मुझे भी टीका करते समय ‘अष्टोत्तरी महादशा’ एवं ‘चन्द्रकालानल चक्रम्’ में विषय की दुरूहता और असंगति का भान हुआ। अष्टोत्तरी महादशा में नक्षत्रों की आवृति के संदर्भ में विरोध है। लघुसंग्रह में——

त्रिः चतुस्त्रिचतुश्चैव त्रिचतुस्त्रिचतुः क्रमात्।
रं चं मं बुं श गु राशूनां कृत्तिकादिदशा लिखेत्॥

श्लोक के अनुसार कृतिका नक्षत्र से क्रमशः ३, ४, ३, ४, ३, ४, नक्षत्रों को रखने से ८ ग्रहों की अष्टोत्तरी महादशा होती है। यानी कृत्तिका, रोहिणी, मृगशीर्ष में जन्म होने पर सूर्य की अष्टोत्तरी महादशा होगी। आर्द्रा, पुनर्वसु, पुष्य श्लेषा में जन्म होने पर चन्द्रमा की महादशा होगी। मानसागरी, लघुपाराशरी एवं भारतीय कुण्डली विज्ञान में ठीक इसके विपरीत पद्धति का निरूपण किया गया है, जैसे——

चतुष्कं त्रितयं तस्मात् चतुष्कं त्रितयं पुनः।
यावत् स्वजन्मभं तावद् गणयेद् रौद्रभादितः॥

इस प्रक्रिया से आर्द्रा, पुनर्वसु, पूष्य श्लेषा नक्षत्र में जन्म होने पर सूर्य की अष्टोत्तरी महादशा में जातक का जन्म मानना होगा। स्पष्टतया ‘लघुसंग्रह’ एवं मानसागरी पद्धति में भेद दिखलाई पड़ रहा है। आर्द्रादि ४ नक्षत्रों में जन्म होने पर लघुसंग्रह के अनुसार चन्द्रमा की महादशा होगी, जबकि मानसागरी एवं लघुपाराशरी के अनुसार सूर्य की महादशा। यह एक ऐसी विसंगति रही, जिसका निराकरण अत्यन्त आवश्यक था। इसके निराकरण के बिना ज्योतिषी एक ही कुण्डली का फल लघुसंग्रह के अनुसार चन्द्रवद् बतलाएगा, जबकि मानसागरी के अनुसार उसी कुण्डली का फल सूर्य के अनुरूप कहेगा। इसका निराकरण ‘वृहत्पराशर होरा शास्त्र’ में मुझे प्राप्त हुआ——

‘अष्टोत्तरी द्विधा प्रोक्ता शिवादिकृत्तिकादितः।
लग्ने सग्रहे शैवाद् विग्रहे कृत्तिकादितः॥

इस श्लोक के अनुसार लघुसंग्रह एवं मानसागरी दोनों की मान्यताओं की पुष्टि होती है। यदि लग्न में कोई ग्रह हों तो आर्दा-वाली गणना लागू होगी। यदि लग्न में ग्रह न हों तो वहाँ कृत्तिकादि गणना मान्य होगी।

दूसरी समस्या चन्द्रकालानल चक्र की रही। यहाँ एक ऐसा श्लोक दिया गया है जो अनौचित्य दोष से ग्रस्त है—

रोगे च कुजनक्षत्रादिनऋक्षाच्च युद्धके।
गमवे कृत्तिकार्क्षाद्वै सूर्यर्क्षादन्यतो बुधः॥

अर्थात् चन्द्रकालानल चक्र का विचार रोग में मंगल के नक्षत्र से, युद्ध में दिन नक्षत्र से, यात्रा में कृत्तिका नक्षत्र से और अन्य कार्यों में सूर्य के नक्षत्र से विचार करना चाहिए। यह विधिवाक्य है। परन्तु विचारणीय यह है कि यात्रा में यदि कृत्तिका नक्षत्र से जन्म नक्षत्र का विचार करें तो यह स्थिर होगा। जो जीवन पर्यन्त एक ही स्थिति का द्योतक होगा।

जबकि यात्रा में नक्षत्रपरक फल की स्थिरता नहीं होनी चाहिए। यदि किसी का जन्म कृत्तिका नक्षत्र मे हो तो चन्द्रकालानल चक्र में त्रिशूल पर पड़ेगा। इसका फल मृत्यु कारक होगा। यह फल कृत्तिका नक्षत्र वाले जातक के लिए जीवन पर्यन्त अशुभ रहेगा। उपरोक्त श्लोक के अनुसार रोग, युद्ध, गमन, एवं अन्य कार्यों में फल की स्थिरता लक्षित होती है। ऐसा मालूम पड़ता है कि यह श्लोक प्रक्षिप्त है। क्योंकि चन्द्रकालानल का उत्सग्रन्थ 'नरपतिजयचर्या-स्वरोदयः' है। इस ग्रन्थ में चन्द्रकालानल चक्र के वर्णन में यह श्लोक नहीं मिलता है। वहाँ पर—

चन्द्राष्टके जयो लाभो मध्यशूर्पाष्टके मतः।
राह्वष्टके भवेद्व्याधिर्मृत्युः केतु चतुष्टये॥

वस्तुतः चक्रकालानल चक्र का फल—'नामऋक्षं स्थितं यत्र ज्ञेयं तत्र शुभाशुभम्' के अनुसार कहना चाहिए।

लघुसंग्रह की विषय वस्तु प्रकरणबद्ध होते हुए भी कुछ त्रुटित थी;

जिसे हमने क्रम बद्ध कर दिया है। लघुसंग्रह की सबसे बड़ी विशेषता उसका प्रसाद गुण है। एक बार ग्रन्थ उठाकर तो देखिए आपको लघुसंग्रह की विलक्षणता अवश्य समझ में आयेगी।

लघुसंग्रह की एक प्राचीन प्रति पं. श्री परमानन्द जी तिवारी (वाराणसी) से प्राप्त हुई। इस प्रति से ग्रन्थ का कलेवर निर्माण में पर्याप्त सहयोग मिला। एतदर्थं मैं श्री पं. परमानन्द जी का आभारी हूँ।

संस्कृत विद्या, धर्म, वित्रान संकाय (का. हि. वि. वि.) के माननीय डा० कपिलदेव जी गिरि ने कतिपय फर्मों का प्रूफ वाचन कर सुझाव दिया है। मैं डा० गिरि जी के प्रति हार्दिक धन्यवाद व्यक्त करता हूँ।

डा. जगदीश चतुर्वेदी (प्रकाशनाधिक्षक संस्कृत विद्या धर्म विज्ञान संकाय का. हि. वि. वि,) ने व्याकरण सम्बन्धी परामर्श देकर हमें अनुगृहीत किया है। एतदर्थं डा. चतुर्वेदी को हार्दिक धन्यवाद करता हूँ।

मेरे अनुज डा. कामेश्वर उपाध्याय (सहसम्पादक विश्वपञ्चाङ्ग ज्योतिष विभाग, का. हि. वि. वि.) ने विषयों की जटिलता को सुलझाने में अपना तार्किक मन्तव्य प्रस्तुत किया। उनके उज्ज्वल भविष्य की शुभकामना करता हूँ।

फलित शास्त्र के विज्ञ गणकों को यह ग्रन्थ तोष दे सके इसके लिए मैं 'ज्ञानीनामग्रगण्य श्री संकटमोचन हनुमान् जी' का स्तवन करता हूं। महत्कार्य के सम्पादन में त्रुटियाँ रह ही जाती हैं। विज्ञ जनों से त्रुटि के लिए क्षमा प्रार्थी हूँ, तथा उनके सुझावों की आकांक्षा के साथ इत्यलम्।

वसन्त पञ्चमी
संवत् २०४७
२० जनवरी १९९१ ई.

रामचन्द्र पाठक

विषयानुक्रमणिका

विषयाः पृष्ठाङ्काः

शुभाशुयोगप्रकरणम्

ग्रन्थकारकृतमङ्गलाचरणम् १
नक्षत्रनामानितेषां संख्याश्च ,,
राशिवोधप्रकारः २
योगानां नामानि ३
करणानयनम् ४
करणनामानि ,,
स्थिरकरणनामानि ,,
दग्धतिथयः ५
तिथीनां नन्दादिसंज्ञा ६
कालयोगः ,,
क्रकचयोगः ,,
मृत्युयोगः ७
यमघण्टयोगः ,,
शुभकर्मणि नित्ययोगाः ८
देशभेदेन दुष्टयोगानां परिहारः ९
मृत्युक्रकचादियोगानां शुभत्व-प्रतिपादनम् ,,
दुष्टयोगः ,,
वारवेला १०
कालहोराकथनम् ,,
वर्षमासादिकस्यान्ते त्याज्यसमयः १२
होलाष्टकविचारः ,,
गण्डान्तकालः ,,
पुनः गण्डान्त समयकथनम् १३
गण्डान्ते उत्पन्नकालस्यफलम् ,,
शान्तिविधिः १४
शतौषध्याभावे परिहारकथनम् ,,
सप्तमृत्तिकाः १५
भद्राज्ञानम् ,,
भद्रामुखविचारः १६
भद्रापुच्छविचारः १७
भद्रावासः ,,
सर्वार्थसिद्धियोगः १८
वियोगवर्णनम् १९
सिद्धियोगः ,,
दोषपरिहारः ,,

संक्रान्तिप्रकरणम्

संक्रान्तिपुण्यकालः २१
मकरसंक्रान्ति निर्णयः ,,
सूर्यादिसंक्रमणे वर्ज्यघट्यः २२
संक्रान्तिवशाद् शुभाशुभज्ञानम् ,,
शुक्लद्वितीयायाः चन्द्रनक्षत्रेण प्रत्येकमनुस्यस्य शुभाशुभफलम् २३
ग्रहाणां गोचरफलवर्णनम् ,,
सूर्यादिग्रहाणां दक्षिणा २४
स्नानविधिः ,,
तारावलम् २५

विषयाः	पृष्ठाङ्काः
पातदोषः	२५
दिनमुहूर्त्ताधिपाः	२६
रात्रिमुहूर्त्ताधिपाः	,,
वारवशेन त्याज्यमुहूर्त्ताः	२७
नक्षत्रदेवताः	,,
कृष्यारम्भमुहूर्तः (हलप्रवहणः)	२८
कृष्यारम्भे (हलप्रवहणे) विशेषः	२९
धान्यच्छेदन मुहूर्त्तः	,,
कृषिकर्मणि शुभतिथयः	,,
कृषिकर्मणि निन्द्यतिथयः वाराः समयश्च	,,
पराशरमतानुसारेण हलवीजोप्तिस्थानम्	३०
हलचक्रविचारः	,,
हलचक्रम्	
बीजोप्तिचक्रम्	३१
प्रकारान्तरेण वीजोप्तिचक्रं राहुभाद्दिनभावधि	,,
शुभाशुभदिवसविचारः	३२
वस्त्रधारणनवान्नभक्षणमुहूर्त्तौ	,,
वृक्षारोपणमुहूर्त्तः	३३
नृपतिमिलनमुहूर्त्तः	,,
मद्यारम्भमुहूर्त्तः	३४
पशूनां क्रयविक्रयमुहूर्त्तः	,,
विपणिमुहूर्त्तः	
गजाश्वदोलादिकर्ममुहूर्त्तः	३५
शस्त्रधारणमुहूर्त्तः	,,
वापी-कूपतडागादिजलाशयखनन तथा नृत्यारम्भमुहूर्त्तः	३६
भूमिशयनविचारः	३७
सेवाकर्ममुहूर्त्तः	,,
स्वामीसेवकवर्गविचारः	३८
नौकानिर्माण एवं सञ्चालन-मुहूर्त्तौ	,,
वीराभिचार मुहूर्त्तौ	३९
औषधिग्रहणमुहूर्त्तः	,,
रोगविमुक्त स्नान मुहूर्त्तः	,,
कोषसंग्रहमुहूर्त्तः	४०
आरामजलाशयसुरप्रतिष्ठामुहूर्त्तः	,,
नवीनफलादि भक्षणमुहूर्त्तः	४२
ऋणदानं ऋणग्रहणं च मुहूर्त्तौ	,,
मूषाघट्टनमुहूर्त्तः	४३
रत्नयुक्तमूषानिर्माणमुहूर्त्तः	,,
रजतयुक्तवज्रयुक्ताभूषणनिर्माण-मुहूर्त्तः	४४
स्वर्णादिभूषाधारण मुहूर्त	,,
सूचीकर्ममुहूर्त्तः	,,
वस्त्ररंजनमुहूर्त्तं	४५
श्वेतपीतकर्वुरक्तवस्त्रधारणमुहूर्त्तः	,,
कृष्णवस्त्रधारण मुहूर्त्तः	,,
कौशेयवस्त्रधारण मुहूर्त्तः	४६
आवश्यके वस्त्रधारण मुहूर्त्तं	४६
नववस्त्रविकृतिफलम्	४७
नववस्त्रप्रक्षालनमुहूर्त्तः	,,

विषयाः	पृष्ठाङ्काः
पञ्चकविचारः	४८
खट्वांगचक्रम्	,,
खट्वांगचक्रफलम्	४९
काष्ठगोमयादिसञ्चयमुहूर्त्तः	,,
काष्ठादिसञ्चयमुहूर्त्तचक्रम्	,,
नक्षत्रताराज्ञानम्	५०
अश्विन्यादिनक्षत्राणां स्वरूपकथनम्	,,
राशिघटिका ज्ञानम्	५१
दिवसघटिकाज्ञानम्	५२
दिनप्रमाणानयनम्	,,
वारप्रवृत्तिर्ज्ञानम्	,,
मेषादिराशीनां दण्डादयः	५४

गर्भाधानादिसंस्कारप्रकरणम्

विषयाः	पृष्ठाङ्काः
रजोदर्शनानन्तरस्नान मुहूर्त्तः	५५
गर्भाधान मुहूर्त्तः	
सीमन्तपुंसवन तथा विष्णुपूजनमुहूर्त्तः	५७
सूतिकागार प्रवेश मुहूर्त्तः	५८
जातकर्मनामकरणयोः मुहूर्त्तः	५९
प्रसूतिका स्नान मुहूर्त्तः	,,
जलपूजा मुहूर्त्तः	६०
वालकस्यनिष्क्रमण मुहूर्त्तः	,,
वालकस्यदन्तोत्पत्तिफलम्	६१
दोलारोहण मुहूर्त्तः	,,
अन्नप्राशन मुहूर्त्तः	६२
ताम्बूलभक्षण मुहूर्त्तः	६३

विषयाः	पृष्ठाङ्काः
चूडादिकर्मसुवर्जितकालः	६४
चूडाकर्ममुहूर्त्तः	,,
चूडाकरणेवर्जितकालः	६५
गर्भिणीकृते चौलविचारः	,,
क्षौरकर्मविचारः	,,
नखदन्तविलेखन मुहूर्त्तः	६६
कर्णवेध मुहूर्त्तः	,,
विद्यारम्भ मुहूर्त्तः	६७
धनुर्विद्या मुहूर्त्तः	६८
वैद्यगारुणीविद्यायाश्चमुहूर्त्तौ	,,
फारसी अरवी विद्याध्ययन मुहूर्त्तः	६९
रत्नविद्यामुहूर्त्तः	,,
शिल्पविद्यारम्भमुहूर्त्तः	७०
व्रतवन्ध मुहूर्त्तः	,,
व्रतवन्धेलग्नशुद्धिः	७१
वसिष्ठमतानुसारेण लग्ननिर्णयः	,,
व्रतवन्धेविशेषवर्ज्यः	७२
गलग्रहः	,,
अनध्यायः	७३
व्रतवन्धे वर्जितकालः	,,
युगादितिथयः	,,
मन्वादितिथिवर्णनम्	७४
मन्वादितिथिज्ञापकचक्रम्	,,
गुरुवलम्	,,
गुरुदृष्टिपरिहारः	७५
व्रतवन्धेविशेषः	,,
अग्न्याधानमुहूर्त्तः	७६
वह्निवासः	७७
होमाहुति शुद्धिः	,,

विषयाः	पृष्ठाङ्काः
राज्याभिषेक मुहूर्त्तः	७८
दीक्षाकालः	७९
दीक्षा मुहूर्त्तः	,,
मन्त्राभिषेक मुहूर्त्तः	८०
सर्वदीक्षाग्रहण मुहूर्त्तः	,,
मोक्षदीक्षामुहूर्त्तः	८१
दीक्षा ग्रहणे विशेषकालः	,,
मन्त्रग्रहणचक्र ज्ञानम्	,,
यन्त्रमन्त्रव्रतादि साधनमुहूर्त्त	८२
वीरवैतालसाधन मुहूर्त्तः	,,
विवाहसमयशुद्धिः	,,
गुप्तसम्वत्सरः	८३
शुभकर्मणि गुरुविचारः	,,
सिंहस्थगुरोः परिहारः	८४
मकरस्थगुरुपरिहारः	,,
गुरुशुक्रयोर्वृद्धत्व वालत्वं च	८५
जन्ममासादिषु वर्जितकार्याणि	,,
ज्येष्ठमासेविशेषनिन्द्यः	,,
विवाहेविशेषविचारणीयः	८६
एकस्मिन् दिने वर्जित शुभकर्माणि	,,
विवाहे आगत विघ्नानां परहारः	८७
कार्यवशग्रहशुद्धिः	,,
मङ्गलीयोगः	,,
कन्यायाः विवाहफलम्	८८
विवाह नक्षत्राणि	,,
वरकन्ययोः प्रीति	८९
वर्ण विचारः	,,
योनिविचारः	९०
योनिवोधकचक्रम्	९०
राशिस्वामीविचारः	९१
ग्रहमैत्री	९२
ग्रहमैत्रीवोधकचक्रम्	,,
गणनाविचारः	,,
वर्गविचारः	९३
राशिकूटविचारः	,,
नाड़ी चक्रम्	९४
नाडी चक्र	,,
नक्षत्र राश्यैकविचारः	,,
पादवेधः	,,
विवाहदिनस्य संशोवने दशयोगविचारः	९५
दशयोगचक्र	९६
दशयोगफलम्	,,
लताविचार	,,
पातविचारः	९७
युतिदोषः	९९
पञ्चशलाकाविचारः (वेधविचारः)	,,
पञ्चशलाकाचक्रम्	१००
सप्तशलाकाचक्रविचारः	,,
सप्तशलाकाचक्रम्	१०१
एकार्गल (खर्जुर) विचारः	,,
खर्जुरचक्र	१०२
वाणपञ्चकविचारः	१०३
सूर्यगतांशसे वाणपञ्चकचक्र	,,
वाणदोषपरिहारः	,,
क्रान्तिसाम्यदोषः	१०४

विषयाः पृष्ठाङ्काः
पट्टाकार चक्रविचारः तत्फलञ्च १०४
पट्टाकारचक्रम् १०६
कर्त्तरीयोगः ,,
एकार्गलादि दोषानां परिहारः १०७
देशभेदेन परिहारः ,,
अष्टम लग्नपरिहारः (लग्नशुद्धिः) ,,
अन्यच्च १०९
अनेकानेक दोष परिहारः ,,
गोधूलिकालः ११०
गोधूलिकालस्यश्रेष्ठत्वम् ,,
गोधूल्यां वर्ज्यकालः १११
पग्वन्धादिलग्नः ,,
तैलादिलेपनमुहूर्त्तः ११२
विवाहान्तरं मण्डपोद्वासन मुहूर्त्तः ,,
वधूप्रवेशः ११३
वधूप्रवेशनक्षत्राणि ,,
द्विरागमन मुहूर्त्तः ११४
पुन्नार्योः प्रथमसङ्गममुहूर्त्तः ,,
अन्यच्च ,,
सम्मुखदक्षिणशुक्रविचारः ११५
शुक्रदोषपरिहारः ,,
अन्यच्च ११६
द्वयंगे राहुविचारः ,,
राहुदिशाचक्रम् ११७
राहुर्फलम् ,,

यात्राप्रकरणम्

यात्रामुहूर्त्तः ११८
विषयाः पृष्ठाङ्काः
शुक्रान्धः विचारः ११८
सर्वाङ्क विचारः ,,
द्वादशभावानां नामानि ११९
यात्रालग्ने शुभाशुभफलम् १२०
विजययोगः ,,
अन्यच्च ,,
कल्याणयोगः १२१
अन्यच्च ,,
योगाधियोगः १२२
योगान्तरम् ,,
योगविशेषः १२३
अन्ययोगः ,,
यात्रायां राहुविचारः ,,
नारदवासचक्रम् १२४
आर्द्रादियुद्धनाडीचक्रम् ,,
शत्रुञ्जयोगः १२५
यात्रायां ग्राह्याग्राह्यतिथयः १२६
पिनाकयोगः १२७
यात्रायां उत्तम, मध्यम एवं निकृष्ट नक्षत्राणि ,,
दिक्विदिक्शूलं च १२८
योगिनीवासः १२९
योगिनीवासचक्र ,,
योगिनीफलम् ,,
कालवासः ,,
कालवांसचक्र १३०
कालवासफलम् ,,
चन्द्रवासः ,,

विषयाः	पृष्ठाङ्काः
चन्द्रयासफलम्	१३१
विजयादशमी	”
शकुनादिविचारः	१३२
यात्रायां शुभशकुनविचारः	”
यात्रायां अशुभशकुनविचारः	१३३
अकालवृष्टि	१३४
यात्रायां त्याज्य वस्तुनि	”
यात्राविधिः	१३५
प्रस्थानविधिः	”
प्रस्थानदिनानि	१३६
प्रस्थानदिनसंख्याचक्र	”
चन्द्रकालानलचक्रम्	१३७
सूर्यकालानलचक्रम्	१३८
परिघदण्डज्ञानम्	१३९
परिघदण्डचक्र	१४०
पञ्चस्वराचक्रज्ञानम्	”
पञ्चस्वराचक्र	१४१
दुर्गचक्रम्	१४२
कोटपालविधि	”
दुर्गचक्रफलम्	१४३
अन्यच्च	”
अन्यच्च	”
क्षेत्रपालचक्रविचारः	१४५
क्षेत्रपालचक्र	”
सर्पाकारचक्र	१४६
शनिचक्रविचारः	”
नराकारशनिचक्र	१४७
अन्यमतम्	”

विषयाः	पृष्ठाङ्काः

वास्तुप्रकरणम्

विषयाः	पृष्ठाङ्काः
शुभाशुभग्रामविचार	१४८
ग्रामवासेनिषिद्धस्थानानि	१४०
राशितः निषिद्धग्रामवासदिक्	१५०
अवर्गादिग्रामवासचक्रम्	१५०
पिण्डसाधनं दैर्घ्यविस्तृतिज्ञानञ्च	१५०
क्षेत्रफल साधनम्	१५१
अष्टौ आयनामानि	”
अंशानयनविधिः	१५३
शालाध्रुवाङ्काः	१५४
ध्रुवादिगृहनामानि	”
गृहनिर्माणे नक्षत्राणि	१५५
सौरमतानुसारेण दिक्द्वारविचारः	१५६
चन्द्रस्थितिवशात् गृहद्वारः	१५६
गृहारम्भेवास्तुचक्रम्	१५७
कूपचक्रम्	१५८
गृहारम्भे राहुमुखविचारः	१५९
प्लवविचारः	१६०
द्वारनिर्णयः	”
गृहप्रवेशमुहूर्त्तः	१६१
जीर्णगृहप्रवेशमुहूर्त्तः	१६१
गृहप्रवेशनक्षत्राणि	१६२
गृहप्रवेशेगुरुवचनम्	”
गृहप्रवेशेकलशवास्तुचक्रम्	१६३
पाकगृहमुहूर्त्तः	१६५
मार्जनीमुहूर्त्तः	१६४
चुल्हीचक्रम्	१६४
काष्ठस्थापनचक्रविचारः	१६५

अरिष्टप्रकरणम्

विषयाः	पृष्ठाङ्काः
अरिष्टविचारः	१६६
अरिष्टभङ्गयोगमाह	१६७
अनफा, सुनफा, दुर्धरा, केमद्रुमयोगाः	१६९
अनफादियोगानां फलम्	१६९
पुत्रोत्पत्तौ डिम्भाख्यचक्रफलम्	१७०
पुत्रजन्म भे डिम्भाख्यचक्रम्	१७०
कन्योत्पत्तौ डिम्भाख्यचक्रम्	१७१
कन्याजन्म भे डिम्भाख्यचक्र	१७१
अष्टोत्तरीदशाचक्र	१७२
अष्टोत्तरी अन्तर्दशासाधनम्	१७४
अष्टोत्तरीदशान्तर्दशावोधचक्र	१७५
अष्टोत्तरी उपदशा (प्रयन्तर) साधनम्	१७६
विंशोत्तरी दशाचक्रम्	१८५
उपदशा (प्रत्यन्तर) साधनम्	१८७
योगिनी दशाज्ञानम्	१९७
अथमङ्गलादिदशाक्रमः	,,
अथदशास्वामीज्ञानम्	,,
योगिनी अन्तर्दशा	१९८
मातृकष्टविचारः	१९९

प्रश्नप्रकरम्

विषयाः	पृष्ठाङ्काः
लाभप्रश्नविचारः	२०९
प्रवासचिन्ताविचारः	२०२
नक्षत्रमाणामन्धत्वादिज्ञानम्	२०४

व्रतनिर्णयप्रकरणम्

विषयाः	पृष्ठाङ्काः
गणगौरीव्रतनिर्णयः	२०६
वटसावित्रीव्रतनिर्णयः	,,
नागपञ्चमीव्रतनिर्णयः	,,
रक्षावन्धन एवं श्रावणी निर्णयश्च	२०७
जन्माष्टमीव्रतनिर्णयः	,,
हरितालिकाव्रतनिर्णयः	,,
ऋषिपञ्चमीव्रतनिर्णयः	२०८
महालक्ष्मीव्रत्तविर्णयः	२०९
विजयादशमीव्रतनिर्णयः	,,
करवाचौथनिर्णयः	,,
दीपमालिकाव्रत निर्णयः	२१०
यमद्वितीयानिर्णयः	,,
संकष्टचतुर्थीव्रतनिर्णयः	,,
होलिकादाहनिर्णयः	२११
एकादशीव्रतनिर्णयः	,,
सामान्यतिथिनिर्णयः	२१२
सामान्यतिथिनिर्णयचक्र	२१५

* * *

॥ श्रीः ॥

लघुसङ्ग्रहः

'कुन्तला'-'ज्योति'-टीकाद्वयोपेतः

ग्रन्थकारकृतमंगलाचरणम्

भवानीं गणनाथं च नत्वा ब्रह्मादि-देवताः ।
बालानां सुखबोधाय कुर्वेऽहं लघुसंग्रहम् ॥ १ ॥

कुन्तला—भवानीं = पार्वतीं, ब्रह्मादि-देवताः = ब्रह्माविष्णुमहेशादि-देवाः, गणनाथं = गणेशं च, नत्वा = नमस्कृत्य, बालानां = व्याकरणशास्त्र-विशारदानां ज्योतिषशास्त्रे सुकुमारमतीनां छात्राणाम्; सुखबोधाय = सुख-पूर्वकं ज्योतिषशास्त्रबोधाय, अहं लघुसंग्रहम् = लघुसंग्रहनामकं ग्रन्थम्, कुर्वे = रचयामि ।

ज्योति—भगवती पार्वती, ब्रह्माविष्णुमहेशादि समस्त देवता, तथा विघ्नविनाशक-गणेशजी को नमस्कार कर मैं लघुसंग्रह नामक ग्रन्थ को बनाता हूँ ।

नक्षत्रनामानि तेषां संख्याश्च—

१ अश्विनी, २ भरणी, ३ कृत्तिका; ४ रोहिणी, ५ मृगशिरा, ६ आर्द्रा, ७ पुनर्वसु, ८ पुष्यः, ९ आश्लेषा, १० मघा, ११ पूर्वाफाल्गुनी, १२ उत्तराफाल्गुनी, १३ हस्तः, १४ चित्रा, १५ स्वाती, १६ विशाखा, १७ अनुराधा; १८ ज्येष्ठा, १९ मूल, २० पूर्वाषाढ़ा, २१ उत्तराषाढ़ा, २२ अभिजित्; २३ श्रवण, २४ धनिष्ठा, २५ शतभिषा, २६ पूर्वाभाद्रपदा, २७ उत्तराभाद्रपदा, २८ रेवती इति अष्टाविंशतिनक्षत्राणि ।

राशिवोधप्रकारः—

सप्तविंशतिभानां च नवभिर्नवभिः पदैः ।
अश्विनीप्रमुखानां च मेषाद्या-राशयः स्मृताः ॥ २ ॥

कुन्तला—सप्तविंशतिभानां = सप्तविंशतिनक्षत्राणाम् । नवभिर्नवभिः पदैः = नव-नवचरणैः, अश्विनीभरणीकृत्तिकादि सप्तविंशतिप्रमुखानां नक्षत्राणां च, मेषादिराशयः (मेष वृष-मिथुनादयः), स्मृताः = कथिताः सन्ति । यथा—

अश्विनी भरणी कृत्तिकापादमेकं मेषः १
कृत्तिकापादत्रयं रोहिणी मृगशिरोर्द्धं वृषः २
मृगशिरोर्द्धमार्द्रापुनर्वसुपादत्रयं मिथुनः ३
पुनर्वसुपादमेकं पुष्यश्लेषान्तं कर्कः ४
मघा च पूर्वाफाल्गुनी उत्तरापादमेकं सिंहः ५
उत्तरापादत्रयं हस्त-चित्रार्द्धं कन्या ६
चित्रार्द्धं स्वाती-विशाखापादत्रयं तुला ७
विशाखापादमेकमनुराधाज्येष्ठान्तं वृश्चिकः ८
मूलं च पूर्वाषाढ़ा-उत्तराषाढापादमेकं धनुः ९
उत्तराषाढापादत्रयं श्रवणधनिष्ठार्द्धं मकरः १०
धनिष्ठार्द्धं शतभिषापूर्वाभाद्रपादत्रयं कुम्भः ११
पूर्वाभाद्रपादमेकमुत्तराभाद्रपदरेवत्यन्तं मीनः १२

ज्योति—अश्विनी आदि सत्ताइस नक्षत्रों के नौ-नौ चरण के मेषादि वारह राशियां बनती हैं ।

इसमें अभिजित् की गणना नहीं है । जैसे—

अश्विनी, भरणी और कृतिका के एक चरण तक मेषराशि ।

कृतिका के वाकी तीन चरण और समस्त (४ चरण) रोहिणी तथा मृगशिरा के दो चरण तक वृष राशि । मृगशिरा के दो चरण और सम्पूर्ण (४ चरण) आर्द्रा तथा पुनर्वसु के तीन चरण तक मिथुन राशि । पुनर्वसु का एक चरण और पुण्य तथा आश्लेषा पर्यन्त कर्क राशि ।

सम्पूर्ण (४ चरण) मघा और पूर्वा फाल्गुनी नक्षत्र तथा उत्तरा फाल्गुनी के एक चरण की सिंह राशि। उत्तरा फाल्गुनी के बाकी तीन चरण, सम्पूर्ण हस्त और चित्रा के दो चरण तक कन्या राशि।

चित्रा के अन्तिम दो चरण, स्वाती तथा विशाखा के तीन चरण तक तुला राशि।

विशाखा का बाकी एक चरण और पूरे अनुराधा तथा ज्येष्ठा तक वृश्चिक राशि।

मूल और पूर्वाषाढ़ तथा उत्तराषाढ़ का एक चरण तक धनु राशि।

उत्तराषाढ़ के बाकी तीन चरण पूरा श्रवण तथा धनिष्ठा के दो चरण तक मकर राशि।

धनिष्ठा के दो चरण और पूरे शतभिषा तथा पूर्वाभाद्रपद के तीन चरण तक कुम्भ राशि।

पूर्वभाद्रपद का बाकी एक चरण और उत्तराभाद्रपद एवं रेवती तक मीन राशि।

इस प्रकार बारह राशियाँ होती हैं।

योगानां नामानि—

विष्कुम्भः प्रीतिरायुष्मान् सौभाग्यः शोभनस्तथा।
अतिगण्डः सुकर्मा च धृतिः शूलस्तथैव च॥ ३॥
गण्डोवृद्धिर्ध्रुवश्चैव व्याघातो हर्षणस्तथा।
वज्रसिद्धिर्व्यतीपातो वरीयान् परिघः शिवः॥ ४॥
सिद्धः साध्यः शुभः शुक्लो ब्रह्म ऐन्द्रोऽथ वैधृतिः।
सप्तविंशतिराख्याता नाम तुल्यफलप्रदा॥ ५॥

कुन्तला—पूर्वैः सप्तविंशतियोगाः पठितास्सन्ति। एते सर्वे योगाः नामसदृशफलदाः भवन्ति। एतेषां योगानां नामानि दीयन्ते—

ज्योति—विष्कुम्भ १, प्रीति २, आयुष्मान् ३, सौभाग्य ४, शोभन ५, अतिगण्ड ६, सुकर्मा ७, धृति ८, शूल ९, गण्ड १०, वृद्धि ११, ध्रुव १२, व्याघात १३, हर्षण १४, वज्र १५, सिद्धि १६, व्यतीपात १७, वरीयान १८,

परिघ १९, शिव, २०, सिद्ध २१, साध्य २२, शुभ २३, शुक्ल २४, ब्रह्म २५, ऐन्द्र २६, वैधृति २७, ये सत्ताइस योग हैं, ये अपने नाम के सदृश फल देते हैं ।

करणानयनम्—

तिथिं तु द्विगुणीकृत्य हीनमेकेन कारयेत् ।
सप्तभिस्तु हरेद्भागं शेषं करणमुच्यते ॥ ६ ॥

कुन्तला—तिथिं द्वाभ्यां संगुण्य एकेन हीनं कारयेत्, सप्तभिर्भाजिते सति यच्छेषमुपलभ्येत तत्करणम् उच्यते = कथ्यते ।

ज्योति—वर्तमान तिथि को द्विगुणित करके उसमें से एक कम कर दें और उसमें सात का भाग देकर शेष जो बचे उस तिथि को वही करण अर्थात् ववादि क्रम से गणना कर जानना चाहिए ।

करणनामानि—

ववश्च वालवश्चैव कौलवस्तैतिलस्तथा ।
गरश्च वणिजो विष्टिः सप्तै ते करणानि च ॥ ७ ॥

कुन्तला—वववालवकौलवतैतिलगरवणिजविष्टिप्रभृतीनि चरकरणानि भवन्ति ।

ज्योति—वव, वालव, कौलव, तैतिल, गर, वणिज और विष्टि—ये सात करण होते हैं। जिन्हें चर करण कहते हैं।

स्थिरकरणनामानि—

कृष्णपक्षे चतुर्दश्यां शकुनिः पश्चिमे दले ।
चतुष्पदश्च नागश्च अमावस्यादलद्वये ॥ ८ ॥
शुक्लप्रतिपदायां च किंस्तुघ्नः प्रथमे दले ।
स्थिरान्येतानि चत्वारि करणानि जगुर्बुधाः ॥ ९ ॥
शुक्लप्रतिपदान्ते च ववाख्यः करणो भवेत् ।
पकादशश्च विज्ञेयाश्चरस्थिरविभागतः ॥ १० ॥

कुन्तला—कृष्णपक्षस्य चतुर्दश्यां तिथौ, पश्चिमे दले = उत्तरार्द्धे शकुनिः करणो भवतीति । एवं, अमावस्यादलद्वये = अमावस्यातिथेः पूर्वार्द्धे च क्रमेण

चतुष्पदः नागश्च भवतः। शुक्लप्रतिपदि, प्रथमेदले=पूर्वार्द्धे किंस्तुघ्नश्च भवति। एतानि चत्वारि स्थिरकरणानि, जगुर्बुधाः = बुधैः कथितानि सन्ति। शुक्लप्रतिपदान्ते=शुक्लपक्षस्य प्रतिपद्तिथौ उत्तरार्द्धेन प्रारभ्य ववख्य=वव, वालव, कौलेव, तैतीलादि स्थिरकरणानि भवन्ति। एवं चरस्थिरविभागतः एकादश (४ + ७ करणानि) विज्ञेयानि।

ज्योति—कृष्णपक्ष के चतुर्दशी के उत्तरार्द्ध (दोपहर के बाद) में शकुनिकरण और अमावस्या के पूर्वार्द्ध (दोपहर के पहले) में चतुष्पद करण और उत्तरार्द्ध में नाग करण रहता है। शुक्लपक्ष की प्रतिपदा के पूर्वार्द्ध में किंस्तुघ्न करण रहता है और उत्तरार्द्ध से वव, वालव कौलवादि स्थिर करण प्रारम्भ हो जाते हैं। अर्थात् शुक्लपक्ष की द्वितीया को वालव और कौलव, तृतीया को तैतील और नाग, चतुर्थी को वणिज और विष्टि, पञ्चमी से पुनः वव, वालव, करण प्रतिदिन दो-दो करणों का आवर्तन होता रहता है। इस प्रकार चर स्थिर भेद से ११ करण विद्वानों ने कहा है।

दग्धतिथयः—

द्वितीया धनुमीनेषु चतुर्थी वृषकुम्भयोः।
मेषकर्कटयोः षष्ठी कन्यामिथुनकेऽष्टमी॥ ११॥

दशमी वृश्चिके सिंहे द्वादशी मकरे तुले।
एताश्च तिथयो दग्धा शुभे कर्मणि वर्जिता॥ १२॥

कुन्तला—धनुमीनराशौ स्थिते सूर्ये द्वितीया वृषकुम्भे स्थिते सूर्ये चतुर्थी, मेषूककंटे षष्ठी; कन्यामिथुने चाष्ठमी, वृश्चिके सिंहे दशमी; मकरे तुलायाञ्च द्वादशी, एताश्च तिथयः दग्धसंज्ञकाः सन्ति। शुभकर्मणि उक्ततिथयः त्याज्याः सन्ति।

ज्योति—धनु और मीन राशि के सूर्य होने पर द्वितीया, वृष तथा कुम्भ के सूर्य में चतुर्थी, मेष और कर्क के सूर्य में षष्ठी, कन्या तथा मिथुन के सूर्य में दशमी, मकर तथा तुला के सूर्य में द्वादशी-ये तिथियां दग्ध संज्ञक कही गई हैं। ये सभी तिथियां शुभ कार्य में त्याज्य हैं।

तिथिनां नन्दादिसंज्ञा—

नन्दा भद्रा जया रिक्ता पूर्णाश्च तिथयः क्रमात् ।
वारत्रयं समावर्त्य तिथयः प्रतिपन्मुखा ॥ १३ ॥

कुन्तला—प्रतिपदारभ्य, वारत्रयं समावर्त्य = त्रि आवृतिक्रमेण नन्दा, भद्रा, जया, रिक्ता, पूर्णाश्च तिथयः भवन्ति ।

ज्योति—प्रतिपदा से आरम्भ करके तीन आवृति क्रमशः नन्दा, भद्रा जया, रिक्ता और पूर्णा संज्ञक तिथियाँ कही गई हैं ।

नन्दा	भद्रा	जया	रिक्ता	पूर्णा
१	२	३	४	५
६	७	८	९	१०
११	१२	१३	१४	१५, ३०

कालयोगः—

नन्दाङ्गारे सिते भद्रा सौम्ये च विजया तथा ।
गुरौ रिक्ता शनौ पूर्णा कालयोगाः प्रकीर्तिताः ॥ १४ ॥

कुन्तला—अङ्गारे = भौमवासरे नन्दा, सिते = शुक्रवारे भद्रा, सौम्ये = बुधवारे जया, तथा गुरौ = गुरुवासरे रिक्ता, शनौ = शनिवासरे च पूर्णा तिथयः कालयोगाः प्रकीर्तिताः = कथिताः ।

ज्योति—मंगलवार को नन्दा, शुक्र को भद्रा, बुध को जया, वृहस्पति को रिक्ता और शनिश्चर को पूर्णा तिथियाँ कालयोग संज्ञक कही गई हैं ।

क्रकचयोगः—

द्वादशी रविणा युक्ता सोमे चैकादशी तथा ।
दशमी भौमवारेण नवमी बुधसंयुता ॥ १५ ॥
अष्टमी गुरुणा युक्ता सप्तमी भृगुसंयुता ।
षष्ठी शनैश्चरेणापि योगाश्चैते च निन्दिताः ॥ १६ ॥

कुन्तला—रविणायुक्ता द्वादशी = रविदिने द्वादशी तिथिः, सोमवासरे एकादशी तिथिश्च तथैव भौमे दशमी, बुधे नवमी, गुरौ अष्टमी, भृगुः = शुक्रवासरे सप्तमी, शनिवासरे च षष्ठी तिथिः भवेत्तदा क्रकचनामाख्य योगाः भवन्ति । एते योगाः निन्दिताः कथिताः सन्ति ।

ज्योति—रविवार के दिन द्वादशी, सोमवार के दिन एकादशी, मंगल के दिन दशमी, बुध के दिन नवमी, बृहस्पति के दिन अष्टमी, शुक्र के दिन सप्तमी तथा शनिश्चर के दिन षष्ठी तिथि हो तो क्रकच नामक योग होता है । ये योग शुभ कर्म में निन्दित कहे गए हैं ।

मृत्युयोगः—

त्यजरविमनुराधे वैश्वदेवं च सोमे
शतभिषमपि भौमे चन्द्रपुत्रेऽश्विनी च ।
शशिधरमपि जीवे सार्प्यदेवं च शुक्रे
रविसुतमपि हस्ते मृत्युयोगा भवन्ति ॥ १७ ॥

कुन्तला—रविवासरे अनुराधा, सोमे वैश्वदेवं = उत्तराषाढा, भौमे शतभिषः, चन्द्रपुत्रे = बुधे अश्विनी, जीवे = गुरौ शशिधरम् = मृगशीर्षम्, शुक्रे, सार्प्यदेवं = आश्लेषा, रविसुतमपि = शनैश्चरे हस्ते सति मृत्युयोगाः भवन्ति । एते योगाः शुभकर्मणि त्याज्याः ।

ज्योति—रविवार को अनुराधा, सोमवार को उत्तराषाढ़ा, मंगलवार को शतभिषा; बुधवार को अश्विनी, बृहस्पतिवार को मृगशिरा, शुक्रवार को आश्लेषा तथा शनिवार को हस्त-नक्षत्र होने से मृत्यु योग होता है । ये योग शुभ कार्य में त्याज्य हैं ।

यमघण्टयोगः—

मघार्कवारे शशिनि द्विदव-
मार्द्रा कुजे सोमसुते च मूलम् ।
गुरौ धनिष्ठा भृगुरोहिणी च
शनौ च हस्तो यमघण्टयोगः ॥ १८ ॥

कुन्तला—अर्कवारे = रविवारे मघा, शशनि = सोमवासरे द्विदवम् =

विशाखा, कुजे = भौमे आर्द्रा, सोमसुते = बुधे मूलम्, गुरौ धनिष्ठा, भृगुः = शुक्रवासरे रोहिणी, शनौ च हस्तः यमघण्टाख्ययोगो भवतीति बोध्यम् ।

ज्योति—रविवार को मघा, सोमवार को विशाखा, मंगलवार को आर्द्रा, बुधवार को मूल, बृहस्पति को धनिष्ठा, शुक्र को रोहिणी और शनिवार को हस्त नक्षत्र होने से यमघण्ट योग होता है।

शुभकर्मणि निन्द्ययोगाः—

वर्जयेत्सर्वकार्येषु हस्तार्कं पञ्चमीतिथौ।
भौमाश्विनी च सप्तम्यां षष्ठ्यां चन्द्रैन्दवं तथा ॥ १९ ॥

बुधानुराधमष्टम्यां दशम्यां भृगुरेवती।
नवम्यां गुरुपुष्यं चैकादश्यां शनिरोहिणी ॥ २० ॥

गृहप्रवेशे यात्रायां विवाहे च यथाक्रमम्।
भौमाश्विनी शनौ ब्राह्मं गुरौ पुष्यं विवर्जयेत् ॥ २१ ॥

कुन्तला—हस्तार्कं=रवौ हस्तनक्षत्रम् एवं पञ्चमीतिथिः, भौमवारे अश्विनी नक्षत्रं सप्तमीतिथिः; चन्द्रवारे मृगशीर्षनक्षत्रं तथा षष्ठी तिथिः, बुधवारे अनुराधानक्षत्रं अष्टमी तिथि, शुक्रवारे रेवतीनक्षत्रं दशमी तिथिः, गुरुवारे पुष्यनक्षत्रं नवमी तिथिः, शनिवारे रोहिणी नक्षत्रं एकादशीतिथिः, सर्वकार्येषु वर्जयेत् = त्याज्यमिति। एवञ्च गृहप्रवेशे भौमवारः अश्विनीनक्षत्रम्, यात्रायां शनिवारः रोहिणी नक्षत्रम्, तथा विवाहे गुरुवारः पुष्यनक्षत्रमपि त्याज्यमस्ति।

ज्योति—रविवार को हस्तनक्षत्र और पञ्चमी तिथि, मंगलवार को अश्विनी नक्षत्र और सप्तमी तिथि, सोमवार को मृगशिरा नक्षत्र और षष्ठी तिथि, बुधवार को अनुराधा नक्षत्र और सप्तमी तिथि, शुक्रवार को रेवती नक्षत्र और दशमी तिथि; गुरुवार को पुष्यनक्षत्र और नवमी तिथि, शनिवार को रोहिणी नक्षत्र और एकादशी तिथिसभी शुभ कार्यों में त्याज्य है। इसी प्रकार गृहप्रवेश में मंगलवार को अश्विनी नक्षत्र, यात्रा में शनिवार को रोहिणी नक्षत्र, तथा विवाह में गुरुवार को पुष्य नक्षत्र भी निन्दित माना गया है।

देशभेदेन दुष्टयोगानां परिहारः—

कुयोगास्तिथिवारोत्थास्तिथिभोत्था भवारजाः ।
हूणबङ्गखशेष्वेव वर्ज्यास्त्रितयजास्तथा ॥ २२ ॥

कुन्तला—तिथिवाराभ्यामुत्पन्नकुयोगः तिथिनक्षत्राभ्यामुत्पन्नकुयोगः; नक्षत्रवाराभ्यामुत्पन्नकुयोगः, हूण, बङ्ग एवं खशदेशेषु वर्ज्याः सन्ति ।

ज्योति—तिथि वार से उत्पन्न कुयोग, तिथि नक्षत्र से उत्पन्न कुयोगः, तथा नक्षत्र और वार से उत्पन्न कुयोग हूण, बङ्ग तथा खश देशों में वर्जित हैं ।

मृत्युक्रकचादियोगानां शुभत्वप्रतिपादनम् —

मृत्युक्रकचदग्धादीनिन्दौ शस्ते शुभाञ्जगुः ।
केचिद्यामोत्तरं चान्ये यात्रायामेव निन्दितम् ॥ २३ ॥

कुन्तला—केचन् आचार्याः मृत्यु-क्रकच-दग्धादियोगानां शुभं कथयन्ति, केचन् अन्ये आचार्याः यात्रायामेव निन्द्यं कथयन्ति अन्यत्र न ।

ज्योति—कुछ आचार्य चन्द्रमा के शुभ होने से मृत्यु, क्रकच तथा दग्ध योगों को शुभ मानते हैं । अन्य आचार्य केवल यात्रा में निन्दित मानते हैं । अन्यत्र नहीं ।

दुष्टयोगः—

वैधृतिं च व्यतीपातं परिघार्द्धं तथैव च ।
व्याघाते नव नाड्यस्तु वर्ज्याः सर्वेषु कर्मसु ॥ २४ ॥
विष्कुम्भे घटिकास्तिस्रः शूले पञ्च प्रकीर्तिताः ।
वज्रे तु नव नाड्यश्च षट् च गण्डातिगण्डयोः ॥ २५ ॥

कुन्तला—वैधृतिः, व्यतिपातः तथा परिघयोगानां, अर्द्धं = पूर्वार्द्धं च सर्वेषु शुभकर्मसु त्याज्यमिति । तथैव व्याघातयोगे नव, नाड्यः = घट्यः, विष्कुम्भे = विष्कुम्भयोगेघटिकात्रयः, शूलयोगे पञ्च घटिकाः, वज्रयोगे नवघटिकाः तथा च गण्डातिगण्डयोः षट् घटिका च सर्वेषु शुभकार्येषु त्याज्यं भवति ।

ज्योति—वैधृति, व्यतीपात तथा परिघ योगों का पूर्वार्द्ध, व्याघात योग की नव घटी, शूल योग की पाँच घटी, वज्र योग की नव घटी, और गण्ड तथा अतिगण्ड योग की छः-छः घटी सभी शुभ कार्यों में त्याज्य हैं।

वारवेला—

रवौ वर्ज्यं चतुः पंच सोमे सप्तद्वयं तथा।
कुजे षष्ठद्वयं चैव बुधे पञ्चतृतीयकम् ॥ २६ ॥
गुरौ सप्ताष्टकं चैव शुक्रे वेद तृतीयकम्।
शनौ आद्यन्तषष्ठं च वारवेलाति निन्दिता ॥ २७ ॥

कुन्तला—रवौ = रविवासरे, चतुः पंच = चतुर्थं एव पञ्चमप्रहरः, सोमे = सोमवासरे, सप्तमद्वितीयप्रहारः, कुजे = मंगलवासरे षष्ठं द्वितीयं प्रहरश्च, एवं बुधे पञ्चमं, तृतीयं, गुरौ सप्तमं अष्टमं, शुक्रे तृतीयं चतुर्थं शनौ, आद्यन्तषष्टं = प्रथमं, अन्तिमं प्रहरं अर्थात् अष्टमं एवं षष्ठं प्रहरमपि वारवेला इति कथ्यते; यः सर्वेषु शुभकार्येषु निन्दितो भवतीति ज्ञेयम्।

ज्योति—रविवार को चतुर्थ और पञ्चम प्रहर, सोमवार को द्वितीय और सप्तम प्रहर, मंगलवार को षष्ठ और द्वितीय, बुधवार को पंचम और तृतीय, गुरुवार को सप्तम और अष्टम, शुक्रवार को तृतीय और चतुर्थ प्रहर तथा शनिवार को आदि और अन्त प्रहर तथा छठा प्रहर भी वारवेला कहा जाता है। जो शुभ कर्मों में निन्दित माना जाता है।

कालहोराकथनम्—

वारादितो गतघटी द्विघ्ना पञ्चहृताप्तकम्।
लब्धशेषं दिनाधीशादर्कशुक्रश्चन्द्रमाः ॥ २८ ॥
सौरिजीवकुजश्चैव कालहोराधिपाः स्मृताः।
कालहोरासु तत्कार्यं यत्प्रोक्तं वासरे स्वके ॥ २९ ॥

कुन्तला—वारादितः = वारप्रभृतिकालतः, गतघटीद्विघ्ना = व्यतीतघट्यः द्विगुणीकृत्य, पञ्चहृताप्तकम् = पञ्चभिः भक्तम्। भक्तेः सति यच्छेषं दिनपतेः

क्रमेण कालहोरेशः स्यात् । एवं रव्यादिवारक्रमेण सूर्यः, शुक्रः, बुधः, चन्द्र-शनिः, गुरुः तथा भौमस्य च प्रथम कालहोरेशाः भवन्ति ।

यद्यपि पञ्चभिः भक्ते सति ४ तः अधिकं शेषं न भवितुमर्हति । अतः अस्य-श्लोकानुसारेण चतुः अथवा पञ्चैव होरेशाः भवितुं शक्नुवन्वि परन्तु नोचितम् । यतो हि वाराः सप्तैव भवन्ति । मुहूर्तचिन्तामणौ—

"वारादेर्घटिका द्विघ्ना स्वाक्षहृच्छेषवर्जिताः ।
सैकास्तथा नगैः कालहोरेशा दिनपात् क्रमात् ॥"

अर्थात् इष्टं द्विगुणीकृत्य पञ्चभक्तेसति यच्छेषं तं गुणनफलमध्ये शोध्य यल्लब्धं सैकं कृत्वा सप्तभिः भक्तम् । भक्ते सति शेषक्रमेण कालहोरेशाः भवन्ति । यथा—यत्र गुरो इष्टम् = ११।० द्विगुणितं = ११।० × २ = २२।० जातम् । पञ्चभिः भक्ते सति शेष २ जातम् । २२—२ = २० ÷ ७ = ६ शेषः सैकं = ६ + १ = ७ । अतः गुरुवासरतः सप्तमं बुधस्य कालहोरा भवतीति बोध्यम् ।

ज्योति—इष्टघटी अर्थात् इष्ट काल को २ से गुणा कर ५ से भाग दे, जो शेष बचे वह दिनपति के क्रम से कालहोरोश होगा । इस प्रकार दव्यादि-वार क्रम से सूर्य, शुक्र, बुध, चन्द्र, शनि, गुरु और मंगल प्रथम कालहोरेश होते हैं ।

चूंकि ५ से भाग देने पर ४ से अधिक शेष नहीं बच सकता इसलिए इस श्लोक के अनुसार ४ या ५ ही होरेश हो सकते हैं । जो उचित नहीं है । क्योंकि वार ७ होते हैं । मुहूर्तचिन्तामणि में—

"वारादेर्घटिका द्विघ्ना स्वाक्षहृच्छेषवर्ज्जिताः ।
सैकास्तष्टा नगैः कालहोरेश दिनपात् क्रमात् ॥"

अर्थात् इष्टकाल को २ से गुणा कर गुणन फल में ५ बार भाग देने पर जो शेष हो उसे गुणन फल में घटाकर जो प्राप्त हो उसमें १ जोड़कर ७ का भाग देने से शेष क्रम से कालहोरेश होते हैं । जैसे गुरुवार को इष्टकाल ११।० पर कालहोरा का आनयन—

१११० × २ = २२१० ÷ ५ = २ शेष। अब २२—२ = २० ÷ ७ = ६ शेष। ६ + १ = ७। अतः गुरुवार से ७ वाँ वार बुध होने से बुध की काल होरा हुई।

वर्षमासादिकस्यान्ते त्याज्यसमयः—

वर्षान्ते वर्जयेत् पक्षं मासान्ते च दिनत्रयम्।
घटिकाद्वयमृक्षान्ते ग्रहणाद्दिनसप्तकम्॥ ३०॥

कुन्तला—वर्षान्ते = वर्षस्यान्तिमे; पक्षं, वर्जयेत् = त्याज्यमिति। मासान्ते च दिनत्रयम् = मासस्यान्तिमे दिनत्रयं त्याज्यं भवति। ऋक्षान्ते = नक्षत्रस्यान्तिमे भागे घटिकाद्वयं त्याज्यम्। एवं ग्रहणात् सप्तदिनं त्याज्यम्।

ज्योति—प्रत्येक वर्ष के अन्त का एक पक्ष शुभ कार्य में त्याग दें। महीने के अन्त में तीन दिन त्याग दें। नक्षत्र के अन्त में दो घड़ी त्याग दें और ग्रहण के बाद का सात दिन त्याग देना चाहिए।

होलाष्टकविचारः—

विपाशैरावतीतीरे शुतुद्र्याश्च च त्रिपुष्करे।
वर्जयेत्सर्वकार्येषु होलिका प्राग्दिनाष्टकम्॥ ३१॥

कुन्तला—विपाशा ईरावती तथा शतुद्रीनदीनां तटप्रदेशे तथा त्रिपुष्करदेशे च होलिकाप्रागष्टदिनानि समस्तशुभकर्मणि वर्जितानि सन्ति।

ज्योति—विपाशा, ईरावती और शुतुद्री नदियों के तटप्रदेशों में होलिका के आठ दिन पूर्व समस्त शुभ कार्यों में वर्जित माना गया है।

गण्डान्तकालः—

अश्विनीमघमूलादौ गण्डो दण्डद्वयं तथा।
रेवतीसार्पशक्रान्ते गण्डो दण्डद्वयं मतः॥ ३२॥

कुन्तला—अश्विनी, मघा एवं मूल नक्षत्राणां आदौ घटिकाद्वयं, गण्डान्तशब्देनोच्यते तथा आश्लेषा तथा ज्येष्ठा नक्षणां अन्ते च घटिकाद्वयं गण्डान्तेव भवति।

पुनः गण्डान्तसमयकथनम्—

अश्विनीमघमूलादौ त्रिवेदनवनाडिकाः ।
रेवतीसार्पशक्रान्ते मासरुद्ररसास्तथा ॥ ३३ ॥

कुन्तला—अश्विनी, नक्षत्रस्य आदौ घटिकात्रयं, मघा नक्षत्रस्य आदौ-घटिकाचतुष्टयं तथा मूलनक्षास्यादौ नवघटिका, रेवतीनक्षत्रस्यान्तस्य च द्वादशघटिका, अश्लेषा नक्षत्रस्य अन्तस्य च एकादश घटिका एवं ज्येष्ठा नक्षत्रस्यान्ते षड् घटिका च गण्डान्तः कथ्यते ।

ज्योति—अश्विनी नक्षत्र के आदि की तीन घड़ी, मघा नक्षत्र के आदि की चार घड़ी, मूल नक्षत्र के आदि की नव घड़ी, रेवती नक्षत्र के अन्त की बारह घड़ी, आश्लेषा नक्षत्र के ग्यारह घड़ी तथा ज्येष्ठा में अन्त की ६ । घड़ी गण्डान्त मानी जाती है ।

गण्डान्ते उत्पन्नबालस्य फलम्—

मूलादौ वेदघटिकासु जायेत् यदि मानवः ।
समाष्टकं पिता तस्य मुखं नैव विलोकयेत् ॥ ३४ ॥
सर्वेषां गण्डजातानां परित्यागो विधीयते ।
तातेनादर्शनं कार्यं यावत्षण्मासिको भवेत् ॥ ३४ ॥

कुन्तला—यदि, कोऽपि बालकः मूलनक्षत्रस्य आदौ, वेदघटिकासु = घटिकाचतुष्टये च, जायते = उत्पन्नो भवेत् तदा, समाष्टकं = अष्टवर्षं यावत् पिता तस्य पुत्रस्य मुखं न, विलोकयेत् = पश्येदित्यर्थः । सर्वेषां गण्डजातानां = सर्वेषु गण्डान्तेषु उत्पन्नो बालकः परित्यागो विधीयते = परित्यागः कर्त्तव्यमिति । तातेन = पिताद्वारा, अदर्शनं कार्यम् = नावलोकनीयम् । यावत् कालपर्यन्तं बालकस्य आयुः षड्मासस्य न भवेत् ।

ज्योति—मूलनक्षत्र की आदि की ४ घड़ी में बालक उत्पन्न हो तो पिता आठ वर्ष तक बालक का मुख न देखे । यद्यपि सभी गण्डान्त नक्षत्रों में उत्पन्न बालक का परित्याग कहा गया है, परन्तु यदि ऐसा न कर सकें तो छः महीने तक पिता बालक का मुख न देखे ।

अथवा विधानतः शान्तिः कर्त्तव्या शुभमिच्छता।
विवाहादिशुभे नेष्टः कर्त्ता विघ्नमवाप्नुयात् ॥ ३६ ॥

कुन्तला—अथवा गण्डान्तोत्पन्न बालकस्य विधिपूर्वकं, शान्तिः = पूजनादिकार्यं कर्त्तव्यम् । द्वन्दं शान्तिकर्मं अर्थात् पूजनादिकार्यं विवाहादि शुभसंस्कारकर्मणि न कर्त्तव्यम् । विवाहादिशुभकार्येषु शान्तिकर्त्ता विघ्नं प्राप्नोति ।

ज्योति—अथवा गण्डान्त में उत्पन्न बालक का विधिपूर्वकशान्ति करना चाहिए। यह शान्ति विवाहादि शुभकार्यों में नहीं करनी चाहिए। विवाहादि शुभकार्यों में शान्ति करनेवाले को विघ्न का सामना करना पड़ता है।

शान्तिविधिः—

शतौषधीमूलमृदम्बुरत्नैः सद्बीजगर्भैः कलशैः समन्त्रैः।
कुर्याज्जनित्र्या सह बालकेन स्नानं शुभार्थी सहहोमदानैः ॥३७॥

कुन्तला—शतौषधः, मूलं, मृद् = सप्तमृतिका, अम्बु = तीर्थजलैः रत्नैः= पञ्चरत्नैः, सद्बीजगर्भैः = सप्तधान्यैश्च परिपूर्णकलशैः, समन्त्रैः = वेदमन्त्रोच्चारणपूर्वकं बालकस्य जनित्र्या = जनन्या सह पिता होमदानसहितं च स्नानं कुर्यात् = सम्पाददयेदिति भावः ।

ज्योति—शतौषधि, मूल, सप्तमृतिका, तीर्थ जल, पञ्चरत्न, सप्तधान्यादि से पूर्ण कलश से बालक की माता के साथ पिता को होम दानादि पूर्वक स्नान करना चाहिए।

शतौषध्याभावे परिहारकथनम्—

शतौषध्या अभावे च सर्वौषधिगणः स्मृतः।
कूटमांसी हरिद्रे द्वे मुरा शैलेयचन्दनम्।
वचचम्पकमुस्तं च सर्वौषध्यो दश स्मृताः॥ ३८ ॥

कुन्तला—शतौषध्याभावे = शतौषधिः न प्राप्ते सति, सर्वौषधिगणः स्मृतः = सर्वौषधिरेव प्रयोगाय कथितमस्ति । कूटः, जटामांसी, हरिद्राद्वयं, तालिसपत्रम्, शिलाजीतः, शैलेयं चन्दनम्, वचः; चम्पकः, मुस्तं-मोथा इमे दशनामाख्य ओषधयः सर्वौषधिः शब्देनोच्यते ।

ज्योति—यदि शतौषधि न मिल सके तो सर्वौषधिगण ही प्रयोग किया जाता है। जैसे कूट, जटामांसी, दोनों हल्दी, तालीसपत्र, शिलाजीत, मलयागिर चन्दन, वच, चम्पक और मोथा ये औषधियाँ ही सर्वौषधि कही जाती हैं।

सप्तमृतिकाः—

गजस्थानात् ह्यस्थानात् तथा चैव चतुष्पथात्।
वल्मीकस्थान्नादीसंगाद् गोशालाराजद्वारतः॥ ३९॥

कुन्तला—गजस्थानात् = हस्तिनिवासस्थानात् तथा, हयस्थानात् = अश्वनिवासस्थानात्, चतुष्पथस्थानात् च एवं वल्मीकस्थानात्, नदीसंगमस्थानात्, गोशाला = गोनिवासस्थानात्, राजद्वारतश्च समानीताः। मृतिका सप्तमृतिका इति कथ्यते बुधैः।

ज्योति—हाथी बांधने वाले स्थान की मिट्टी, घोड़ा वांधने के स्थान की मिट्टी, चौराहे की मृत्तिका, सर्पनिवास स्थान की मिट्टी नदी संगम की मिट्टी, गोशाला की और राजद्वार की मिट्टी, सप्त मृत्तिका नाम से कही जाती है।

भद्राज्ञानम्—

कृष्णे तृतीया दशमी च रात्रौ स्यात्सप्तमी भूतदिवा च भद्रा।
एकादशी वेदसिते परार्द्धे स्यादष्टमी चन्द्रतिथौ दिवा च॥ ४०॥

कुन्तला—प्रत्येकमासस्य कृष्णपक्षस्य तृतीयादशम्यां च परार्द्धे च भद्रा भवति। एवं, पूर्वार्द्धे च सप्तम्यां = चतुर्दश्यां च भद्रा भवति। शुक्लपक्षे चतुर्थ्यां एकादश्यां च परार्द्धे भद्रा भवति। तथा च अष्टम्यां पूर्णिमायाश्च पूर्वार्द्धे भवति।

ज्योति—प्रत्येक मास के कृष्णपक्ष की तृतीया और दशमी तिथि को दिन के परार्द्ध में भद्रा होती है। सप्तमी तथा चतुर्दशी के पूर्वार्द्ध भाग में भद्रा होती है। शुक्लपक्ष की चतुर्थी और एकादशी को परार्द्ध भाग में भद्रा होती है और अष्टमी तथा पौर्णमासी को दिन के पूर्वार्द्ध भाग में भद्रा होती है। इस प्रकार मुहूर्तचिन्तामणि में भी कहा गया है—

शुक्ले पूर्वार्द्धे अष्टमीपञ्चदश्यो भद्रैकादश्यां चतुर्थ्यां परार्द्धे ।
कृष्णे अन्त्यार्द्धे स्यात् तृतीयादशभ्योः पूर्वे भागे सप्तमी शम्भूतिथ्योः ॥

स्पष्टार्थं चक्र

पक्ष	तिथि	दल
कृष्ण	३।१० ७।१४	परार्द्धं पूर्वार्द्धे
शुक्ल	४।११ ८।१५	परार्द्धं पूर्वार्द्धे

भद्रामुखविचारः—

दशम्यामष्टम्यां वसुघटिमितात्पंचकमथो
हरिद्युः सप्तम्यां तिथिमितघटीभ्यः शरमितम् ।
तृतीया राकायां त्रिभुजघटिकाभ्यः शरमितं
मुखं विष्टेः प्रोक्तं शिवतिथिचतुर्थ्याद् ह्यशुभदम् ॥ ४१ ॥

कुन्तला—दशम्यामष्टम्यां व बसुघटीमितात् = अष्टौ घटीमितात्, पञ्चकं = पञ्चघटीमितं, अथो = अनन्तरं विष्टेः मुखं प्रोक्तमस्ति । एवं हरिद्युः= एकादश्यां तिथौ, सप्तम्यां च तिथिमितघटीभ्यः = पञ्चदशघटीभ्यः, शरमितं= पञ्चघटीपरिमितम्, तृतीयायां, राकायां = पूर्णिमायां, त्रिभुजघटिकाभ्यः = त्रिविंशतिघटीमितं अथानन्तरं शरमितं = पञ्चघटीमितं, शिवतिथौ = चतुर्दश्यां, चतुर्थ्यां च; हि = निश्चयेन = अशुभदम् = अशुभं भवतीति वाच्यम् ।

ज्योति—दशमी तथा अष्टमी तिथि की आठ घड़ी पीछे पाँच घड़ी तक भद्रा का मुख होता है । एकादशी और सप्तमी में पन्द्रह घड़ी पीछे पाँच घड़ी तक भद्रा का मुख होता है । तृतीया और पूर्णिमा को तेइस घड़ी पीछे पाँच घड़ी तक भद्रा का मुख रहता है । चतुर्दशी और चतुर्थी

को पहले की पाँच घड़ी भद्रा का मुख होता है जो सभी शुभ कार्यों में अशुभ होता है।

भद्रापुच्छविचारः—

भेष्वर्कनखनाड्यूर्ध्वं भद्रापुच्छं घटीत्रयम्।
क्रमेणैव सिते पक्षे उत्क्रमेण सितेतरे ॥ ४२ ॥

कुन्तला—प्रत्येकमासस्य शुक्लपक्षे चतुर्थ्यां तिथौ सप्तविंशति घटिकानन्तरं घटिकात्रयं यावत् भद्रायाः पुच्छं भवति। एवमेव अष्टम्यां पञ्चघटिका, एकादश्यां द्वादशघटिकापश्चाद्, तथा पूर्णिमायां विंशति घटिकानन्तरं घटिकात्रयं यावद् च भद्रायाः पुच्छं भवति। एवं सिते पक्षे क्रमेणैव तथा असिते = कृष्णेपक्षे, उत्क्रमेण = विपरीतं च भद्रायाः पुच्छं ज्ञेयमिति।

ज्योति—प्रत्येक मास के शुक्लपक्ष की चतुर्थी तिथि को सत्ताइस घड़ी के बाद तीन घड़ी तक भद्रा का पुच्छ होता है। अष्टमी को पाँच घड़ी; एकादशी को बारह घड़ी के बाद और पूर्णमासी को बीस घड़ी के बाद तीन घड़ी तक भद्रा का पुच्छ होता है। इस प्रकार शुक्ल पक्ष में क्रम से तथा कृष्ण पक्ष में उत्क्रम अर्थात् विपरीत भद्रा का पुच्छ जानना चाहिए।

भद्रावासः[1]—

कुम्भमीनालिसिंहेऽब्जे विष्टेर्वासो महीतले।
मेषादित्रितये कर्के स्वर्गलोके महीयते।
कन्यातुले मृगे चापे पाताले यत्र तत्फलम् ॥ ४३ ॥

कुन्तला—कुम्भः, मीनः, अलिः = वृश्चिकः, सिंहराशीनां अब्जे = चन्द्रे; विद्यमाने सति, विष्टेः वासो = भद्रानिवासः, महीतले = पृथ्वीव्यां भवतीति वाच्यम्। मेषादि त्रये = मेषः, वृषः, मिथुनराशौ तथा कर्के = कर्कराशौ च भद्रावासः स्वर्गलोके भवति। कन्याः, तुलाः, मकरे, चापे = धनुराशौ च भद्रा पाताले भवति। यत्र तत्फलम् = यत्र भद्रा भवति तत्रैव तत्फलमपि बोध्यम्।

---

[1] भद्राफलम्—

स्वर्गे भद्रा शुभं कुर्यात्पाताले च धनागमः।
मर्त्यलोके यदा भद्रा सर्वकार्यविनाशिनी ॥

ज्योति—कुम्भ, मीन, वृश्चिक और सिंह राशि के चन्द्रमा में भद्रा का वास पृथ्वी पर रहता है। मेष, वृष, मिथुन, तथा कर्कराशि के चन्द्रमा में भद्रा का वास स्वर्ग में रहता है। कन्या, तुला, मकर और धनुराशि के चन्द्रमा में भद्रा का वास पाताल में रहता है। जहाँ पर भद्रा का वास रहता है; वहाँ ही भद्रा का फल भी होता है।

सर्वार्थसिद्धियोगः—

सूर्येऽर्कमूलोत्तरपुष्यदास्रं चान्द्रे श्रुतिब्रह्मशशीज्यमैत्रम्।
भौमेऽश्व्यहिर्बुध्न्यकृशानुसार्पं ज्ञे ब्राह्ममैत्रार्ककृशानु चान्द्रम् ॥ ४४ ॥
जीवेऽन्त्यमैत्राऽश्व्यदितीज्य शुक्रेऽन्त्यमैत्राश्व्यदितिश्रवोधम्।
शनौ श्रुति ब्राह्मसमीरभानि सर्वार्थसिद्ध्यै कथितानि पूर्वैः ॥४५॥

कुन्तला—सूर्ये = रविवासरे, अर्कः = हस्तः, मूलं, उत्तरः = उत्तरात्रयः; पुष्यः, दास्रं = अश्विनी च एतानि नक्षत्राणि भवन्ति तदा सिद्धियोगो भवतीति। चन्द्रे = सोमवासरे श्रुतिः = श्रावणः, ब्रह्म = रोहिणी, शशी = मृगशिरः इज्यः—पुष्पः, मैत्रम् = अनुराधा, भौमे = मंगलवासरे, अश्व्य = अश्विनी, अहिर्बुध्न्य = उत्तराभाद्रपदा, कृशानुः—कृत्तिका, सार्पः = आश्लेषा, ज्ञे = बुधवासरे; ब्राह्म = रोहिणी, मैत्र = अनुराधा, अर्कः = हस्तः, कृशानुः = कृतिका, चान्द्रः = मृगशिरा, जीवे = गुरुवासरे अन्त्यः = रेवती, मैत्रः = अनुराधा, अश्व्य = अश्विनी, अदिति = पूर्वाषाढ़, इज्यः = पुष्यः शुक्रे = शुक्रवासरे, अन्त्य = रेवती, मैत्र = अनुराधा, अश्व्यः = अश्विनी, अदिति = पूर्वाषाढ़, श्रवोभम् = श्रावण नक्षत्राणि च। एवं शनौ श्रुति = श्रवणः, ब्राह्म = रोहिणी; समीर = स्वाती, भानि = नक्षत्राणि पूर्वाचार्याः सिद्धियोगसंज्ञकाः कथितानि सन्ति।

ज्योति—रविवार को हस्त, मूल, तीनों उत्तरा पुष्प, तथा अश्विनी नक्षत्र हो तो सर्वार्थसिद्धि योग होता है। सोमवार को श्रवण रोहिणी, मृगशिरा, पुष्य, तथा अनुराधा नक्षत्र, मंगलवार को अश्विनी, उत्तरा भाद्रपदा, कृतिका, आश्लेषा नक्षत्र, बुधवार को रोहिणी, अनुराधा, हस्त, कृतिका, मृगशिरा गुरुवार को रेवती, अनुराधा, अश्विनी, पूर्वाषाढ़, पुष्प तथा शुक्रवार को रेवती, अनुराधा, अश्विनी, पूर्वाषाढ़ा, श्रवण, शनिवार

को श्रवण, रोहिणी, तथा स्वाती नक्षत्र होने से प्राचीन आचार्यों ने सर्वार्थसिद्धि योग कहा है।

अथ वियोग वर्णनम्—

सूर्यभाद्वेद ४ गो ९ तर्क ६ दिक् १० विश्व १३ नख २० संमिते।
चन्द्रर्क्षे रवियोगाः स्युर्दोष संघविनाशकाः॥ ४६॥

कुन्तला—सूर्यभाद् = यस्मिन् नक्षत्रे सूर्यः तिष्ठति तस्मात् नक्षत्रात् वर्तमान नक्षत्रपर्यन्तं यदि वेद = ४, गौ = ९, तर्क = ६ दिक् १०, विश्व = ११, नख = २०, संमिते = संख्यकाः नक्षत्राणि रवियोगसंज्ञाकाः भवन्ति। अयं योगः सर्वदोष विनाशको भवतीति।

ज्योति—जिस नक्षत्र पर सूर्य हो उस नक्षत्र से वर्तमान नक्षत्र तक गिनने से यदि, ४, ९, ६ १०, १३, तथा २० वीं संख्या हो तो उस दिन रवि योग होता है। यह रवि योग सभी दोषों को नष्ट कर देता है।

सिद्धियोगः—

नन्दा शुक्रे सोमपुत्रे च भद्रा रिक्ता मन्द्रे लोहिताङ्गे जया च।
वाचस्पत्यौ या च पूर्णाभिधाना सर्वारम्भेष्वेक सिद्धं तिथिः स्यात्॥४७॥

कुन्तला—शुक्रे = शुक्रवासरे, नन्दा = १, ६, ११ तिथयः, सोमपुत्रे = बुधवासरे, भद्रा = २, ७, १२ संज्ञकतिथयः, मन्दे = शनिवासरे रिक्ता = ४, ९, १४ तिथयः, लोहिताङ्गे = भौमवासरे, जया = ३, ८, १३ तिथयः, वाचस्पत्यौ = गुरुवासरे, पूर्णा = ५, १०, १५ तिथयः सिद्धियोगसंज्ञकाः भवन्ति। उक्तसिद्धियोगे सम्पादितानि सर्वाणि कार्याणि सिद्धाः भवन्ति।

ज्योति—शुक्रवार को नन्दा संज्ञक तिथियाँ, (१, ६, ११); बुधवार को भद्रासंज्ञक (२, ७, १२) तिथियाँ; शनिवार को रिक्तासंज्ञक (४, ९, १४) तिथियाँ, मंगलवार को जयासंज्ञक (३, ८, १३) तिथियाँ, तथा वृहस्पतिवार को पूर्णासंज्ञक (५, १०, १५) तिथियाँ हों तो सिद्धियोग होता है। इस योग में कोई भी शुभकार्य करने से सिद्धि होती है।

दोषपरिहारः—

अयोगे सुयोगोऽपि चेत्स्यात्तदानीमयोगं निहत्यैव सिद्धिं तनोति।
परे लग्नशुद्ध्या कुयोगादिनाशं दिनार्द्धोत्तरं विष्टिपूर्वं च शस्तम्॥४८॥

कुन्तला—अयोगे = दुष्योगे, यदि सुयोगः = सिद्धियोगादिशोभनयोगः; यदि भवेत्तदा, अयोगं निहत्य = कुयोगस्य विनाशं कृत्वा, सिद्धिं तनोति = सिद्धिं ददाति परे = अपरे आचार्याः कथयन्ति यत् यदि लग्नशुध्यामपि कुयोगजनित दुष्टफलाः नष्टाः भवन्ति। एवं विष्टिदोषादि सर्वदोषाः दिनस्य उत्तरार्द्धे शुभाः भवन्ति।

ज्योति—अयोग में कोई सिद्धि हो तो यह सिद्धि योग अयोगजनित विकार को दूर करके कार्य की सिद्धि को देता है। कुछ आचार्यों का कहना है कि लग्न की शुद्धि में ही कुयोग से उत्पन्न फल नष्ट हो जाते हैं तथा भद्रा आदि सभी दोष दिन के उत्तरार्ध में शुभ हो जाते हैं।

विष्टिरंगारकश्चैव व्यतीपातः स वैधृतिः।
प्रत्यरिर्जन्मनक्षत्रं मध्याह्नात्परतः शुभम् ॥ ४९ ॥

कुन्तला—विष्टिः = भद्रा, अङ्गारकश्चैव = अङ्गारकयोगश्च, वैधृतियोगसहितः व्यतीपातः तथा जन्म नक्षत्रम्, मध्याह्नात् परतः = मध्याह्नोत्तरं शुभाः भवन्ति।

ज्योति—भद्रा, अङ्गारक योग, वैधृति योग सहित व्यतीपात तथा जन्म नक्षत्र ये सभी मध्याह्न के बाद शुभ हो जाते हैं।

* * *

अथ संक्रान्तिप्रकरणम्

संक्रान्तिपुण्यकालः—

पूर्वतोऽपि परतोऽपि संक्रमात्पुण्यकालघटिकाश्च षोडश अर्द्धरात्रसमयादनन्तरं संक्रमं परदिने हि पुण्यदम् ॥ ५० ॥

कुन्तला—संक्रान्तिकालात् पूर्वं एवञ्च परं उभयत्र षोडश-षोडशघटिकाः पुण्यकाल इति कथ्यते। अर्द्धरात्र्योत्तरं पुण्यकालश्चेत् तदा परदिने=द्वितीयदिने; हि = निश्चयेन, पुण्यकालो भवतीति बोध्यम्।

ज्योति—सूर्य संक्रान्ति के पहले और पीछे की सोलह-सोलह घड़ी पुण्यकाल की होती है। यदि आधी रात के बाद संक्रान्ति हो तो दूसरे दिन ही पुण्यकाल होता है।

मकरसंक्रान्तिनिर्णयः—

कार्मुकं तु परित्यज्य मकरं याति भास्करः।
प्रदोषे चार्द्धरात्रे वा तदा पुण्यं परेऽहनि ॥ ५१ ॥

कुन्तला—भास्करः = सूर्यः, कार्मुकं = धनुराशिं, परित्यज्य = हित्वा यदा; मकरं = मकरराशौ प्रदोषे चार्द्धरात्रे वा समागच्छति तदा; पुण्यं = पुण्यकालः, परेऽहनि = द्वितीयदिने भवति।

ज्योति—यदि सूर्य धनुराशि को छोड़कर मकर राशि में प्रदोष अथवा अर्द्धरात्रि में आवे अर्थात् मकर संक्रान्ति हो तो दूसरे दिन ही पुण्यकाल होगा।

विशेषः—

यद्यर्द्धरात्र एव स्यात्सम्पूर्णं संक्रमो रवेः।
तदा दिनद्वयं पुण्यं स्नानदानादिकर्मसु ॥ ५२ ॥

कुन्तला—यदि अर्द्धरात्रिकाले रवेः संक्रमः (संक्रान्ति) भवेत् तदा दिनद्वयं पुण्यं = पुण्यकालः स्नानदानादिकर्मसु भवतीति।

ज्योति—यदि सूर्य की संक्रान्ति अर्द्धरात्रि के समय हो तो दोनों दिन पुण्यकाल होता है।

सूर्यादिसंक्रमणे वर्ज्यघट्यः—

देव ३३ द्वयं २ क ९ र्तवो ६ ऽष्टाष्टौ
८८ नाड्योऽङ्काः ९ खनृपः: १६० क्रमात्।
वर्ज्याः संमणेऽर्कादेः प्रायोऽर्कस्याति निन्दिताः॥ ५३॥

कुन्तला—संक्रमणे = संक्रान्तौ, अर्कादेः = सूर्यादि ग्रहतः, क्रमात् = क्रमेण अर्थात् सूर्यस्य, देव = त्रित्रिशद् घट्यः, चन्द्रस्य द्वयं, भौमस्य नव, बुधस्य षड्, गुरोः अष्टाशिति, शुक्रस्य अङ्काः = नवा, शनेः, खनृपः = षष्ठ्यधिकशतं, नाड्यो = घट्यः, वर्ज्याः = शुभकर्मणि त्याज्याः भवन्ति। एवं सूर्यस्याति निन्द्यो कथितमस्ति।

ज्योति—सूर्य की संक्रकान्ति में ३३ घड़ी चन्द्रमा की संक्रकान्ति में २ घड़ी, मंगल की संक्रान्ति में ९ घड़ी; बुध की संक्रान्ति में ६ घड़ी, गुरु की संक्रान्ति में अट्ठासी घड़ी, शुक्र की संक्रान्ति में ९ घड़ी और शनि की संक्रान्ति की १६० घड़ी प्रत्येक शुभ कर्म में वर्जित मानी गई है। सूर्य संक्रान्ति की घड़ी तो अत्यन्त ही निन्दित मानी गई है।

संक्रान्तिवशाद् शुभाशुभज्ञानम्—

संक्रान्त्यधरनक्षत्राद् गणयेच्च त्रिषट्—त्रिषट्।
पन्था भोगो व्यथा वस्त्रं हानिश्च विपुलं धनम्॥ ५४॥

कुन्तला—सांकान्त्याधरनक्षत्राद् = यस्मिन् नक्षत्रे संक्रमणो भवेत् तस्य पूर्वनक्षत्रात् जन्मनक्षत्रपर्यन्तं त्रिषट् त्रिषट् गणयेत् = गणना कार्या इत्यर्थः। क्रमेण, पन्था = मार्गचलनम्; भोगप्राप्तिः, व्यथा, वस्त्रप्राप्तिः हानि, बहुधनलाभश्च फलं भवतीति।

ज्योति—जिस नक्षत्र पर संक्रान्ति हो उसके पूर्व से नक्षत्र से जन्म नक्षत्र तक ३, ६, ३, ६, ३, ६ क्रम से गणना करे तो मार्ग चलना, भोग प्राप्ति, व्याधा, वस्त्रलाभ, हानि, और विपुलधन प्राप्ति, ये फल होंगे जो निम्नलिखित चक्र से स्पष्ट हैं।

३	६	३	६	३	६	नक्षत्र
पन्था	भोगप्राप्ति	व्यथा	वस्त्रप्राप्ति	हानि	वहुधनप्राप्ति	फल

शुक्लद्वितीयायाः चन्द्रनक्षत्रेण प्रत्येकमनुष्यस्य शुभाशुभफलम्—

यस्मिन् भे भाति चन्द्रः करकलिततिथौ दृश्यमानः प्रदोषे ।
देयं तन्मध्यशृंगे फलमिह कथितं जन्मनक्षत्रयोगात् ।
त्रासं वित्तस्य लाभं भयमपि कथितं भूपसम्मानता च ।
स्थानत्यागं च लाभं भगणितगणकमृक्षययावद्द्वितीया ॥ ५५ ॥

कुन्तला—करकलिततिथौ = शुक्लपक्षस्यद्वितीयायां यस्मिन नक्षत्रे चन्द्रोदयो भवति तस्मात् जन्मनक्षत्रसंख्या त्रयस्यान्तरे भवेत तदा भयम्, षड् संख्यान्तरे धनलाभः, पुनः संख्यात्रयान्तरे भयम्, पुनः षट् संख्यात्रयान्तरे च लाभो भवतीति फलं बोध्यम् । इदं फलं यावत् पर्यन्तं शुक्लपक्षस्य द्वितीयातिथिर्नागच्छति तावत् पर्यन्तं विज्ञेयम् ।

ज्योति—शुक्कपक्ष की द्वितीया को जिस नक्षत्र पर चन्द्रोदय हो उस नक्षत्र से जन्म नक्षत्र यदि तीन संख्या के भीतर हो तो भय, छः संख्या के भीतर हो तो धन लाभ, पुनः तीन संख्या के भीतर हो तो भय और पुनः छः संख्या के भीतर हो तो अर्थलाभ, और राजसम्मान होता है । यह फल जब तक शुद्ध पक्ष की द्वितीया तिथि नहीं आती तब तक बना रहता है ।

ग्रहणां गोचरफलवर्णनम्—

सर्वे लाभगृहे स्थितस्त्रिखरिपुष्वर्कः कुजार्कीत्रि षट्,
प्राप्तौ त्र्याद्यखमन्मथे रिपुशशी खास्तारिवर्जे भृगुः ।
धीधर्मास्तधनेषु वाक्पतिरिष्वाष्टाम्बुखस्थो बुधः,
श्रेष्ठो जन्मगृहादि गोचरविधौ विद्धो न चेत्स्याद् ग्रहैः ॥ ५६ ॥

कुन्तला—सर्वे = सर्वे ग्रहाः, लाभगृहे = जन्मराशितः एकादशे स्थिते शुभाः भवन्ति । जन्मराशितः त्रि = त्रयं:, खं = दशमं, अरिषु = षष्ठं एषु

उक्तस्थानेषु स्थिते सतिसूर्यः; त्रिषट् = तृतीयं, षष्ठं शनिभौमः, त्र्याद्य = तृतीयं, प्रथमं, खं = दशमं; मन्मथं = सप्तमं, रिपुः = षष्ठं; प्राप्ते = स्थिते चन्द्रः खं = दशमं, अस्तं = सप्तमं, अरि = षष्ठं; वर्जे = हित्वा अन्येषु स्थानेषु च, शुक्रः । वाक्पतिः = गुरुः, धी = पञ्चमं, धर्मं = नवमं, अस्त = सप्तमं, धनेषु= द्वितीयेषु च अरिषु = षष्ठं, अष्टाम्बु = अष्टमं, चतुर्थं, खस्थो = दशमे च स्थितः बुधो, श्रेष्ठो = शुभं भवति । यदि उक्त ग्रहाः जन्मगृहादि गोचरविधौ = जन्मराशितः गोचरेण, न विद्धो चेत्स्याद्ग्रहैः = ग्रहाः विद्धा न भवेयुः तदैव शुभाः सन्ति ।

ज्योति—सभी ग्रह जन्म राशि से ग्यारहवें स्थान में शुभ होते हैं । जन्मराशि से ३, १०, ६ स्थानों में सूर्य, ३, ६ में शनि मंगल और ३, १, १०, ७, ६ स्थानों में चन्द्र तथा १०, ७, ६ इन स्थानों को छोड़ कर अन्य स्थानों में शुक्र । ५, ९; ७, २ स्थानों में गुरु, और ६, ८, ४, १० स्थानों में बुध शुभ कहे गए हैं । यदि ये सभी ग्रह जब दूसरे ग्रहों से विद्ध न हों तो शुभ होते हैं ।

सूर्यादिग्रहाणां दक्षिणा —

धेनु शंखोऽरुणरुचिरवृषो काञ्चनं पीतवस्त्रं,
श्वेतश्चाश्वः सुरभिरुदिता कृष्णलोहं महौजः ।
सूर्यादीनां मुनिभिरसिता दक्षिणास्तु ग्रहाणां,
स्नानैर्दानैर्हवनबलिभिस्त च तुष्यन्ति खेटाः ॥ ५७ ॥

कुन्तला—सूर्यादिग्रहाणां कृते क्रमेण गो—शंखः अरुणवृषभः, स्वर्णः, पीतवस्त्रं; श्वेताश्वः, कृष्णा गो, लोहः, अजापुत्रं च दानवस्तूनि सन्ति । इमे ग्रहाः स्नान, दान एवं हवनादि पदार्थैः प्रसन्नाः भवन्ति ।

ज्योति—गो; शंख; लाल बैल, सोना, पीलावस्त्र, उजला घोड़ा, कालीगाय, लोहा, बकरा ये सूर्यादि ग्रहों के क्रम से दान वस्तु कहे गये हैं । ये ग्रह दान, हवन तथा पूजन से प्रसन्न होते हैं ।

स्नानविधि—

लाजाकुष्ठबलापियंगुधनसिद्धार्थैर्निशाद्वाभिः ।
पुंनालोभयुतैर्जलैर्निगदितं स्नानं ग्रहोत्थाघहृत ॥ ५८ ॥

कुन्तला—सूर्यादि ग्रहाणां जन्यबाधानिवारणार्थं क्रमेण लाजा (धान्यस्य), कूटः, वल = (वरियारः), प्रियंगुः, नागरमोथा, सर्सपः, हरिद्रा, देवदारूः, शरपुंखा तथा लोध्रश्च स्नानौषधयः सन्ति ।

ज्योति—सूर्यादि ग्रह जनित बाधा के निवारण के लिए क्रम से धान का लावा, कूट, वरियार, प्रियंगु, नागरमोथा, सरसों, हल्दी देवदारू; शरपुंखा तथा लोध्र इण औषधियों से स्नान करना चाहिए ।

तारावलम्

जन्मभाद् गणयेदादौ दिनधिष्ण्यावधि क्रमात् ।
नवभिस्तु हरेद्भागं शेषाः ताराः प्रकीर्तिताः ॥ ५९ ॥
जन्मसम्पद्विपतक्षेमं प्रत्यरिः साधकोवधः ।
तथातिमैत्र्यं मित्रं च तारानाम सदृक्फलम् ॥ ६० ॥

कुन्तला—जन्मभाद् = जन्म नक्षत्रतः, दिनधिष्ण्यावधिः = दिननक्षत्रावधिः, गणयेद् आदौ = सर्वप्रथमं गणना कार्या, एवं गणनासंख्यया च नवभिः भजेत् । शेषाः ताराः; प्रकीर्तिताः = कथिताः सन्ति । एकादि शेषक्रमेण जन्म, सम्पद् विपद् क्षेम, प्रत्यरिः; साधक, वध, अतिमित्रं तथा मित्रञ्च भवन्ति । इमे नवतारकाणां नामानि सदृशैव फलं बोध्यमिति ।

ज्योति—जन्म नक्षत्र से दिनतारा तक गिनें । पुनः उसमें नव का भाग दें । यदि एक शेष बचे तो जन्मतारा, दो शेष बचे तो सम्पद तारा; तीन शेष बचे तो विपद् तारा; चार शेष बचे तो क्षेत्रतारा; पाँच शेष बचें तो प्रत्यरि तारा; छः शेष बचे तो साधक तारा, सात शेष बचे तो वध तारा, आठ शेष बचे तो अतिमित्रतारा तथा नव शेष बचे तो मित्रतारा समझना चाहिए । नाम सदृश ताराओं का फल कहा गया है ।

पातदोषः—

सूर्यभुक्ताच्च नक्षत्रात्पातदोषो विधीयते ।
मघाश्लेषा च चित्रा च सानुराधातथैव च ॥ ६१ ॥
श्रवणं रेवती चैव गणयेदश्विभादितः ।
पातसंज्ञे च नक्षत्रे विवाहादि शुभं त्यजेत् ॥ ६२ ॥

कुन्तला—सूर्य भुक्ताच्च = यस्मिन्नक्षत्रे सूर्यो भवति तस्मात् ; भुक्तः = पूर्वं नक्षत्रात् ; लग्ननक्षत्रावधि पातदोषो भवतीति । एवं मघा, आश्लेषा, चित्रा, अनुराधा श्रवण रेवती च अश्विभादितः = अश्विनीनक्षत्रतः गणयेत् = गणना कार्या । एवमेव यः पातसंज्ञकनक्षत्रो भवति तस्मिन्नक्षत्रे विवाहादि शुभं कार्यं त्यजेत् = त्याज्यमिति ।

ज्योति—जिस नक्षत्र में सूर्य हो उस नक्षत्र के पूर्व के नक्षत्र से लग्न के नक्षत्र तक गणना करे । मघा, आश्लेषा, चित्रा, अनुराधा, श्रवण, तथा रेवती को अश्विनी नक्षत्र से गणना करनी चाहिए । इस प्रकार पातसंज्ञक नक्षत्रों में विवाहादि शुभ कार्य नहीं करना चाहिए ।

दिनमुहूर्त्ताधिपाः

रौद्राहिमित्रपितरो वसुवारिविश्वे
वेधा विधिः शतमखः पुरुहूतवह्नी ।
नक्तं चराश्च वरुणार्यमयोर्भगश्च
प्रोक्ता दिनेषु दशपञ्च तथा मुहूर्त्ताः ॥ ६३ ॥

कुन्तला—रुद्रः, अहिः सर्पः, मित्रं, पितरः, वसुः, वारिः, विश्वेदेवाः, ब्रह्मा, इन्द्रः, इन्द्राग्निः राक्षसः, वरुणः, अर्यमा तथा च भगः इमे पञ्चदशाः दिवामुहूर्त्ताधिपाः सन्ति ।

ज्योति—रुद्र, सर्प, मित्र, पितर, वसु जल, विश्वेदेव, ब्रह्मा इन्द्र, इन्द्राग्नि, राक्षस, वरुण, अर्यमा तथा भग ये १५ दिनमुहूर्ताधिपति कहे गये हैं ।

रात्रिमुहूर्त्ताधिपाः—

निशामुहूर्त्ता गिरिशाजपादाहिर्बुध्न्य पूषाश्वियमाग्नयश्च ।
विधातृश्च द्रादितिजीवविष्णुतिग्मद्युतित्वाष्ट्रसमीरणश्च ॥ ६४ ॥

कुन्तला—शिवः, अजपादः, अहिर्बुध्न्यः, पूषा, अश्विनी, यमः अग्निः; विधाता, चन्द्रः, सूर्यः, गुरुः, विष्णु, आदित्यः, त्वष्टा वायुश्च इमे निशामुहूर्त्ताधिपाः सन्ति ।

ज्योति—शिव, अजपाद, अहिर्बुध्न्य, पूषा अश्विनी, यमः, अग्नि;

विधाता, चन्द्र, सूर्य गुरु, विष्णु, आदित्य, त्वष्टा और वायु ये रात्रि के मुहुर्त्ताधिपति कहे गये हैं।

वारवशेन त्याज्यमुहूर्त्ताः—

अर्यम्णोऽर्के तुहिनकिकरणे राक्षसब्राह्मसंज्ञौ।
पित्राग्नेय्यां क्षितिसुतदिने चन्द्रपुत्रेऽभिजिच्च॥
पैत्र्याब्राह्मौ भृगुसुतदिने सर्परक्षश्च जीवे।
भौजङ्गेशौ सवितृतनये वर्जनीयौमुहूर्त्तौ ॥ ६५॥

कुन्तला—अर्के = रविवासरे अर्यमः, सोमे, ब्रह्मराक्षसश्च; भौमे पितृ अग्निश्च, चन्द्रपुत्रे बुधे अभिजित्, गुरौ सर्पराक्षसश्च शुक्रे पितृ ब्राह्मश्च, सवितृतनये = शनिवासरे, भौजङ्गेशौ = सर्पशिवश्च वर्जनीयौ मुहूर्त्तौ भवतः।

ज्योति—रविवार को ययंमा, सोमवार को राक्षस और ब्राह्ममुहूर्त्त मंगल के दिन पितृमुहूर्त्त तथा अग्नि मुहूर्त्त, बुध को अभिजित् शुक्र को पितृ और ब्राह्ममुहुर्त्त, वृहस्पति को सर्प और राक्षस मुहूर्त्त तथा शनिवार को सर्प और शिव मुहूर्त्त त्याज्य हैं।

नक्षत्रदेवताः—

अश्वोयमोऽनलो ब्रह्मा चन्द्रोऽदितिर्गुरुः
सर्पः पितृभगौ चैव अर्यमा च दिवाकरः।
त्वष्टा वायुः कृशान्विन्द्रौ मित्रश्चैव पुरन्दरः॥ ६६॥
निर्ऋतिः सलिलं चैव विश्वेदेवो जनार्दनः।
वसवो वरुणश्चैव तथैव स्यादजैकपात्॥
अहिर्बुध्न्यस्तथा पूषा क्रमान्नक्षत्रदेवताः॥ ६७॥

कुन्तला—अश्विनीकुमारः, यमः, अग्निः, ब्रह्मा, चन्द्रमा, रुद्रः, आदितिः, गुरुः, सर्पः, पितरः, भगः, अर्यमा, सूर्यः, त्वष्टा, वायुः, अग्नीन्द्रश्च, मित्रः, इन्द्रः, निर्ऋतिः, अपः, विश्वेदेवः, विष्णुः, वसुः, वरुणः, अजैकपात्, अहिर्बुध्न्यः, पूषाश्च क्रमान्नक्षत्रदेवताः = अश्विन्यादि नक्षत्रक्रमात् सप्तविंशति नक्षत्राणां देवताः भवन्ति।

ज्योति—अश्विनी कुमार, यम, अग्नि, ब्रह्मा चन्द्रमा, रुद्र, अदिति, गुरु, सर्प, पितर, भग, अर्यम सूर्य त्वष्टा, वायुः, अग्नि और इन्द्र, मित्र इन्द्र,

निऋति, जल, विश्वेदेव, विष्णु, वसु, वरुण, अजैकपात्, अहिर्बुंध्न्य और पूषा ये २७ नक्षत्रों के देवता कहे हैं।

नक्षत्र	देवता
१ अश्विनी	अश्विनी कुमार
२ भरणी	यम
३ कृतिका	अग्नि
४ रोहिंणी	ब्रह्मा
५ मृगशिरा	चन्द्रमा
६ आर्द्रा	रुद्र
७ पुनर्वसु	अदिति
८ पुष्य	गुरु
९ श्लेषा	सर्प
१० मघा	पितर
११ पू० फा	भग
१२ उ० फा०	अर्यम
१३ हस्त	सूर्य
१४ चित्रा	त्वष्टा
१५ स्वाती	वायु
१६ विशाखा	अग्नि और इन्द्र
१७ अनुराधा	मित्र
१८ ज्येष्ठा	इन्द्र
१९ मूल	निऋति
२० पू० षा	जल
२१ उ० षा	विश्वेदेव
२२ श्रवण	विष्णु
२३ धनिष्ठा	वसु
२४ शतभिषा	वरुण
२५ पू० भा	अजैकपात्
२६ उ० भा	अहिर्बुंध्न्य
२७ रेवती	पूषा

कृष्यारम्भमुहूर्त्तः (हलप्रवहणः)—

रेवत्यश्विकरत्रये मृगमघामूलानुराधोत्तरा, ।
ज्येष्ठावासवरोहिणीषु हरिभे पुष्ये विशाखासु च ।
आदित्ये शतमे च सौम्यदिवसे द्व्यंगे वृषे वृश्चिके ।
बीजानां वपनं हलप्रवहणं छेदादिकं शोभनम् ॥ ६८ ॥

कुम्तला—रेवती, अश्विनी, हस्तः, चित्रा, स्वाती।, मृगशिरः, मघा, मूलं, अनुराधा, उत्तरात्रयः, ज्येष्ठा, धनिष्ठाः, रोहिणी, श्रवणः, पुष्यः, विशाखा, पुनर्वसु, शतभिषा च एषु नक्षत्रेषु सोम्यदिवसे = सोमः, बुधः; बृहस्पति तथा शुक्रश्च वारेषु एवं मिथुनः; कन्या, धनुः, मीनः, वृषः तथा वृश्चिकलग्नेषु च बीजवपनः, हलप्रवहणं, छेदादिकं = सस्यकर्त्तनं तथा कृषिसम्बन्धिसर्वाणिकार्याणि शुभाः भवन्ति।

ज्योति—रेवती, अश्विनी, हस्त, चित्रा, स्वाती, मृगशिरा, मघा, मूल, अनुराधा, तीनों उत्तरा, ज्येष्ठा, धनिष्ठा, रोहिणी, श्रवण, पुष्य विशाखा, पुनर्वसु, शतभिषा इन नक्षत्रों में और सोम, बुध, बृहस्पति, तथा शुक्र इन वारों तथा मिथुन, कन्या, धन, मीन, वृष तथा वृश्चिक लग्न में बीज बोना, हलचलाना तथा धान काटना आदि कृषि कर्म शुभ कहे गये हैं। इस प्रकार अन्यत्र भी हलप्रवहण मुहूर्त्त कहे गये हैं जो इस प्रकार हैं—

कृष्यारम्भे (हलप्रवहणे) विशेषः—

"पूर्वाग्नियाम्यफणिचित्र शिवाम्यभेषु रिक्ताष्टमीविगत चन्द्रेतिथि विहाय ।
द्वयङ्गालिगो समुदये विकुजार्किवारे शस्तेन्दुयोगकरणेषु हलप्रवाहः" ॥

धान्यरोपण मुहूर्त्त—

"पूर्वाभाद्रापदामूलं रोहिण्युत्तरफाल्गुनी ।
विशाखाशतभिषामैत्रो धान्यनां रोपणेवरः ॥

धान्यच्छेदनमुहूर्त्त —

"याम्याजपादहिधमानलतोयशक्रचित्रोत्तरोडुषु कुनार्कजवारवर्ज्यम् ।
शस्तेन्दुयोगकरणेषु तिथावरिक्ते धान्यच्छिदः स्थिरचरस्य मृगोदयेषु" ॥

इन तीनों श्लोकों से भी कृषिकर्म मुहूर्त्त जाने जा सकते हैं ।

कृषिकर्मणिशुभतिथयः—

दशम्येकादशी चैव तृतीया च त्रयोदशी ।
सप्तमी पञ्चमी चैव प्रतिपच्च शुभावहा ॥ ६९ ॥

कुन्तला—दशमी, एकादशी; तृतीया, त्रयोदशी, सप्तमी, पञ्चमी तथा प्रतिपच्च कृषिकर्मणि शुभाः भवन्ति ।

ज्योति—दशमी, एकादशी, तृतीया, त्रयोदशी, सप्तमी पञ्चमी और प्रतिपत् ये तिथियाँ कृषिकर्म में शुभ मानी गई हैं ।

कृषिकर्मणि निन्द्यतिथयः वाराः समयश्च—

रिक्ताष्टमीतिथिषु नष्टचन्द्रे क्षीणेन्दु सूर्यार्कजभौमवारे ।
तदंशकेवानिशिसंध्ययोर्वा कृताकृषिः पूर्वधनानिहन्ति ॥ ७० ॥

कुन्तला—रिक्ता = ४, ९, १४ तिथिषु अष्टमी एवं भद्रातिथिषु, क्षीणचन्द्रे तथा सूर्य, शनि भौमवारेषु, तदंशके = सूर्य शनि अथवा भौमस्य-

नवांशे, सन्ध्या एवं रात्रिकाले कृताकृषिः पूर्वधान्यानि विनश्यति अर्थात् नष्टं करोतीति भावः।

ज्योति—रिक्ता, अष्टी, भद्रातिथिः, क्षीणचन्द्र और सूर्य शनि एवं भौमवार या इनवारों के नवमांश में और सन्ध्या या रात्रि में की हुई खेती पूर्वधन को भी नष्ट कर देती हैं।

पराशरमतानुसारेण हलवीजोप्तिस्थानम्—

भाद्रत्रये शरः प्राच्यां याम्यां मार्गत्रये शिरः।
फाल्गुने चैत्रके पश्चाच्छिरा ज्येष्ठात्त्रयोत्तरे ॥ ७१ ॥
ऊर्ध्वभागत्रयं त्यक्त्वा अधोभागद्वयं तथा
मध्ये नाभिं विजानीयादिति प्राणह पराशरः।
यत्र नाभिस्तत्र कुर्यात् हलवीजोप्तिकर्म च ॥ ७२ ॥

कुन्तला—भाद्रत्रये = भाद्रपदे, आश्विने, कार्त्तिके च, शिरः प्राच्याम् = क्षेत्रपतेः शिरः प्राच्यां भवति। मार्गत्रये = मार्गशीर्षे, पौषे तथा माघमासे च, शिरः याम्याम् = क्षेत्रपतेः शिरः दक्षिणे भवति। फाल्गुने, चैत्रके = चैत्रे च, पश्चाच्छिरा = क्षेत्रपतेः शिरः पश्चिमे बोध्यम्। ज्येष्ठात्त्रयोत्तरे = ज्येष्ठ, आषाढ तथा च श्रावण मासे उत्तरे शिरश्च ज्ञेयम्। ऊर्ध्वं भागत्रयं = शिर भागस्य त्रयं भागं तथा च अधोभागद्वयं त्यक्त्वा मध्यं भागं नाभिस्थानं ज्ञेयम्। इयं पराशरस्योक्तिः वर्त्तते। अतः नाभिभागे एवं हलप्रवहणं वीजवपनं च कर्त्तव्यमिति।

ज्योति—भाद्रपद, आश्विन तथा कार्त्तिक मास में क्षेत्रपति का मस्तक पूर्व दिशा में रहता है। अगहन, पौष और माघ मास में क्षेत्रपति का मस्तक दक्षिण दिशा में; फाल्गुन तथा चैत्र मास में पश्चिम तथा ज्येष्ठ, आषाढ एवं श्रावण मास में क्षेत्रपति का मस्तक उत्तर दिशा में रहता है। मस्तक के तरफ के तीन भाग और नीचे के दो भाग छोड़कर मध्य भाग को नाभि स्थान समझना चाहिए। ऐसा पराशर का वचन है। इसलिए जहाँ नाभि भाग हो वहाँ ही हल कर्म और वीजवपन कर्म करना चाहिए।

हलचक्रविचार—

रामरामाग्निपञ्चाग्नि पञ्चरामौ शुभाशुभम्।
अर्कोज्झिताच्च नक्षत्राल्लांगलं चक्रमीरितम् ॥ ७३ ॥

कुन्तला—अर्कोज्झितात् = यस्मिन्नक्षत्रे सूर्यो भवति तस्य नक्षत्रस्य पूर्वनक्षत्रतः वर्तमाननक्षत्रावधिः तृतीयः, तृतीयः, तृतीयः, पञ्चमः, तृतीयः, पुनः पञ्चमः तृतीयः तृतीयश्च नक्षत्राणि क्रमेण शुभाशुभानि कथितानि सन्ति।

ज्योति—सूर्य जिस नक्षत्रपर हो उसके पूर्व नक्षत्र से वर्तमान दिन नक्षत्र तक उससे तीसरा, तीसरा तीसरा, पांचवां, तीसरा, पुनः पांचवां, तीसरा, तीसरा नक्षत्र क्रम से शुभाशुभ कहे गए हैं।

हलचक्र—

फल	शुभ	अशुभ	शुभ	अशुभ	शुभ	अशुभ	शुभ	अशुभ
नक्षत्र	३	३	३	५	३	५	३	३

बीजोप्तिचक्रम्—

राहुभादष्टकं यावद् द्वादशं षोडशं तथा।
विशन्मितं तथा चाग्ये वेद संख्यास्त्यजेद्वुधः ॥ ७४ ॥

कुन्तला—यस्मिन्नक्षत्रे राहुर्भवेत् तस्मात् दिननक्षत्रं यावत् अष्टमं, द्वादशं विंशश्च तथैवान्ते च, वेद संख्यास्त्यजेद् वुधः = चतुर्णां नक्षत्राणां त्यागो विधेयं विद्वद्भिः। अर्थात् एषु वीजवपनं न कर्त्तव्यमिति।

ज्योति—जिस नक्षत्र पर राहु हो उस नक्षत्र से दिन नक्षत्र तक गिनें, इसमें आठवां, बारहवां, तथा वीसवां और अन्त के चार नक्षत्र वीजवपन में अशुभ कहे गए हैं।

प्रकारान्तरेण विजोप्तिचक्रं राहुभाद्दिनभावविधि—

८	३	१	३	१	३	१	३	४
अशुभ	शुभ	अशुभ	शुभ	अशुभ	शुभ	अशुभ	शुभ	अशुभ

शुभाशुभ दिवसविचारः—

सोमसौम्यगुरुशुक्रवासराः सर्वकर्मसु भवन्ति सिद्धिदाः।
भानुभौमशनिवासरेषु च प्रोक्तमेव खलु कर्म सिद्ध्यति ॥७५॥

कुन्तला—चन्द्रः, बुधः गुरुः, शुक्रश्च दिवसाः सर्वकर्मसु सिद्धिप्रदाः भवन्ति। सूर्यभौमशनिवारेषु च, प्रोक्तमेव = कथितकार्याणि एवं सिध्यन्ति।

ज्योति—सोम, बुध, बृहस्पति और शुक्र ये दिन शुभकर्मों में सिद्धिदायक माने गए हैं। रवि, मंगल और शनि इसमें कहे हुए ही कर्म सिद्ध होते हैं।

वस्त्रधारण एवं नवान्नभक्षणमुहूर्त्तौ—

रेवत्यां करपञ्चकाश्विवसुभे वस्त्रं बुधादित्रये
पुंसां पुष्यपुनर्वसूत्तरयुता रोहिण्यपि श्रेयसा।
एतेष्वेव नवान्नमत्र च मृगो विष्णोश्च भं शस्यते
चन्द्रार्कावपि मीनगौयुवतिभिः सार्द्धं तथा मन्मथैः ॥७६॥

कुन्तला—रेवत्यां = रेवतीनक्षत्रे, करपञ्च = हस्तनक्षत्रतः पञ्चनक्षत्राणि अर्थात् हस्त, चित्रा, स्वाती, विशाखा, अनुराधा, अश्वि = अश्विनीनक्षत्रे; वसुभे=धनिष्ठा नक्षत्रे, पुष्य, पुनर्वसु, उत्तरात्रये तथा रोहिण्यां च; बुधादित्रये= बुध, बृहस्पति शुक्रवासरेषु पुंसां = नराणां नवीनवस्त्रधारणं शुभं भवति। एतेष्वेव=एषु दिवसेषु तथा मृगशीर्षे श्रवणे च नवान्नभक्षणं शुभं भवति। परन्तु यदा सूर्यचन्द्रौ मीन, कन्यामिथुनराशौ भवेतां तदैव, शस्येत = नवान्नभक्षणं श्रेष्ठो वाच्यम्।

ज्योति—रेवती, हस्त, चित्रा, स्वाती, विशाखा, अनुराधा, अश्विनी, धनिष्ठा, पुष्य, पुनर्वसु, ये तीनों उत्तरा, तथा रोहिणी इन नक्षत्रों और बुध, बृहस्पति तथा शुक्र वारों में पुरुषों को नवीन वस्त्र धारण करना चाहिए इन्हीं दिनों तथा मृगशिरा और श्रवण नक्षत्र में भी नवीन अन्न खाना शुभ होता है। परन्तु नवीन अन्न का भोजन तब श्रेष्ठ होता है, जब चन्द्रमा तथा सूर्य, मीन, कन्या या मिथुन राशि के हों।

वृक्षारोपणमुहूर्त्तः—

हस्ताश्विपुष्यमृगवासवरोहिणीषु
चित्रोत्तरानिऋतिमित्रविशाखभेषु ।
पूषासु पादपविधिः शुभदो नराणां
वारेषु चन्द्रबुधभार्गववाक्पतीनाम् ॥ ७७ ॥
द्व्यङ्के स्थिरेतनौ चापि शुभः केन्द्र त्रिकोणगैः ।
पापैस्त्रिषड्दशायस्थैः वृक्षारोपणं हितम् ॥ ७८ ॥

कुन्तला—हस्तः, अश्विनीः, पुष्यः, मृगशिरः, धनिष्ठा, रोहिणी, चित्रा, उत्तरात्रयः, मूलं, अनुराधा तथा विशाखासु सोम, बुध, शुक्र, गुरुवासरे च द्विस्वभाव तथा स्थिरलग्नेषु, शुभग्रहाः केन्द्र, त्रिकोण अर्थात् लग्न, चतुर्थ, सप्तम तथा दशम स्थानेषु तथा च नवमपञ्चमेषु च स्थिते सति शुभाः भवन्ति । एवमेव पापग्रहाः तृतीये, षष्ठे, दशमें तथा च एकादशे विद्यमाने सति वृक्षारोपणं शुभं भवतीति बोध्यम् ।

ज्योति—हस्त, अश्विनी, पुष्य. मृगशिरा, धनिष्ठा, रोहिणी चित्रा; तीनों उत्तरा, मूल, अनुराधा तथा विशाखा नक्षत्रों में सोम, बुध, शुक्र, एवं गुरु वगर को, द्विस्वभाव और स्थिर लग्नों में से किसी भी लग्न, में शुभग्रह लग्न, चतुर्थ, सप्तम, दशम, नवम् और पञ्चम स्थान में स्थित हों और पापग्रह तृतीय षष्ठ, दशम एवं एकादश स्थान में स्थित हो तो वृक्ष लगाना शुभदायक होता है ।

नृपतिमिलनमुहूर्त्तः—

चित्रोत्तरावैष्णवधातृपूषापुष्यश्रविष्ठाश्विमृगानुराधाः ।
शुभाश्च तारातिथिवारयोगा महीवतीनां शुभदर्शनं स्यात् ॥७९॥

कुन्तला—चित्रा, उत्तरात्रयः, श्रवणः, रोहिणी, रेवती पुष्यः, धनिष्ठा; अश्विनी, मृगशिरा तथा चानुराधा नक्षत्रे तारा, तिथि वार एवं योगश्च शुभ सति नृपदर्शनं शुभं भवतीति ।

ज्योति—चित्रा, तीनों उत्तरा, उत्तरा, श्रवण, रोहिणी, रेवती, पुष्य, धनिष्ठा, अश्विनी, मृगशिरा, और अनुराधा नक्षत्रों में तथा तारा, तिथि; वार एवं योग के शुभ होने पर राजाओं का दर्शन शुभ कहा गया है ।

मद्यारम्भमुहूर्त्तः—

मघावरुणपूर्वासु मूलार्द्राभरणीषु च ।
पौरुहूते च सार्पे च मद्यारम्भः शुभावहः ॥ ८० ॥

कुन्तला—मघा, वारुणः = शतभिषा, पूर्वासु = पूर्वात्रयेषु मूलं, आर्द्रा, भरणी, ज्येष्ठा तथा आश्लेषा एषु नक्षत्रेषु मद्यारम्भो शुभो भवतीति ।

ज्योति—मघा,शतभिषा, तीनों पूर्वा, मूल, आर्द्रा, भरणी, ज्येष्ठा, तथा आश्लेषा नक्षत्रों में मद्यपान आरम्भ करणा शुभप्रद होता है ।

पशूनां क्रयविक्रयमुहूर्त्तः—

वाताद्वयेचादितिभद्वये च वसुद्वये पौष्ण युगे च सौम्ये ।
शक्ति च मूले पितृभे शुभेऽह्नि कुर्यात् पशूनां क्रयणं गमं च ॥८१॥

कुन्तला—वातद्वये = स्वाती विशाखा च; रेवती, अश्विनी, मृगशिरः, ज्येष्ठा, मूलं, मघा च नक्षत्रेषु शुभदिनेषु च पशूनां क्रयविक्रयं च शुभं भवति ।

ज्योति—स्वाती, विशाखा, रेवती, अश्विनी, मृगशिरः, ज्येष्ठा, मूल और मघा इन नक्षत्रों तथा शुभदिनों में पशुओं का खरीदना, वेचना शुभ होता है ।

क्रयर्क्षे विक्रमो नेष्टो विक्रयर्क्षे क्रयोऽपि च ।
पौष्णाम्बु पाश्विनीवातश्रवश्चित्रा क्रये शुभाः ॥ ८२ ॥

कुन्तला—क्रयर्क्षे विक्रयं विक्रयर्क्षे च क्रयं शुभं न भवति । रेवती, शतभिषा, अश्विनी, श्रवणः चित्राश्च नक्षत्राणि क्रयकार्ये शुभाः भवन्ति ।

ज्योति—खरीदने के नक्षत्र में वेचना और वेचने के नक्षत्र में खरीदना अच्छा नहीं होता । रेवती शतभिषा, अश्विनी, श्रवण और चित्रा ये नक्षत्र क्रयकार्य में शुभ होते हैं ।

विपणिमुहूर्त्तः—

कुम्भराशिमपहाय साधुषु द्रव्यकर्म भवभूर्तिवर्तिषु ।
अव्ययेष्वशुभदायिषूद्गमे भार्गवे विपणिरिन्दुसंयुते ॥ ८३ ॥

कुन्तला—कुम्भराशिं विहाय शुभग्रहाः २, १०, ११, स्थानेषु तिष्ठेयुः तथा च पापग्रहाः द्वादशं विहाय शेषभावेषु विद्यमाने सति तथा च लग्ने चन्द्रेण सह शुक्रो विराजते तदा विपणि कार्यं कर्त्तव्यमिति ।

ज्योति—कुम्भ राशि को छोड़ कर शुभग्रह २, १० ११ वें घर में बैठे हों और पापग्रह बारहवें घर को छोड़ कर शेष घरों में हों और लग्न में चन्द्रमा के साथ शुक्र हों तो दूकान खोलना उत्तम होता है ।

गजाश्वदोलादिकर्ममुहूर्त्तः—

हस्तत्रये दैत्यरिपुत्रये च पूषाश्विजीवादितिचन्द्रमेव ।
ज्ञशुक्रचन्द्रार्कबृहस्पतीनां दोलेभवाजीन्द्रविधिः प्रशस्तः ॥ ८४ ॥

कुन्तला—हस्तत्रये = हस्तः, चित्रा, स्वती । दैत्यारिपुत्रये = श्रवणः, धनिष्ठ, शतभिषा । पूषा = रेवती, अश्वि = अश्विनी, तथा पुष्यः, पुनर्वसु एवं मृगशिरश्च तथा बुध, शुक्र, चन्द्रः, गुरुवासरे दोलाकर्म, गजाश्वविधिश्च प्रशस्तो भवति ।

ज्योति—हस्त, चित्रा, स्वाती, श्रवण, धनिष्ठा शतभिषा रेवती, अश्विनी, पुष्य, पुनर्वसु और मृगशिरा नक्षत्र और बुध शुक्र, सोमवार, बृहस्पति वार तथा रिक्ता को छोड़कर अन्य तिथियों में दोलाकर्म हाथी को बाँधने का कार्य और घोड़ा सम्बन्धी सभी कार्य शुभ होते हैं ।

शस्त्रधारणमुहूर्त्तं—

दास्रस्वातिचतुष्ट्येऽद्रितियुगे चित्रोत्तरापूषभे
रोहिण्यां गुरुभार्गवार्कदिवसे योगे तिथौ शोभेन ।
लग्ने गोघटसिंहरन्ध्रभवने शुद्धे विधौ शोभने
सन्नाहादि समस्तशस्त्रनिचयो राज्ञो हिता धारिता ॥ ८५ ॥

कुन्तला—दास्रः = अश्विनी । स्वातिचतुष्टये = स्वाती, विशाखा, एवं ज्येष्ठा च । अदितियुगे = पुनर्वसुपुष्यश्च । चित्रा, उत्तरात्रयः, पुषभे = रेवती, रोहिणी, एषु नक्षत्रेषु गुरु, शुक्र, रविवासरेषु च शुभतिथौ योगे च, बृषे, कुम्भे तथा च सिंहलग्ने एवं, रन्ध्रे = अष्टमे भवने, शुद्धे = अर्थात् शुभग्रहाः अष्टमस्थानरहिते सति, विधौ शोभने = चन्द्रशुद्धौ अर्थात् ४, ८, १२ स्थान-

रहितचन्द्रः; सन्नाहादि = कवचादि, समस्तशस्त्र निचयो = समतास्त्रं च। राज्ञो हिताः धारिताः = नृपस्याज्ञानुसारेण धारणीयमिति।

ज्योति—अश्विनी, स्वाती, विशाखा, अनुराधा, ज्येष्ठा, पुनर्वसु, पुष्य, चित्रा, तीनों उत्तरा रेवतो तथा रोहिणी नक्षत्रों में, वृहस्पति, शुक्र, और रविवार को शुभतिथि और शुभयोग में, वृष, कुम्भ तथा सिंह लग्नों में अष्टमभाव शुद्ध तथा चन्द्र की शुद्धि अर्थात् ४, ८, १२ स्थानों पर चन्द्रमा के न रहने पर 'कवचादि सभी शस्त्र राजा की आज्ञा से धारण किये जा सकते हैं।

वापी–कूपतडागादि जलाशयखनन तथा नृत्यारम्भ मुहूर्त्तः—

मित्रार्कद्वयवासवाम्बुपमघातो यान्त्यपुष्येन्दुभिः
पापैर्हीनबलैस्तनौ सुरगुरौ ज्ञे वा भृगौ खे विधौ।
आप्ये सर्वजलाशयस्य खननं व्यम्भोमघैः सेन्द्रभै-
स्तैनृत्यं हिबुके शुभेस्तनुगृहे ज्ञेऽब्जेज्ञराशौ शुभम् ॥ ८६ ॥

कुन्तला—मित्रः = अनुराधा, अर्कद्वय=हस्तः, चित्रा, वासवः = धनिष्ठा, अम्बुप = शतभिषा, मघा, तोयः = पूर्वाषाढ़ा, अन्त्यः = रेवती। पुष्य, इन्द्रः = मृगशीर्षश्च एषु नक्षत्रेषु, पापैः हीनबलैः = पापग्रहस्य निर्बलत्वे, तनौ= लग्ने, सुरगुरौ ज्ञे वा = गुरुः बुधो वा, भृगौरखे = दशभस्थः शुक्रः। विधौ आप्ये = चन्द्रस्य जलचरराशिस्थिते सति, सर्वजलाशयस्य खननं शुभो भवति। व्यम्भोमघैः सेन्द्रभैः = पूर्वाषाढ, मघा तथा च शतभिषं विहाय उक्त नक्षत्रेषु, हिबुके शुभे = चतुर्थस्थाने शुभग्रहस्य विद्यामानत्वात्, तनुगृहे ज्ञे = लग्ने बुधस्थे सति, अब्जे = चन्द्रस्य, ज्ञे = बुधस्य, ज्ञराशौ = कन्या मिथुनस्थे सति नृत्यारम्भो शुभो भवतीति बोध्यम्।

ज्योति—अनुराधा, हस्त, चित्रा, रोहिणी धनिष्ठा, शतभिषा, मघा पूर्वाषाढ़ा, रेवती पुष्य तथा मृगशिरा नक्षत्र में पापग्रह के निर्बल होने तथा लग्न में बृहस्पति अथवा बुध के स्थित होने पर और शुक के दशवें तथा चन्द्रमा के जलचर राशि में रहते वापी, कूप, तड़ागादि जलाशयों का खोदना शुभ होता है। जलाशय के खोदने में जो नक्षत्र कहे गए हैं और उनमें पूर्वाषाढ़, मघा, और शतभिषा को छोड़कर सभी नक्षत्रों में चतुर्थ स्थान में

शुभग्रह के रहते, लग्न में बुध के होने पर तथा चन्द्रमा और बुध के मिथुन तथा कन्या राशि में स्थित होने पर नृत्यारम्भ करना उत्तम होता है।

भूमिशयनविचारः—

प्रद्योतनात्पञ्चनगाङ्कसूर्य-
नवेन्दुषड्विंशमितेषु भेषु।
शेते मही नैव गृहं विधेयं
तडागवापीखननं न सस्तम् ॥ ८७ ॥

कुन्तला—प्रद्योतनात् = यस्मिन् राशौ सूर्यो तिष्ठति तस्मात् नक्षत्रात्। दिननक्षत्रावधि पर्यन्तं यदि नक्षत्र संख्यापञ्च. नग = सप्त, अङ्कः = नव, सूर्यं= द्वादशाशः; नवेन्दुः = उनविंशति, षड्त्रिशमितेषु = षड्विंशतिसंख्याकः, भेषु := नक्षत्रेषु अर्थात् सूर्यनक्षत्रतः दिननक्षत्रपर्यन्तं यदि गणनयाः नक्षत्रसंख्या, ५, ७, ९, १२, १९, एवं २६ भवेत्तदा भूमिशयनमिति वाच्यम्। भूमिशयनकालेगृहनिर्माणं वापीः, तड़ागः, कूपादिखननं शुभो न भवतीति बोध्यम्।

ज्योति—जिस किसी नक्षत्र पर सूर्य हो उस नक्षत्र से यदि दिन नक्षत्र पांचवां, सातवां, नवां, वारहवां उन्नीसवां, तथा छब्बीसवां नक्षत्र हो तो उस दिन पृथ्वी शयन करती है। पृथ्वी के शयन के समय गृहनिर्माण और तड़ाग, वावली आदि खुदवाना अच्छा नहीं होता।

सेवाकर्ममुहूर्त्त—

रोहिण्युत्तरपौष्णेषु वसुवारुणयोरपि।
सेवयेत् स्वामिना भृत्यः शुभवारोदये तिथौ ॥ ८८ ॥
स्ववर्गं द्विगुणं कृत्वा परवर्गेण योजयेत्।
वसुभिश्च हरेद्भागं योऽधिकः स ऋणी भवेत् ॥ ८९ ॥

कुन्तला—रोहिणी, उत्तर = उत्तरात्रयेषु, पौष्णे = रेवती नक्षत्रे, तथा च घनिष्ठा, शतभिषा, च एषु नक्षत्रेषु शुभवार लग्नतिथिषु च स्वामिसेवा शुभो भवति। एवमेव स्ववर्गं द्विगुणीकृत्य अन्यस्य च वर्गं योज्य अष्टमि; भक्ते सति यस्य संख्याधिकाः भवन्ति सः ऋणी भवतीति।

ज्योति—रोहिणी, तीनों उत्तरा रेवती, घनिष्ठा और शतभिषा इन

इन नक्षत्रों में शुभवार, शुभ लग्न और शुभतिथि में सेवक को स्वामी की सेवा करना शुभ होता है।

अपने वर्ग को दूना कर उसमें दूसरे के वर्गसंख्या जोड़कर ८ का भाग देने पर जिसकी संख्या अधिक हो वही ऋषी होता है।

स्वामिसेवकवर्गविचारः—

अक्चटपतयशवर्गाः खगेशमार्जारसिंहशुनाम्।
सर्पाखुमृगावीनां निजपञ्चमवैरिणामष्टौ ॥ ९० ॥

कुन्तला—अकचटपयशवगः = अवर्गः, कवर्गः, चवर्गः, टवर्गः, तवर्गः, पवर्गः, यवर्गः, शवर्गाश्च अष्टौ वर्गा भवन्ति। प्रत्येकस्य क्रमेण गरुड़ः, मार्जारः, सिंहः, श्वानः, सर्पः, मूषकः, मृगः, मेढाश्च स्वामिनः भवन्ति। एषु पञ्चमो शत्रु भवति। यथा—गरुड़ः सर्पस्य, मार्जारः मूषकस्य, सिंहः मृगस्य तथा च श्वानः मेषस्य च।

ज्योति—अवर्ग, कवर्ग, चवर्ग, टवर्ग, तवर्ग, पवर्ग, यवर्ग और शवर्ग ये ८ वर्ग कहे गए हैं। इन वर्गों के क्रमशः गरुड़, मार्जार सिंह, कुत्ता, सर्प, मूषक, मृग और भेड़ा स्वामी होते हैं। इसमें ५ वाँ वर्ग एक दूसरे का वैरी है। जैसे—गरुड़ सर्प का, मार्जार मूषक का, सिंह मृग का और श्वान मेष का परस्पर वैर रहता है।

नौकानिर्माण एवं संचालनमुहूर्त्तों—

त्रिषूत्तरासु रोहिण्यां मृगपुष्यकरे वसौ
मैत्राहिवारुणे पैत्र्ये पोतकर्मापि शस्येत।
शुक्र गुरभौमवारेषु नौकर्म परमं·शुभम् ॥ ९१ ॥

कुन्तला—उत्तरात्रयः, रोहिणी, मृगः, पुष्यः, हस्तः, धनिष्ठः, अनुराधा, आश्लेषाः, शतभिषजि मघायां च नौकानिर्माणं संचालनञ्च शुभो भवति।

ज्योति—तीनों उत्तरा रोहिणी, हस्त, मृगशिरा, पुष्य, धनिष्ठा, अनुराधा, आश्लेषा, शतभिषा, और मघा इन नक्षत्रों में नौका का बनाना और चलाना आदि कर्म शुभ होते हैं। शुक्र, बृहस्पति और मंगलवार को नौका कर्म अत्यन्त शुभ होता है।

वीराभिचारमुहूर्त्तौ—

मूलाद्र्रा भरणीपित्र्यमृगे सौम्ये घटे तनौ।
सुखे शुक्रेऽष्टमे शुद्धे सिद्धिर्वीराभिचारयोः ॥ ९२ ॥

कुन्तला—आर्द्रा, भरणीः, मघा, मृगशिरसि च नक्षत्रेषु कुम्भलग्ने, सौम्ये शुक्रे = बुधे; शुक्रे च; सुखस्थे सति अष्टमे, शुद्धे = ग्रहरहिते विराभिचारयोः कर्मयोः कर्त्तव्यमिति।

ज्योति—आर्द्रा, भरणी, मघा, मृगशिरा इन नक्षत्रों और कुम्भ लग्न में बुध और शुक्र को सुख स्थान अर्थात् चतुर्थ भाव में रहने पर और अष्टम भाव के शुद्ध अर्थात् ग्रहवर्जित होने पर वीर और अभिचार कर्म उत्तम होता है।

औषधिग्रहणमुहूर्त्तः—

हस्ताश्विपूषगुरुवासवमूलमैत्रे
चित्रादितीन्दुहरिवारूणवायुभेषु।
वारेषु सूर्य बुधभार्गववाक्पतीनां
भैषज्यभक्षणविधिः शुभदोनराणाम् ॥ ९३ ॥

कुन्तला—हस्तः, अश्विनी, रेवती, पुष्यः, धनिष्ठाः, मूलं, अनुराधा, चित्रा, पुनर्वसु मृगशिरः, श्रवणः, शतभिषजि तथा स्वाती एषु नक्षत्रेषु सूर्यं, बुध, शुक्र गुरुवासरेषु औषधिभक्षणं शुभो भवति।

ज्योति—हस्त, अश्विनी, रेवती, पुष्य, धनिष्ठा, मूलं, अनुराधा, चित्रा, पुनर्वसु, मृगशिरा. श्रवण, शतभिषा तथा स्वाती इन नक्षत्रों और सूर्य, बुध; शुक्र तथा वृहस्पति इन वारों में औषधि सेवन करना शुभदायक होता है।

रोगवियुक्तस्यानमुहूर्त्तः—

पूर्वासजीवशिववह्निहरित्रयेषु
शूलाश्विवार्द्धकिद्विदैवतमित्रभे।
वारं च भूमितनयार्कजवाक्पतीनां
स्नानं शुभं भवति रोगबिमुक्तकानाम् ॥ ९४ ॥

कुन्तला—पूर्वात्रयः, पुष्यः, आर्द्रा, कृतिका, श्रवणः, धनिष्ठा, शतभिषा,

अश्विनी, चित्रा, विशाखा, तथा अनुराधा, एषु नक्षत्रेषु भौम, शनैश्चर एवं बृहस्पतिवारेषु रोगविमुक्तस्नानं शुभं भवति ।

ज्योति—तीनों पूर्वा, पुष्य, आर्द्रा, कृतिका, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, अश्विनी, चित्रा, विशाखा, तथा अनुराधा इन नक्षत्रों तथा मंगल, शनैश्चर तथा बृहस्पति इन वारों में रोगविमुक्त स्नान शुभ कहा गया है ।

कोषसंग्रहमुहूर्त्तः—

रौद्रश्रवणपुष्येन्दु मैत्रवासववारुणम् ।
त्रीण्युत्तराणि हस्तश्च कोषसंग्रहणे शुभाः ॥ ९५ ॥

कुन्तला—आर्द्रा, श्रवणः, पुष्यः, मृगशिरः, अनुराधा, धनिष्ठा, शतभिषः, उत्तरात्रयः, तथा च हस्तश्च नक्षत्राणि कोषसंग्रहणे शुभानि भवन्ति ।

ज्योति—आर्द्रा, श्रवण, पुष्य, मृगशिरा, अनुराधा, धनिष्ठा, शतभिषा, तीनों उत्तरा तथा हस्त ये नक्षत्र कोष अर्थात् खजाना संग्रह करने में शुभदायक होते हैं ।

आरामजलाशयसुरप्रतिष्ठामुहूर्त्तः—

जलाशयाराम सुरप्रतिष्ठासौम्यायने जीवशशांकशुक्रे ।
दृश्ये मृदुक्षिप्रचरध्रुवे स्यात् पक्षे सिते स्वर्क्ष तिथिक्षणेवा ॥९६॥
रिक्तारवर्जे दिवसेऽतिशस्ताः
शशांकपापैस्त्रिभवांगसंस्थै ।
व्यन्त्याष्टगैः सत्खचरै मृगेन्द्रे
सूर्योघटेको युवतौ च विष्णुः ॥ ९७ ॥
शिवो नृयुग्मे द्वितनौ च देव्यः
भद्राश्चरे सर्व इमे स्थिरर्क्षे ।
पुष्येग्रहा विघ्नपयक्ष सर्प-
भूतादयोऽन्त्ये श्रवणेऽजिनश्च ॥ ९८ ॥

कुन्तला—जलाशय = वापी, कूप तडागादि एवं सुरप्रतिष्ठा, सौम्यायने= उत्तरायणे सवितरि गुरुः, चन्द्रः एवं शुक्रग्रहाणां, दृश्ये = उदिते सति, मृदु, क्षिप्रचर एवं ध्रुवसंज्ञकनक्षत्रेषु शुक्ले पक्षे, स्वर्क्षतिथिक्षणे वा = अथवा यस्य

देवस्य प्रतिष्ठा कर्त्तव्यमस्ति तस्य देवस्य, तिथि, वार एवं नक्षत्रेषु प्रतिष्ठा शोभनं भवति ।

एवं च रिक्तातिरिक्ततिथिषु भौमवारं विहाय अन्येषु; चन्द्रेण सह पापाः लग्नात् तृतीयेकादशे, तथा शुभाश्च अष्टमद्वादशे न भवेयुः तदा देवप्रतिष्ठा-शुभदो भवतीति । एतदतिरिक्तं सूर्यस्य प्रतिष्ठासिंहलग्ने, ब्रह्मणः कुम्भे, विष्णोः कन्यालग्ने, शिवस्य मिथुन लग्ने तथा च दुर्गायाः द्विस्वभावसंज्ञक लग्नेषु, चतुर्षष्ठियोगिनीनां प्रतिष्ठा मेष, कर्क तुला तथा मकरलग्नेषु च कर्त्तव्यम् । अन्येषां देवानां प्रतिष्ठा वृष, सिंह वृश्चिक तथा कुम्भलग्ने च कर्त्तव्यम् । विघ्नप = गणेश, यक्ष, सर्प तथा भूतादिकाना प्रतिष्ठा रेवती नक्षत्रे अजिनश्च = बुद्धस्य प्रतिष्ठाश्रवणर्क्षे शुभो भवतीति बोध्यम् ।

ज्योति—वापी अर्थात् बावली, कूप तथा तड़ागादि की प्रतिष्ठा, उपवन का उत्सर्ग तथा विष्णु शिव की प्रतिष्ठा उत्तरायण सूर्य तथा बृहस्पति, चन्द्रमा और शुक्र इनके उदय में, मृगशिरा, रेवती, चित्रा, अनुराधा, हस्त, अश्विनी, पुष्य, अभिजित्, स्वाती, पुनर्वसु, श्रवण, तीनों उत्तरा तथा रोहिणी (अर्थात् मृदु, क्षिप्र, चर, एवं ध्रुवसंज्ञक) नक्षत्रों में शुक्ल पक्ष में करना चाहिए । अथवा जिन-जिन देवताओं की प्रतिष्ठा करनी हो उन्हीं के तिथि, वार, एवं नक्षत्रों में करनी चाहिए । रिक्ता से भिन्न तिथि और मंगलवार को छोड़कर अन्य दिनों में चन्द्रमा के साथ पापग्रहों को, लग्न से तीसरे ग्यारहवें और शुभग्रहों को बारहवें तथा आठवें स्थानों को छोड़कर अन्य स्थानों में स्थित रहने पर देवताओं की प्रतिष्ठा उत्तम होती है । इसके अतिरिक्त सूर्य की प्रतिष्ठा सिंह लग्न में ब्रह्मा की प्रतिष्ठा कुम्भ लग्न में, विष्णु की प्रतिष्ठा कन्या लग्न में, शिव की प्रतिष्ठा मिथुन लग्न में, दुर्गाको प्रतिष्ठा द्विस्वभाव संज्ञक लग्नों में, चौसठ योगिनियों की प्रतिष्ठा मेष, कर्क, तुला, तथा मकर इन लग्नों में करनी चाहिए । इसके इतर देवताओं की प्रतिष्ठा वृष, सिंह, वृश्चिक और कुम्भ लग्न में करना चाहिए । गणपति, यक्ष, सर्प तथा भूतादिकों की प्रतिष्ठा रेवती नक्षत्र में; और बुद्ध भगवान् की प्रतिष्ठा श्रवण नक्षत्र में करना उत्तम होता है ।

नवीनफलादिभक्षणमुहूर्त्तः—

मूलाश्विमैत्रकरपुष्यकरीन्द्रभेषु
पौष्णोत्तरात्रयपुनर्वसुवासवेषु ।
वारेषु भूमितनयार्कज वर्जितेषु
ताम्बूलनूतनफलाद्यशनं हितं स्यात् ॥ ९९ ॥

कुन्तला—मूलं, अश्विनीः, अनुराधा, हस्तः, पुष्यः, श्रवणः, ज्येष्ठा, रेवती, उत्तरात्रयः पुनर्वसु, तथा च धनिष्ठा एषु नक्षत्रेषु भौमशनिरहित, वारेषु ताम्बूलं एवं नूतनफलभक्षणं शुभकारको भवति ।

ज्योति—मूल, अश्विनी, अनुराधा, हस्त, पुष्य, श्रवण, ज्येष्ठा, रेवती, तीनों उत्तरा, पुनर्वसु तथा धनिष्ठा इन नक्षत्रों में, मंगल शनि से वर्जित द्रिनो में ताम्बूल ओर नवीनफल आदि का भक्षण उत्तम होता है ।

ऋणदानं ऋणग्रहणं च मुहूर्त्तौ—

स्वात्यादित्यमृदुद्विदैवगुरुभे कर्णत्रयाश्वे चरे
लग्नेधर्मसुताष्टशुद्धिसहिते द्रव्यः प्रयोगः शुभः ।
आरे ग्राह्यमृणं तु संक्रमदिने वृद्धौ करेऽह्नि-
यत्तद्वंशेषु भवेद्दणं न च बुधे देयं कदाचिद्धनम् ॥ १०० ॥

कुन्तला—मूलं, स्वाती, पुनर्वसु, मृगशिरः, चित्रा, विशाखा एवं पुष्यश्च एषु नक्षत्रेषु धर्मः = नवमः, सुतः = पञ्चमः, अष्टमशुद्धिसहिते = अष्टमश्च शुद्धे सति, चरेलग्ने = मेष-कर्क-तुला-एवं मकरलग्नेषु, द्रव्यप्रयोगः= ऋणप्रदानं शुभो भवतीति । आरे = भौमवारः, संक्रमदिने = संक्रान्तिदिने, वृद्धौ = वृद्धियोगे; करे = हस्तनक्षत्रे, अह्नि = रविवासरे ऋणं न ग्रहणीयम् । यः उक्तनक्षत्रवारयोगेषु ऋणग्रहणं करोति तस्य वंशेषु ऋणं भवेत् । बुधे = बुधवासरे ऋणं कदापि न देयमिति ।

ज्योति—मूल, स्वाती, पुनर्वसु, मृगशिरा, रेवती, अनुराधा, विशाखा ओर पुष्य इन नक्षत्रों ओर नवम, पञ्चम तथा अष्टम इन स्थानों में शुद्धिसहित चरलग्न अर्थात् मेष, कर्क, तुला, ओर मकर लग्नो में अर्थात् लग्न से नवम, पञ्चम तथा अष्टम भाव में शुभ तथा पापग्रहों के न होने पर ओर चर

लग्न में ऋण देना शुभ है। मंगलवार, संक्रान्ति, वृद्धियोग, हस्तनक्षत्र एवं रविवार को ऋण नहीं लेना चाहिए; क्योंकि इन दिनों में लिया हुआ ऋण ऋणी के वंशभर में फैल जाता है। इसके अलावे बुधवार को ऋण कभी भी नहीं देना चाहिए।

भूषाघट्टनमुहूर्त्त —

त्रिपुष्कराभिधे योगे ऽयुत्तरे रेवतीद्वये।
श्रुतित्रये मृगे पुष्ये पुनर्वस्वनुराधयोः ॥ १०१ ॥
हस्तत्रयेऽथ रोहिण्यां भूषा कार्या शुभऽह्नि च।

कुन्दला—त्रिपुष्कराभिधे योगे = त्रिपुष्करयोगे, त्र्युत्तरे = उत्तरात्रये, रेवतीद्वये = रेवती एवं अश्विनीः। श्रुतित्रये = श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषः; मृगे = मृगशीर्षः, पुष्यः एवं पुनर्वसु, अनुराधा च। अथ = अनन्तरम् हस्तत्रये= हस्त, चित्रा एवं स्वाती। रोहिण्यां = रोहिणी नक्षत्रे च, शुभऽह्नि = शुभदिवसेषु, भूषाकार्या = आभूषणनिर्नाणं कर्त्तव्यमिति।

ज्योति—त्रिपुष्कर योग, तीनों उत्तरा, रेवती, अश्विनी, श्रवण, शतभिषा, मृगशिरा, पुष्य पुनर्वसु, अनुराधा, तथा हस्त, चित्रा, स्वाती तथा रोहिणी इन नक्षत्रों में, शुभवारों में आभूषण बनवाना उत्तम होता है।

रत्नयुक्तभूषानिर्माणमुहूर्त्तः —

कृतिकादित्रये हस्तपञ्चके रेवतीद्वये ॥ १०२ ॥
श्रुतित्रये पुनर्वस्वौ पुष्यभे चोत्तरात्रये।
कुजेऽर्के रत्नयुक्भूषाघट्टनं शुभवासरे ॥ १०३ ॥

कुन्तला—कृतिकादित्रये = कृतिका, रोहिणी, मृगशिरः। हस्तपञ्चके = हस्त, चित्रा, स्वाती, विशाखा एवं अमुराधा। रेवतीद्वये = रेंवती, अश्विनी। श्रुतित्रये = श्रवण, घनिष्ठा, शतभिषः। पुनर्वसु एवं पुष्य उत्तरात्रययेषु च कुजेऽर्के = रविभौमवासरे; रत्नयुक्तभूषानिर्माणं शुभदो भवति।

ज्योति—कृतिका, रोहिणी, मृगशिरा, हस्त, चित्रा, स्वाती, विशाखा, अनुराधा, रेवती, अश्विनीं, घनिष्ठा, श्रवण, शतभिष, पुनर्वसु पुष्य तीनों उत्तरा इन नक्षत्रों में रत्नयुक्त आभूषण निर्माण उत्तम होता है।

रजतमुक्तावज्र युक्ताभूषणनिर्माणमुहूर्त्तः—

रत्नयुकभूषणं ऋक्षे विशाखाकृत्तिकां विना ।
शुक्रेज्ये भूषणं रौप्यं वज्रमुक्तामयं हि सत् ॥ १०४ ॥

कुन्तला—विशाखाकृतिकां विहाय उपर्युक्तनक्षत्रेषु गुरुशुक्रे च रजतमुक्तावज्रयुक्ताभूषणनिमाणं चोत्तमो भवतीति वाच्यम् ।

ज्योति—विशाखा और कृतिका को छोड़कर रत्नयुक्त भूषण गढ़ाने में जो नक्षत्र ऊपर कहे गए हैं, उस नक्षत्रों में गुरु व शुक्रवार के दिन चाँदी, मोती तथा हीरे का आभूषण वनवाना उत्तम होता है ।

स्वर्णादिभूषाधारणमुहूर्त्तः—

रेवत्यां वासवे दास्रे तथा हस्तादिपञ्चके ।
नारीणां बुधशुक्रार्के गुरौ स्वर्णादिधारणम् ॥ १०५ ॥

कुन्तला—रेवती, धनिष्ठा, अश्विनी, हस्तः चित्रा, स्वाती, विशाखा एवं अनुराधा एषु नक्षत्रेषु बुध शुक्र, रवि, गुरुवासरेषु नारीणां स्वर्णादि धारणं शोभनं भवति ।

ज्योति—रेवती; धनिष्ठा, अश्विनी, हस्त, चित्रा, स्वाती, विशाखा एवं अनुराधा इन नक्षत्रों में बुध, शुक्र, सूर्य तथा वृहस्पति इन दिनों में स्त्रियों को सुवर्णादि के आभूषण धारण करना चाहिए ।

सूचीकर्ममुहूर्त्तः—

मृगचित्रानुराधाश्विपुष्यान्ते रोहिणकरैः ।
ज्येष्ठासद्वासराः सार्काः सूचीकर्मणि सम्मताः ॥ १०६ ॥

कुन्तला—मृगशिरः, चित्रा. अनुराधा, अश्विनी पुष्यः, रोहिणीः, हस्तः ज्येष्ठाश्च एषु नक्षत्रेषु, सार्काः सद्वासराः = रविवारसहितं शुभवासराः सूचीकर्मणि शुभाः भवन्ति ।

ज्योति—मृगशिरा, चित्रा, अनुराधा, अश्विनी पुष्य, रोहिणी हस्त और ज्येष्ठा इन नक्षत्रों तथा रविवार के सहित सभी अन्य शुभ वारों में वस्त्र सिलाना उत्तम होता है ।

वस्त्ररंजनमुहूर्त्तः—

पुनर्वसु द्वये हस्तपञ्चके श्रवण द्वये ।
अश्विभेऽर्कें कवीज्यारे वाससीं रंजनं शुभम् ॥ १०७ ॥

कुन्तला—पुनर्वसुद्वये = पुनर्वसु', पुष्यः । हस्तपञ्चके, = हस्तः, चित्रा, स्वाती, विशाखा एवं अनुराधा । श्रवणद्वय = श्रवण, धनिष्ठा; अश्वि = अश्विनी नक्षत्रें चेति तथा रवि, शुक्र, गुरु एवं भौमवासरे वस्त्ररंजनं शुभं, वाच्यम् ।

ज्योति—तुनर्वसु, पुष्प, हस्त, चित्रा, स्वाती विशाखा, अनुराधा, श्रवण धनिष्ठा, तथा अश्विनी नक्षत्र सूर्यं, शुक्र, गुरु तथा भौमवार को वस्त्र रंगाना उत्तम होता है ।

श्वेतपीतकर्वुंरक्तवस्त्रधारणमुहूर्त्तः—

शुक्ले वस्त्रोक्तभे धार्यं रवौ शुक्रे गुरौ बुधे ।
विशुक्रे कर्वुं पीतं सभौमे रक्ताम्बरम् ॥ १०८ ॥

कुन्तला—वस्त्रोक्तभे = कथितवस्त्रधारणनक्षत्रेषु; रवि, शुक्र, गुरु तथा बुधवासरेषु शुक्लवस्त्रधारणं शुभं भवति । विशुके = शुक्रं विधय अन्येषु दिनेषु, कर्वुंः = विभिन्नरङ्गमिश्रितवस्त्रं पीतवस्त्रं च धारणं शुभं भवति । एवमेव भौमवासरे रक्ताम्वरं धारणं शोभनं वाच्यम् ।

ज्योति—वस्त्रधारण में जो नक्षत्र कहे गए हैं, उन्हीं नक्षत्रों में, रवि, शुक्र, गुरु तथा बुधवार को सफेद वस्त्र धारण करना शुभ होता है । शुक्रवार को छोड़कर और दिनों में कई रंग के मिले तथा पीत वस्त्र धारण करना शुभ है । लाल वस्त्र मंगलवार को धारण करना अत्युत्तम माना गया है ।

कृष्णवस्त्रधारणमुहूर्त्तः—

पुनर्वसुधनिष्ठाख्याश्विभे हस्ताच्चतुष्टये ।
पूर्वोत्तेर शनौ सूर्ये नीलं कृष्णाम्बरं शुभम् ॥ १०९ ॥

कुन्तला—पुनर्वसु, धनिष्ठा, अश्विनी । हस्ताच्चतुष्टये = हस्त, चित्रा, स्वाती, विशाखा, । पूर्वोत्तरे = पूर्वात्रिये, उत्तरात्रये च । शनौ = शनिवासुरे,

सूर्ये = रविवासरे च। नीलं = नीलवस्त्रं; कृष्णाम्बरं = कृष्णवस्त्रं धारणं शुभं भवति।

ज्योति—पुनर्वसु, धनिष्ठा, अश्विनी, हस्त, चित्रा, स्वाती, विशाखा, तीनों पूर्वा, और तीनों उत्तरा इन नक्षत्रों में शनि और रविवार को नीला और काला वस्त्रधारण करना उत्तम होता है।

कौशेयवस्त्रधारणमुहूर्त्तः—

अश्विनी रेवती हस्ते रोहिण्यां श्रवणद्वये।
पूर्वोत्तरपुनर्वस्वोः स्वात्यां पुष्यमघाभिधे॥
खौचन्द्रे गुरौ धार्यं कौशेयं वसनं जनः॥ ११०॥

कुन्तला—अश्विनीः, रेवती, हस्तः, रोहिणीः श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषः, पूर्वत्रियः, उत्तरात्रयः, पुनर्वसु, पुष्यः तथा च मघा एषु नक्षत्रेषु रवि, सोम, गुरौ कौशेयवसनं धार्यमिति।

ज्योति—अश्विनी, रेवती, हस्त, रोहिणी, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, तीनों पूर्वा, तीनों उत्तरा, पुनर्वसु, पुष्य तथा मघा इन नक्षत्रों में रवि, सोम और गुरुवार के दिन रेशमीवस्त्र पहनना चाहिए।

सुवर्णतन्तुसंमिश्रं वासो धार्यं रवौ कुजे।
रजततन्तु विशुक्रेऽब्जे वस्त्रधारणभे शुभम्॥ १११॥

कुन्तला—सुवर्णतन्तुमिश्रित वस्त्र रवौ भौमे च धार्यम्। एवं रजततन्तुवस्त्रं च शुक्रशनिं विहाय अन्येषु दिवसेषु तथा वस्त्रोक्तधारणनक्षत्रेषु शुभं भवति।

ज्योति—सोने के तार के वस्त्र रविवार तथा भौमवार को और चाँदी के तार के वस्त्र शुक्र तथा शनिवार को छोड़कर अन्य दिनों तथा वस्त्रोक्त नक्षत्रों में पहनना शुभ होता है।

आवश्यके वस्त्रधारणमुहूर्त्तः—

राज्ञाप्रीत्यार्पितं वस्त्रं विवाहे चोत्सवादिषु।
तथा विप्राज्ञया धार्यं निन्द्ये धिष्ण्येऽपि वासरे॥ ११२॥

कुन्तला—प्रेम्णा राज्ञा प्रदत्तं वस्त्रं अथवा विवाहे उत्सवादिषु च विप्राज्ञया, निन्द्ये धिष्ण्येऽपिवासरे = निन्दितनक्षत्रवासरेषु च धार्यम्

ज्योति—राजा द्वारा प्रेम से जो वस्त्र दिया जाय या विवाह उत्सवसादि में तथा ब्राह्मण की आज्ञा से मुहूर्त्त न हो तो भी वस्त्र धारण करना चाहिए ।

नववस्त्रविकृतिफलम्—

वस्त्रस्य नवधा भागे चतुष्कोणे तु देवताः ।
मध्ये त्र्यंशास्थितं रक्षो नराः पार्श्वदशांशयोः ॥ ११३ ॥
दग्धे जीर्णे नवे वस्त्रं लिप्तं वा कर्दमादिभिः ।
ज्ञेयं रक्षांशके नष्टं शुभं देवनरांशके ॥
सर्वप्रान्त्येष्व सच्चैव शयनासनपादुके ॥ ११४ ॥

कुन्तला—सुगमः

ज्योति—यदि नवीनवस्त्र के पहनते ही उसमें कोई विकार उत्पन्न हो जाय तो उसका नवभाग करके उसके चारों कोने में देवता, मध्य में राक्षस, बगल में मनुष्य, स्थित करके यदि इन अंशों में नवीन वस्त्र जल जाय अथवा कीचड़ आदि से सन जाय तो देवांश में शुभ और राक्षशांश में अशुभ समझना चाहिए । इसी प्रकार खटिया और पादुका (खड़ाऊँ) का भी विचार करना चाहिए ।

नववस्त्रप्रक्षालनमुहूर्त्तः—

पुनर्वसु द्वयेऽश्विन्यां धनिष्ठाहस्तपञ्चके ।
हित्वाऽर्कार्किबुधान् रिक्ताषष्ठीं श्राद्धदिनं तथा ॥
व्रते पर्वणि वस्त्राणि न क्षालयेद्रजादिना ॥ ११५ ॥

कुन्तला—पुनर्वसुद्वये = पुनर्वसु, पुष्यः । अश्विनीः; धनिष्ठा, हस्तपञ्चके = हस्तः, चित्रा, स्वाती, विशाखा, अनुराधा एषु नक्षत्रेषु रविः शनिः बुधं विहार्य अन्येषे वारेष् वस्त्रप्रथालन शुभं भवति । एवं च रिक्तातिथिः, षष्ठीः, श्राद्धदिनं व्रत एवं पर्वदिनं नवीनवस्त्रप्रक्षालने वर्जितमस्ति ।

ज्योति—पुनर्वसु, पुष्य, अश्विनी, धनिष्ठा हस्त, चित्रा, स्वाती,

विशाखा तथा अनुराधा, इन नक्षत्रों में रवि, शनि और बुधवार को छोड़कर अन्य वारों में वस्त्र धुलवाना शुभ होता है। इसी प्रकार ४, ९, १४, ६, तिथिओं श्राद्ध दिन व्रत तथा पर्व के दिन नये वस्त्र धुलाना वर्जित माना गया है।

पञ्चकविचारः—

वासवोत्तरदलादिपञ्चके याम्यदिग्गमनगेहगोपनम् ।
प्रेतदोहतृणकाष्ठसंग्रहं शय्यकावितननं च वर्जयेत् ॥ ११६ ॥

कुन्तला—वासवोत्तर दलादिपञ्चके=घनिण्ठोत्तरं समारभ्य पञ्चनक्षत्राणि अर्थात् घनिष्ठा (उत्तरार्द्धतः), शतभिषा, पू० भा०, उ० भा० एवं रेवती एषुनक्षत्रेषु दक्षिण दिग्यात्रा, गृहछाजनं, प्रेतदाहः, तृणकाष्ठ संग्रहः, शय्यानिर्माणं च, वर्जयेत् अर्थात् न कर्त्तव्यमिति ।

ज्योति—घनिष्ठा, नक्षत्र के उत्तरार्द्ध से लेकर पांच नक्षत्रों में दक्षिण दिशा की यात्रा, घर छाना, मुर्दा जलाना, तृण तथा काष्ठ का संग्रह करना और खाट बुनना इन कार्यों को न करें।

खट्वांगचक्रम्—

सूर्यर्क्षात् चतुष्कञ्च देयं धिष्ण्यं तु मस्तके ।
कोणयोरष्टनक्षत्रं शाखायामष्टसंख्यकम् ॥ ११७ ॥
खट्वांगमध्ये त्रिकं चैव वेदसंख्या च पादयोः ।
इति खट्वांगफलं चक्रं ज्ञेयं तत्र शुभाऽशुभम् ॥ ११८ ॥

कुन्तला—सूर्यनक्षत्रतः चत्वारि नक्षत्राणि मस्तके, अश्टौ नक्षत्राणि कोणेषु, अष्टौ शाखाषु, त्रिणि नक्षत्राणि मध्ये, चत्वारि नक्षत्राणि पादयोः एवं खटवांगचकेण शुभाशुभ फलं बोध्यम् ।

ज्योति—सूर्य के नक्षत्र से लेकर चार नक्षत्र मस्तक पर, आठ नक्षत्र कोनों में, आठ नक्षत्र शाखाओं में, तीन नक्षत्र मध्य में, चार नक्षत्र पावों में रखें। पुनः अधोलिखित खट्वांग चक्र के अनुसार फल जानें।

खट्वांशचक्रफलम्—

मस्तके च शुभं ज्ञेयं कोणयोरष्ट मृत्युदम् ।
शाखाष्टार्थं शुभं प्रोक्तं त्रिकं मध्ये सुखप्रदम् ॥ ११९ ॥
पादेषु वेद नक्षत्रं हानि भृत्युभयप्रदम् ।
सूर्यभाद्दिनभं गण्यं खट्वांगचक्रे सुशोभने ॥ १२० ॥

कुन्तला एवं ज्योति टीका निम्नलिखित चक्रेण स्पष्टं भवति ।

खट्वांगचक्र—

सूर्य न०	४	८	८	३	४
अङ्ग	मस्तक	कोण	शाखा	मध्य	पाद
फलम्	शुभ	मृत्यु	शुभ	मृत्यु	हानि

काष्ठगोमयादिसंचयमुहूर्त्तः—

सूर्यर्क्षाद्रसभैरधः स्थलगतैः पाको रसैः संयुतः
शीर्षे युग्ममितैः शवस्य दहनं मध्ये युगैः सर्पभीः ।
प्रागाशादिषु वेदभैः स्वसुहृदां स्यात्सङ्गमो रोगभीः
क्वाथादेः करणं सुखं च गदितं काष्ठादि संस्थापने ॥ १२१ ॥

कुन्तला एवं ज्योति टीका-अधोलिखितचक्रेण स्पष्टं भवति ।

काष्ठादिसंचयमुहूर्त्तचक्र

६	२	४	४	४	४	४	नक्षत्र
रस	शव	सर्प	सुहृद्				
पात्र	दाह	भय		रोग	भय	सुख	फल

नक्षत्रताराज्ञानम्—

त्रित्र्यंगपञ्चाग्निकुवेदवह्नयः शरेषुनेत्राश्विशरेन्दुभूकृताः ।
वेदाग्निरुद्राश्वियमाग्निवह्नयोऽब्धयः शतं द्विद्विरदा भतारकाः ॥१२२॥

भतारकाः = अश्विन्यादिनक्षत्राणां तारका भवन्ति । अधोलिखितचक्रानुसारेण 'कुन्तला' एवं 'ज्योति'टीका-स्पष्टं भवति ।

नक्षत्र	तारा	नक्षत्र	तारा	नक्षत्र	तारा
अश्विनी	३	मघा	५	मूल	११
भरणी	३	पू. फा.	२	पू० षा०	२
कृत्तिका	३	उ. फा.	२	उ० षा०	१
रोहिणी	५	हस्त	५	अभि० श्रवण	३
मृगशिरा	३	चित्रा	१	धनिष्ठा	३
आर्द्रा	१	स्वातो	१	शतभिषा	१०२
पुवर्वसु	४	विशाखा	४	पू० भा०	२
पुष्य	२	अनुराधा	४	उ० भा०	१
आश्लेषा	५	ज्येष्ठा	३	रेवती	३२

अश्विन्यादिनक्षत्राणां स्वरूपकथनम्—

अश्वादि रूपं तुरगास्ययोनिः क्षुरोनपणास्यमणिगृहं च ।
पृषत्कचक्रे भवनं चमञ्चः शय्या करोमौक्तिक विद्रुमं च ॥१२३॥

तारणं बलिनिभं च कुण्डलं सिंह पुच्छगजदन्तमञ्चकाः ।
त्यस्त्रिचत्रिचरणाभमर्दलौवृत्तमञ्चयमलाभमर्दलाः ॥ १२४ ॥

'कुन्तला' एवं 'ज्योतिः' टीका-अधोलिखितचक्रेण स्पटं भवति ।

Central Sanskrit University
LIBRARY
Rajiv Gandhi Campus
208475

अश्विन्यादिनक्षत्राणां स्वरूप चक्रम्—

नक्षत्र	स्वरूप	नक्षत्र	स्वरूप	नक्षत्र	स्वरूप
अश्विनी	अश्वमुख	मघा	भवन	मूल	सिंहपुच्छ
भरणी	भग	पू० फा०	चमन	पू० षा०	हाथीदाँत
कृत्तिका	नाई के छूरे	उ० फा०	शय्या	उ० षा०	खटिया
रोहिणी	गाड़ी	हस्त	हाथ	अभिजित् श्रवण	त्रिकोणाकार त्रिचरण
मृगशिरा	हरिणमुख	चित्रा	मोती	धनिष्ठा	मृदङ्ग
आर्द्रा	मणि	स्वाती	कार्मुक	शतभिषा	वर्तुलाकार (गोला)
पुनर्वसु	घर	विशाखा	तोरण	पू० भा०	मञ्च
पुष्यः	बाण	अनुराधा	भात के ढेर	उ० भा०	यमलाकार
आश्लेषा	चक्राकारः	ज्येष्ठा	कुण्डल	रेवती	मृदङ्ग

राशिघटिकाज्ञानम्—

तरणेर्व्योममध्यस्थं नक्षत्रं च नगोनितम् ।
नखघ्नं नवभिर्भक्तं रात्रौ च गतनाडिका ॥ १२५ ॥

कुन्तला—सूर्यनक्षत्रात् समारभ्य, व्योममध्यस्थं नक्षत्रं = आकाशस्य मध्यभागे स्थितनक्षत्रं यावत् यत् संख्या भवति तन्मध्ये सप्तोनिते सति (नगोनितम्) यच्छेषं विंशतिभिः संगुण्य नवभिर्भक्तम् । भजनेन यच्छेषं समायाति तावदेव गतरात्रिघटिकाविज्ञेया ।

ज्योति—सूर्य नक्षत्र से लेकर आकाश के मध्य भाग में जो नक्षत्र हो उसमें ७ घटा दें । जो शेष बचे उसको २० से गुणा करने से जो आवे उसमें ९ का भाग दे; जो शेष बचे उतना ही घड़ी रात बीती हुई जानें ।

दिवसघटिका ज्ञानम्—

पादच्छाया रसोपेता शशिनेत्रेन्दुकान् भजेत्।
लब्धांके घटिका ज्ञेया शेषं पलमिहोच्यते ॥ १२६ ॥

कुन्तला—पादच्छाया रसोपेता = स्वपादस्य छायायां षड्भिः युक्ते सति यद् मानमायाति तन्मध्ये, शशिनेत्रेन्दुकान् = एकविंशत्यदधिकशतं भाजनेन यावन्मितं भागफलं भवति तावन्मितं घटीपलं दिवसघटिका बोध्येति ।

ज्योति—अपनी पाँव की छाया में छः जोड़ कर एक सौ इक्कीस का भाग देने पर जो लब्धि होगी वही घटी पल के रूप में दिवस घटिका कही जायेगो ।

दिनप्रमाणानयनम्—

अयनाद्दिवसा दलिता वसुपञ्चकैर्युताः ।
दशाप्ता घटिका ज्ञेया शेषं पलमिहोच्यते ॥ १२७ ॥

कुन्तला—अयनाद्दिवसा = कर्कस्यायनसंक्रान्तेः यस्य दिनस्य दिनप्रमाणं ज्ञातव्यं भवति तस्य संख्या त्रिज्ञाय, दलिता = अर्द्धिता कार्या । तन्मध्ये, वसुपञ्चकैर्युता = अष्टपञ्चाशदधिक शतं (२५८) योज्यम् । योगेकृते सति तद् मानमायाति तेषां दशभिर्भक्ते सति यल्लब्धिर्भवति तावती घटिका एव उत्तरायणस्य (कर्कसंक्रातेः) दिनमानघटिका भवति । एवमेव दक्षिणायने तावती घटिकारात्रिमानं विज्ञेयम् ।

ज्योति—कर्क की अयन संक्रन्ति से जिस दिन का प्रमाण जानना हो तो कर्क से लेकर व्यतीत दिवसों का आधा करें । उसमें दो सौ अट्ठावन जोड़ दें, फिर दस का भास देने से जो लब्धि मिले उतनी घटिका उत्तरायण के दिनमान की होती है और दक्षिणायन हो तो उतनी ही घड़ी रात्रिमान जानना चाहिए । शेष पल होते हैं ।

वारप्रवृतिर्ज्ञानम्—

पादोनरेखापरपूर्वयोजनैः पलैर्युतोनास्तिथयो दिनार्धतः ।
ऊनाधिकास्तद्विवरोद्भवैः पलैरूर्द्ध्वं तथाधो दिनपप्रवेशनम् ॥१२८॥

कुन्तला—'लङ्कोज्जयिनी कुरूक्षेत्रादि देशान् स्पृशत् सुमेरूपर्यन्तं गता रेखा-सा मध्यरेखा भुवः' भास्करोक्त्या मध्यरेखायाः परिभाषा कथ्यते अर्थात् लंका, उज्जयिनी, कुरुक्षेत्रादिदेशान् स्पृशत् सुमेरूपर्वतपर्यन्तं यच्छूत्रं तमेव मध्यरेखादेश इति कथ्यते। यस्य देशस्य वारप्रवृतिः ज्ञातव्या तस्य देशस्य पूर्वेपश्चिमे वा यावद् योजनमानं समामाति तन्मध्ये तस्यैव चतुर्थांश शोधनेन यद्‌मानं मिलति सैव पलात्मकमिष्टं भवति। रेखादेशतः पश्चिमदंशे १५ योज्याः तथा पूर्वदेशे च १५ ऊनाः कार्या। यदि एवं कृतेसति मानं दिनार्द्धतुल्यं भवति तदा सूयोदयकाले तथा यदि न्यूनमधिकं च भवति तदा उभयोरन्तरं कृत्वा पलात्मकमन्तरं न्यूनं भवेत्तदा तावन्मितं सूर्योदयस्य पश्चात् तथा अधिकञ्चेत् तावन्मितं सूर्योदयस्य पूर्वं वारप्रवृतिर्भवति।

ज्योति—लंका से लेकर उज्जैन पूरी, कुरुक्षेत्रादि देशों का स्पर्श करता हुआ सुमेरु पर्वत पर्यन्त जो सूत्र है उसके नीचे जितने देश बसते हैं सब पृथ्वी की मध्य रेखा कहे जाते हैं। जिस देश की वारप्रवृत्ति जाननी हो वह देश उक्त रेखा देश से पूर्व या पश्चिम जितने योजन पर हो उस योजन में उन्हीं का चतुर्थांश घटाकर जितने शेष रहे उन्हें पल मानकर उसका इष्ट देश यदि रेखा देश से पश्चिम हो तो १५ जोड़ दें और पूर्व हो तो १५ घटा दें। यदि वे जुड़े व घटाये हुए (१५ इष्ट) दिनार्द्ध के बराबर हो तो सूर्योदय काल ही में और यदि कम या ज्यादा हो तो दोनों का अन्तर करके उस अन्तर के जितने पल हों, यदि कम हों तो उतने हीं पल सूर्योदय के पर अर्थात् पश्चात् समझें। यदि अधिक हों तो उतने ही पल सूर्योदय के पूर्वं वार प्रवृति होती है। उदा०—जैसे कुरुक्षेत्र रेखा देश से लखनऊ ४८ योजन पूर्व हैं। इन योजनों का चतुर्थांश १२ इसे ४८ योजन में घटाया तो शेष ३६ पल हुए। उक्त योजनों के पूर्व होने के कारण इन ३६ पलों को १५ इष्ट घटी में घटाया तो १४।२४ शेष रहे। इनको इष्ट दिनार्द्ध १७।२ से न्यून होने के कारण इन दोनों के अन्तर के बराबर सूर्योदय के पूर्व वार प्रवृत्ति लखनऊ में जानना चाहिए। प्राचीन आचार्य लोग लङ्का में सूर्योदय होने को ही वार प्रवृत्ति मानते हैं। इसलिए भास्कराचार्य ने लिखा है—

लंकानगर्यामुदयाच्च भानोस्तस्यैव वारे प्रथमं बभूव ।
मधोः सितादेर्दिनमासवर्षयुगादिकानां युगपत् प्रवृत्तिः ॥

इसलिए अपने-अपने देश से सूर्योदय काल से लङ्का का सूर्योदय काल का ज्ञान इस श्लोक से किया जाता है ।

मेषादि राशीनां दण्डादयः—

त्र्यब्धयः प्रमिता मेषे नाड्यश्चापि त्रयः स्मृता ।
वृषे वेद घटी प्रोक्ता पलाश्चैव त्रयोदश ॥ १२९ ॥
यमे पञ्चाब्धयः कर्के पश्चाद्द्व्यब्धिमितास्तथा ।
तथा च सिंहे वाणाश्चपञ्चाब्धय इतिरिताः ॥ १३० ॥
पञ्चदण्डाश्चकन्याया वाणरामपलानि च ॥ १३१ ॥

उपर्युक्तश्लोकानां 'कुन्कला' एवं 'ज्योति' टीका निम्नलिखित चक्रेण स्पष्टं भवति ।

मेषादिराशीनां घटीपलात्मकपरिमाणकोष्टकम्—

मे.	वृ.	मि.	क.	सि.	क.	तु.	वृ.	ध.	म.	कु.	मी.	रा.
३	४	५	५	५	५	५	५	५	५	४	४	घ.
४१	१३	४	४२	४५	३५	३५	४५	४२	४	१३	४१	प.

* * *

अथ गर्भाधानादिसंस्कारप्रकरणम्

रजोदर्शनानन्तरं स्नानमुहूर्त्तः—

हस्तानिलाश्वि मृगमैत्रवसुध्रुवाख्यैः
शक्रान्वितैः शुभतिथौ शुभवासरे च ।
स्नायादथार्त्तववती मृगपौष्ण वायु-
हस्ताश्विधातृभिररं लभते च गर्भम् ॥ १३२ ॥

कुन्तला—हस्तः, स्वातीः, अश्विनीः, मृगः, अनुराधा, जनिष्ठा, उत्तरात्रयः, रोहिणीः, ज्येष्ठाश्च एषु नक्षत्रेषु रिक्ता, अमा, र्वजितशुभतिथि—वारे अर्थात् बुधे, गुरौ एवं शुक्रे च रजस्वलायाः स्नानं शुभं भवति । यदि मृगशीर्षः, रेवतीः, स्वाती, हस्तः, अश्विनी तथा च रोहिणी नक्षत्रेषु रजस्वलायाः स्नानेन शीघ्रगर्भधारणं भवतीति बोध्यम् ।

ज्योति—हस्त, स्वाती, अश्विनी, मृगशिरा, अनुराधा, धनिठा, तीनों उत्तरा रोहिणी और ज्येष्ठा इन नक्षत्रों में रिक्ता तथा अमावस्या को छोड़कर शुभ तिथि, शुभवार, को रजस्वला का स्नान करना शुभ होता है। यदि मृगशिरा रेवती, स्वाती, हस्त अश्विनी रोहिणी इन नक्षत्रों में रजस्वला स्नान करे तो शीघ्र ही गर्भवती हो जाती है ।

गर्भाधानमुहूर्त्तः—

गण्डान्तं त्रिविधं त्यजेनिधनभं जन्मर्क्ष-मूलान्तकं
दास्रं पौष्णमथोपरागदिवसान् पातं वैधृतिम् ।
पित्रोः श्राद्धदिनं दिवा च परिधाद्यर्द्धं स्वपत्नीगमे
भात्युत्पातहतानि मृत्युभवनं जन्मर्क्षतः पापभम् ॥ १३३ ॥

कुन्तला—त्रिविधं गण्डान्तम् = तिथि. नक्षत्र तथा लग्न एषु त्रिविध-गन्डान्तेषु, निधनभम् = अष्टमतारा, जन्मर्क्षं = जन्मनक्षत्रं, मूलं, भरणी, रेवती, एवं मघा नक्षत्रेषु, ग्रहणदिनं, व्यतिपात एवं वैधृतियोगे, मातापित्रोः श्राद्ध दिनम्, दिवाकाले, परिघयोगस्य पूर्वार्द्धे, भौमान्तरिक्ष उत्पात रहित

दिनेषु, जन्मराशि एवं जन्मलग्नादष्टमलग्नं तथा च पापग्रहयुक्तनक्षत्राणि, स्वपनीगभे त्यजेत् = गर्भाधाने त्याज्यमिति ।

ज्योति—गर्भाधान में तिथि नक्षत्र तथा लग्न इन तीनों गण्डान्तों, अष्टमतारा, जन्मतारा, मूल, भरणी अश्विनी, और मघा इन नक्षत्रों में ग्रहणदिन व्यतीपात एवं वैधृति, माता पिता का श्राद्धदिन के समय परिघयोग का पूर्वार्द्ध, जो नक्षत्र दिव्य भौमान्त रिक्ष इन तीन प्रकार के उत्पातों से दूषित, जन्मराशि या जन्म लग्न से अष्टम लग्न और पापग्रह युक्त नक्षत्र या लग्न त्याग देना चाहिए । इन दोषों को त्याग कर अन्य समय में मनुष्य को गर्भाधान करना चाहिए ।

भद्राषष्ठी पर्वरिक्ताश्च संध्या भौमार्कार्कीनाद्यरात्रीश्चतस्रः ।
गर्भाधानं त्र्युत्तरेन्द्वर्कमैत्रब्राह्मस्वाती विष्णुवस्वम्बुपे सत् ।। १३४ ।।

कुन्तला—भद्रा, षष्ठीतिथिः पर्वतिथिः, रिक्तातिथिः, सन्ध्याकालः, भौमवारः, शनिवारः तथा च रजोदर्शनस्य आदौ चत्वारि दिनानि गर्भाधाने अवश्यमेव त्याज्यम् । उत्तरात्रयः मृगशीर्षः, हस्त, अनुराधा, रोहिणी, श्रवणः धनिष्ठा तथा शतभिषश्च एषु नक्षत्रेषु गर्भाधानं भवति ।

तथा च

केन्द्रत्रिकोणेषु शुभैश्चपापैस्त्र्यायारिगैः पुङ्ग्रह दृष्टलग्ने ।
ओजांशगेऽब्जेऽपि च युग्मरात्रौ चित्रादितिज्याश्विषुमध्यमं स्यात् १३५

कुन्तला—शुभग्रहाः केन्द्रे त्रिकोणे वा स्थिताः भवेयुस्तदा; तथा च पापग्रहाः तृतीयएकादशे तथा षष्ठभावेषु विद्यमाने सति यदि; पुङ्ग्रहः = भौम, सूर्य तथा गुरुश्च पश्येयुस्तथा चन्द्रस्य विषमराशेः नवांशे गतेसति प्रथम रात्रिचतुष्टयं विहाय षोडशरात्रिपर्यन्तं समरात्रीषु गर्भाधानं शुभं भवति । एवं चित्रा, पुनर्वसु पुष्य तथा अश्विनी एषु नक्षत्रेषु गर्भाधानं मध्यमं बोध्यम् ।

ज्योति—जब शुभग्रह केन्द्र तथा त्रिकोण संज्ञक स्थानों, पर स्थित हों और पापग्रह ३, ११, तथा ६ स्थानों के स्थित हों, और पुरुषग्रह अर्थात् मंगल, सूर्य और गुरु इनसे देखे जाते हुए लग्न में और चन्द्रमा के विषम

राशियों के नवमांश में होने पर तथा पहली चार रात्रि को छोड़कर सोलह रात्रि पर्यन्तसमरात्रियों में गर्भाधान करना चाहिए। चित्रा, पुनर्वसु, पुष्य तथा अश्विनी इन नक्षत्रों में गर्भाधान मध्यम कहा गया है।

मासेश्वरा सितकुजेज्य रवीन्दुसौ-
रिचन्द्रात्मजास्तनुपचन्द्र दिवाकराः स्युः।
स्त्रीणां विधोर्वल मुशन्ति विवाहगर्भ-
संस्कारयोरितरकर्मसु भर्त्तुरेव ॥ १३६ ॥

कुन्तला—सितः = शुक्रः, कुजः = भौमः, इज्यः = गुरुः, रविः, इन्द्रः = चन्द्रः, सौरिः = शनिः, चन्द्रात्मजा = बुधश्च क्रमणे मासेश्वराः भवन्ति। एवमेव अष्टममासस्याधिपतिः, तनुपः = गर्भाधानलग्नाधिपतिः, नवममासस्य चन्द्रः तथा दशमासस्य सूर्यो भवतीति। विवाह. गर्भाधान, सीमन्त, तथापुंसवनादिषु स्त्रीणां चन्द्रबलं विचारणीयम्। इतरकर्मसु च भर्त्तुः चन्द्रबलं विचार्यम्।

ज्योति—गर्भाधान से प्रसूतिमास तक अर्थात् दसों महीनों के क्रम से, शुक्र, मंगल गुरु, रवि, चन्द्र, शनि, बुध गर्भाधानलग्नाधीश, चन्द्र तथा सूर्य क्रमशः दसों महीने अधिपति कहे गए हैं। विवाह, गर्भाधान, सीमन्त तथा पुन्सवनादि गर्भसंस्कार, में स्त्रियों का भी चन्द्रबल विचार करना चाहिए। इसके अलावे अन्य कार्यों में भर्त्ता का ही चन्द्रबल देखना चाहिए।

सीमन्त पुंसवनतथा विष्णुपूजनमुहूर्त्तः—

जीवार्कारदिने मृगेज्यनिॠति श्रोतादितिब्रह्मभे;
रिक्तामार्करसाष्टवर्ज्यतिथिभिर्मासाधिपे पीवरे।
सीमन्तोऽष्टम षष्ठमासि शुभदैः केन्द्रत्रिकोणेखलै-
र्लाभारित्रिषु वा ध्रुवान्त्यसदने लग्ने च पुमांशके ॥ १३७ ॥

कुन्तला— गुरुः, रविः, तथा भौमवासरेषु, मृगशीर्षः, पुष्यः, मूलं, श्रवणः, तथा हस्तश्च एषु नक्षत्रेषु, रिक्ता (४, ९, १४); एवं अष्टमीतिथि विहाय, एवं च मासपतेः प्रबले सति, अष्टमे षष्ठे मासे वा, शुभग्रहाः केन्द्रे (१, ४, ७, १०) त्रिकोणे (९, ५) स्थिते सति, पापग्रहाः एकादश, षष्ठ,

तथा तृतीय भावे विद्यमानत्वात् रोहिणी, उत्तरात्रये रेवत्यां शुभदिने लग्ने वा, एवं लग्नस्य नवांशे, विषमराशिः यदा भवेत् तदा सीमन्तो शुभो भवति ।

ज्योति—गुरु, रवि तथा मंगल इन दिनों में और मृगशिरा, पुष्य, मूल श्रवण, हस्त, नक्षत्रों, रिक्ता और अष्टमी तिथि को छोड़कर मासपति के बली होने पर अष्टम तथा षष्ठ मास में जबकि शुभग्रह केन्द्र (१, ४, ७, १०) और त्रिकोण (९, ५) भाव में स्थित हैं ; पापग्रह ग्यारहवें छठे तथा तीसरे भाव में स्थित हों तो रोहिणी तीनो उत्तरा तथा रेवती नक्षत्र हो और किसी शुभग्रह का दिन हो लग्न तथा लग्न के नवांश में विषमराशि हो तव सीमन्त कर्म करना चहिए ।

पूर्वोदितैः पुंसवनं विधेयं मासे तृतीयेत्वथविष्णुपूजा ।
मासेऽष्टमे विष्णुविधातृजीवैर्लग्नेशुभे मृत्युगृहेच शुद्धे ॥ १३८ ॥

कुन्तला—पूर्वोदितैः=पूर्वोक्त अर्थात् सीमन्तोक्त नक्षत्रेषु तथा तिथिवारेषु च तृतीयमांस पुन्सवन श्रवणः, रोहिणो तथा पुष्ये एव च लग्ने शुभग्रहे स्थिते सति अष्टम शुद्धौ विष्णु पूजनं कर्त्तव्यमिति ।

ज्योति—सीमन्त कर्म में जो नक्षत्र तिथि, वार आदि कहे गए हैं, उनमें ही तीसरे महीने पुंसवन कर्म, सीमन्त कर्म करना चाहिए । श्रवण, रोहिणी तथा पुष्य इन नक्षत्रों और लग्न में शुभग्रह और अष्टम स्थान के शुद्ध होने पर विष्णु पूजा करनी चाहिए ।

सूतिकागारप्रवेशमूहूर्त्त--

श्रवणत्रयोत्तरा हस्तभे पुष्यानुराधयोः ।
पुनर्भे रोहिणीयुग्मे रेवतीद्वितये तथा ॥ १३९ ॥
शुभावहे प्रसवे युक्ता सूतिकामन्दिरं विशेत ॥ १४० ॥

कुन्तला--श्रवणत्रयः = श्रवण धनिष्ठा शतभिषा । उत्तरात्रयः हस्तः चित्रा स्वाती पुष्यः अनुराधा पुनर्वसु रोहिणी मृगशिराः रेवती तथा अश्विनी नक्षत्रेषु शुभवारेषु च सूतिकागारे प्रवेशनं शुभं भवति ।

ज्योति—श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, तीनों उत्तराः, हस्त, चित्रा, स्वाती, पुष्य, अनुराधा पुनर्वसु, रोहिणी, मृगशीर्षः तथा रेवती इन नक्षत्रों में और शुभवारों में गर्भवती स्त्री को सूतिकागार में जाना चाहिए।

जातकर्मनामकरणयोः मुहूर्त्तः—

तज्जातकर्मादि शिशोर्विधेयं पर्वाख्य रिक्तोनतिथौ शुभेऽह्नि।
एकादशे द्वादशकेऽपि घस्रे मृदु, ध्रुव, क्षिप्रचरोडुषु स्यात् ॥१४१॥

कुन्तला—वालकस्य जातकर्मादि संस्कारः पर्वतिथौ, तथा रिक्तां विहायान्यतिथिषु, व्यतीपातादि दोषरहितेषु शुभावासरे जन्मदिवमात् एकादशे द्वादशे वा दिने रेवती, चित्रा, अनुराधा, उत्तरात्रये, रोहिणी, हस्तः, अश्विनी, पुष्यः, अभिजित्, स्वाती, पुनर्वसुः, श्रवणः, धनिष्ठः तथा शतभिषा नक्षत्रेषु च कर्त्तव्यम्।

ज्योति—वालक का जातकर्मादि संस्कार पर्वतिथि और रिक्ता तिथि को छोड़कर, अन्य तिथियों में व्यतीपातादि दोषों से रहित किसी शुभ दिन को जन्म दिन से ग्यारहवें दिन, अथवा वारहवें दिन मृगशिरा, रेवती, चित्रा अनुराधा, तीनों उत्तरा, रोहिणी, हस्त, अश्विनी, पुष्य, अभिजित्, स्वाती, पुनर्वसु, श्रवण, धनिष्ठा और शतभिषा इन नक्षत्रों में करना शुभ होता है।

प्रसूतिकास्नानमुहूर्त्तः—

पौष्णध्रुवेन्दुकरवातहयेषु सूती-
स्नानं समित्रभरवीज्य कुजेषु शस्तम्।
आर्द्रात्रयं श्रुतिमघान्तक मिश्र मूलं-
त्वाष्ट्रेज्ञसौरिवसुषड् एविरिक्ततिथ्याम ॥ १४२ ॥

कुन्तला—रेवती, उत्तरात्रये रोहिणी, मृगशिरः, स्वाती, अश्विनी तथानुराधा नक्षत्रेषु रविः, गुरुः, तथा भौमवासरेषु च प्रसूतिकास्नानं शुभदायकां भवति। एवं, आर्द्रा, पुनर्वसु, पुष्य, श्रवण, मघा, भरणी, मिश्र अर्थात् विशाखा, कृतिका, मूल और चित्रा नक्षत्रेषु बुध एवं शनि, वासरे अष्टमी, षष्ठी, द्वादशी तथा रिक्तासु च प्रसूतिकास्नानं नोचितम्।

ज्योति—रेवती, तीनों उत्तरा, रोहिणी, मृगशिरा, स्वाती, अश्विनी और अनुराधा इन नक्षत्रों में रवि, बृहस्पति तथा, मंगल इन वारों में प्रसूतिका स्थान शुभदायक होता है।

आर्द्रा, पुनर्वसु, पुष्य, श्रवण, मघा भरणी, मिश्र अर्थात् विशाखा, कृत्तिका, मूल और चित्रा इन नक्षत्रों तथा बुध शनि इन वारों में और अष्टमी षष्ठी, द्वादशी तथा रिक्ता तिथि में प्रसूती को स्नान नहीं करना चाहिए।

जलपूजामुहूर्त्तं—

कवीज्यास्त चैत्राधिमासे न पौषे जलं पूजयेत् सूतिकामासपूर्तौ।
वुधेन्द्वीजवारे विरिक्ते तिथौ हि श्रुतीज्यादितीन्द्वर्कनैऽमृत्य मैत्रैः॥१४३॥

कुन्तला—कवीज्यस्तः = शुक्र गुरोरस्ते सति चैत्रे, अधिमासे पौषे, सूतिकामासपूर्तौ = सम्पूर्णसूतिकामासे जलं न पूजयेत्। एवञ्च बुध, सोमगुरु वासरेषु च, विरिक्ते तिथौ = रिक्तां तिथिं विहाय पुष्य, पुनर्वसु, मृगशिरसि, हस्तः मूलं तथानुराधा नक्षत्रेषु च प्रसूता जलं पूजयेत् अर्थात् जलपूजा कर्त्तव्येति।

ज्योति—बृहस्पति और शुक्र का अस्त काल; चैत्र, अधिमास, और पौष महीनों में और पूरे सूतिकामास को छोडकर बुध सोम, गुरु इन वारों में रिक्ता तिथि को छोड़कर अन्य तिथियों में पुष्य, पुनर्वसु, मृगशिरा, हस्त, मूल तथा अनुराधा इन नक्षत्रों में प्रसूती स्त्री को जल की पूजा करनी चाहिए।

बालकस्य निष्क्रमणमुहूर्तः—

ज्येष्ठादित्यकरोत्तराश्विविधुभे स्वातीनुराधाहरौ
पूषावार्द्धकिमूलवासवगुरौ मासत्रि तुर्येऽथवा।
मन्दारोज्झितवासरे च धवले पक्षे शुभे रात्रिपे
कुर्यादष्टमकेन्द्रकोणरहिते पापेशिशोर्निष्क्रमम्॥ १४४॥

कुन्तला—ज्येष्ठा, पुनर्वसुः, हस्तः, उत्तरात्रयः, अश्विनीः, मृगशिरः, स्वातीः, अनुराधा, श्रवण, रेवती· चित्रा, मूलं, धनिष्ठा, तथा च पुष्यश्च एषु

नक्षत्रेषु तृतीये एवं चतुर्थे मासे तथा शनिभौमरहित दिवसेषु शुक्लपक्षे चन्द्रस्य शुभेसति अष्टमे, केन्दे (१, ४, ७, १०) त्रिकोणे (९, ५) पापग्रह रहिते च बालकस्य, निष्क्रमणं शुभो भवति ।

ज्योति—ज्येष्ठा, पुनर्वसु, हस्त, तीनों उत्तरा अश्विनी, मृगशिरा, स्वाती, अनुराधा, श्रवण, रेवती, चित्रा, मूल धनिष्ठा और पुष्य इन नक्षत्रों में तृतीय व चतुर्थ मास, शनि और मंगल इन दिनों से वर्जित, शुक्लपक्ष में चन्द्रमा के शुभ होने पर और अष्टम तथा केन्द्र, त्रिकोण में पापग्रहों के न पर बालक को घर से बाहर निकालना शुभ होता है ।

बालकस्य दन्तोत्पत्तिफलम्—

स्वात्मानं प्रथमे मासि द्वितीये अनुजं तथा ।
तृतीये भगिनीं तुर्ये मातरं पञ्चमेऽग्रजान् ॥ १४५ ॥
निहन्याद्दशनोत्पत्तौ सदन्तस्त्वर्भकोऽखिलान् ।
षष्ठादौ लभते भोगानथ पंक्तावपीति च ॥ १४६ ॥

कुन्तला—प्रथमे मासि दशनोत्पत्तौ = बालकस्य प्रथमे मासि दन्तोत्पतिर्भवेत्तदा, स्वात्मानम् = स्वयं नष्टो भवतीत्यर्थः । द्वितीये मासि अनुजम्, तृतीयेभगिनी; चतुर्थे मातरम् पञ्चमे अग्रजान् निहन्याद् अर्थात् नष्टं करोतीति भावः । एवं यदि बालकस्य सदन्तोत्पत्तिर्भवेत्तदा अखिलान् = सर्वेषां विनाशं करोति । यदि षष्ठे मासे दन्तोत्पत्तिः अधः पंक्तौ भवेत्तदा भोगान् लभते अर्थात् सुखसमृद्धिः भवतीत्यर्थः ।

ज्योति—यदि जन्म के प्रथम मास में बालक के दांत निकले तो बालक अपना शरीर दूसरे मास में दांत निकले तो छोटे भाई तीसरे मास में वहिन चौथे में माता पांचवें में बड़े भाइयों का नाश करता है । यदि बालक दांत युक्त उत्पन्न होवे तो वह सबका नाश कर देता है । छठे मास में नीचे के पंक्ति में दांत निकले तो बहुत ही सुख समृद्धि सूचक होता है ।

दोलारोहणमुहुर्त्तः—

दोलारोहाऽर्कमात्पञ्च शरपञ्चेषु सप्तभैः ।
नैरुज्यं मरणं कार्श्यं व्याधिः सौख्यं क्रमाच्छिशोः ॥ १४७ ॥

कुन्तला—सूर्यनक्षत्रात् पञ्च-पञ्चनक्षत्राणि क्रमेण नैरुज्यं, मरणम् कार्श्यम् = दौर्बल्यम्, व्याधिः, सौख्यं च शिशोः फलं बोध्यम् ।

ज्योति—सूर्य नक्षत्र से पांच-पांच नक्षत्र क्रमशः बालक के लिए निरोग, मरण, दुर्बलता, व्याधि और सुख ये फल समझना चाहिए। अधोलिखित चक्र से स्पष्ट हो जायेगा ।

दोलारोहणचक्र ।

५	५	५	५	१०	नक्षत्र
निरोग	मरण	दुर्बलता	व्याधि	सुख	फल

अन्नप्राशनमुहूर्त्तः—

रेवत्यश्विपुनर्वसौ हरियुगे ब्राह्मानुराधागुरौ
स्वाती भानुमघाविशाखरजनीनाथोत्तरात्वाष्ट्रभे ।
वारे सूर्यशशांक बोधन गुरौ शुक्रे ह्यतिरिक्ते तिथौ
अन्नप्राशनमीरितं मिथुनगे कन्याझषे सूरिभिः ॥ १४८ ॥
षष्ठे मासि सिते पक्षे शुभैः केन्द्र त्रिकोणगैः ।
त्रिषडायगते क्रूरे चन्द्रमृत्य्वारिवर्जिते ॥ १४९ ॥
सप्तम्येकादशी पर्वद्वादशी वर्जिते तिथौ ।
शिशूनां शोभने चन्द्रे कारयेदन्न भक्षणम् ॥ १५० ॥

कुन्तला—रेवती, अश्विनी, पुनर्वसु, श्रवणः, धनिष्ठा, रोहिणी, अनुराधा, पुष्पः, स्वाती, हस्तः, मघा, विशाखा, मृगशिरः उत्तरात्रयम्, चित्रा च एषु नक्षत्रेषु रवि, सोम, बुधः. बृहस्पतिः शुक्रश्च वारेषु, रिक्तारहिततिथिषु, मिथुने, कन्यायां, मीने च स्थिते सूर्यः, विद्वद्भिः बालकस्यान्नप्राशनं शुभं कथितमस्ति । एवमेव षष्ठमासः शुक्लपक्षश्च तथा शुभग्रहाः केन्द्रत्रिकोणे च स्थिते सति, चन्द्रस्याष्टमे षष्ठे च भावेषु रहिते, सप्तम्याम्, एकादश्यां, पर्वतिथौ,तथा च द्वादशीवर्जित तिथिषु, चन्द्रे सबले सति अन्नप्राशनं शुभं भवति ।

ज्योति—रेवती, अश्विनी, पुनर्वसु, श्रवण, धनिष्ठा, रोहिणी, अनुराधा, पुष्प, स्वाती हस्त, मघा, विशाखा, मृगशिरा, तीनों उत्तरा और चित्रा इन नक्षत्रों में रवि, सोम, बुध, गुरु, शुक्र इन वारों में रिक्ता वर्जित तिथियों और मिथुन, कन्या, एवं मीन के सूर्य में पण्डितों ने अन्नप्राशन कराना उत्तम कहा है। छठे मास, शुक्लपक्ष, शुभग्रहों के केन्द्र त्रिकोण में स्थित रहते और चन्द्रमा के अष्टम तथा छठे भाव से वर्जित होने पर और सप्तमी, एकादशी, पर्वतिथि, तथा द्वादशी से वर्जित तिथि में चन्द्रमा के शुभ होने पर वालक को अन्न खिलाना शुभ होता है।

अन्न प्राशनमुहूर्त्तज्ञ चक्रम्

वालक का छः महीने से सम महीनों में और कन्या का पाँच महीने से प्रारम्भ कर विषम महीनों में करना चाहिए। मास की गणना सौर से करना चाहिए।

सद्भानिः	रो. तीनो उत्तरा, पू०, रे, चि अनु, हस्त पुष्यः अश्विनी, अभि०, पुनर्वसु, श्र० धनि०, स्वा; शतभिषजिशुभा।
तिथयः	२, ३, ५, ७, १०, १३, १५ सत् अन्येष समः।
सद्वाराः	चं. बु. वृ शु.

ताम्बूलभक्षणमुहूर्त्तः—

अनुराधात्रये हस्तत्रितये रेवतीद्वये।
उत्तरासु च रोहिण्यां श्रवणद्वितये मृगे॥ १५१॥
पुनर्वसौ तथा पुष्ये शनिभौमान्यवासरे।
ताम्बूल भक्षणं सार्द्धद्विमासेन्नाशनेऽथवा॥ १५२॥
ज्ञार्कीज्यान्य वृषे लग्ने कार्यं ताम्बूलभक्षणम्॥ १५३॥

कुन्तला—अनुराधात्रये = अनुराधा, ज्येष्ठा मूलं च। हस्तत्रितये = हस्तः, चित्रा, स्वाती। रेवतीद्वये = रेवती, अश्विनी। उत्तरासु = उत्तरात्रये। रोहिणी, श्रवणद्वितये = श्रवणधनिष्ठाः। मृगशिरसि, पुनर्वसु तथा पुष्ये च, शनिभौमान्यवासरे = शनिभौमदिनं विहायान्यदिनेषु, सार्द्धद्विमासे = जन्म-

दिनतः सार्द्धद्वयमासानन्तरं तथा अन्नप्राशने बुधं गुरुं शनिं विहायान्यदिनेषु वृषलग्ने ताम्बूलभणं कार्यम् ।

ज्योति—अनुराधा, ज्येष्ठा, मूल, हस्त, चित्रा, स्वाती, रेवती, अश्विनी, तीनों उत्तरा, रोहिणी, श्रवण, धनिष्ठा, मृगशीर्ष, पुनर्वसु तथा पुष्य नक्षत्रों में शनि मंगल को छोड़कर अन्य दिनों में जन्म से ढाई मास के बाद अन्नप्राशन के समय बुध, शनि और वृहस्पति दिनों को छोड़कर अन्य दिनों में तथा वृष लग्न में वालक को पान खिलाना शुभ होता है ।

चूडादिकर्मसु वर्जितकालः—

गीर्वाणाम्बुप्रतिष्ठापरिणयदहना धानगेहप्रवेशा-
श्चौलं राज्याभिषेको व्रतमपि शुभदं नैव याम्यायने स्यात् ।
नो वा वाल्यास्तवार्द्धे सुर गुरु सितयोर्नैव केतूदये स्यात् ।
पक्षं वार्द्धं च केचिज्जहतितमपरे यावदीक्षां तदुग्रे ॥ १५४ ॥

कुन्तला—गीर्वाणाम्बुप्रतिष्ठा=देवता जलाशयस्य च प्रतिष्टा, परिणय= विवाहः, अग्निहोत्रग्रहणं गृहप्रवेशः, चूडाकर्म, राज्याभिषेकः, व्रतमपि = व्रतबन्धमपि, याम्यायने नैव शुभदं = याम्यायने स्थिते सवितरि शुभो न भवति; अथवा वृहस्पतिः तथा शुकस्य वाल्य, वृद्धस्तथास्तङ्गते एवं च केतोरुदये शुभं न भवति । केचन आचार्याः केतोरुदयपश्चात् पक्षमेकं केचन पक्षार्द्धं च अर्थात् सप्तदिनं यावत् तथा च केचन केतोः दर्शनपर्यन्तमेव कालस्य त्यागं कुर्वन्ति ।

ज्योति—देवता तथा जलाशय की प्रतिष्ठा विवाह और गृह प्रवेश, चूणाकर्म, राज्याभिषेक और उपनयन संस्कार यह कर्म [दक्षिणायन सूर्य में वृहस्पति तथा शुक्र के वाल्य अस्त तथा वार्द्धक्य के समय और केतु के उदय काल में शुभ नहीं होते हैं । कोई-कोई आचार्य केतु के उदय होने पर पूर्वोक्त कर्मों मेंत्याग करने को कहा है ।

चूडाकर्म मुहूर्त्त—

रेवत्यश्विपुनर्वसौ सुरपतौ विष्णु त्रयेऽर्कत्रये,
सौम्ये वाक्पति भे च सौम्यदिवसे सूर्ये च सौम्यायने ।
केन्द्रद्वादशमृत्युकोणरहिते पापे शुभे केन्द्रगे,
चन्द्रे कुम्भमृगाङ्गनामिथुनगे मीनेहयाङ्गे शुभः ॥ १५५ ॥

कुन्तला—रेवती, अश्विनीः, पुनर्वसुः, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, हस्तः; चित्रा, स्वातीः, मृगशिरः, पुष्यश्च एषु नक्षत्रेषु शुभग्रहाणां दिवसेषु उत्तरायणे सूर्ये, केन्द्र अर्थात् १, ४, ७, १० स्थानेषु तथा द्वादश, अष्टम, त्रिकोण (६, ५) रहिते पापा = पापग्रहाः; तथा च शुभाः = शुभग्रहाः केन्द्रे स्थिते सति, कुम्भः, मकर, कन्या मिथुन, वृष, मीन तथा धनु लग्नेषु विद्यमाने चन्द्रे च चूणाकरणं शुभो भवति ।

चूडाकरणेवर्जितकालः—

न जन्ममासे न च जन्मभे तिथौ विधौ विशुद्धेऽशुभतारकासु ।
युग्माब्दमासे न च कृष्णपक्षे चूडा न कार्या खलु चैत्रपौषे ॥१५६॥

कुन्तला—जन्ममासे, जन्मतिथौ, विरुद्धेविधौ = चन्द्रे चतुर्थाष्टम द्वादशे स्थिते सति, अशुभातारायां, ममासे वर्षे च, कृष्णपक्षे, चैत्रे, तथा पौषमासे निश्चयेन चूडा न कार्या अर्थात् चूडाकरणसंस्कारः न कर्त्तव्य इत्यर्थः ।

ज्योति—जन्ममास, जन्म नक्षत्र, जन्मतिथि, विरुद्धचन्द्रमा, अशुभतारा, सममास, समवर्ष, कृष्णपक्ष चैत्र तथा पौषमास में चूणाकर्म कभी भी नहीं करना चाहिए ।

गर्भिणीकृते चौलविचारः—

गर्भिणी यस्य वै माता मासादूर्ध्वं तु पञ्चमात् ।
तस्य चूडोपनयने गर्भिण्याः शिशोर्मृतिः ॥ १५७ ॥

कुन्तला—बालकस्य मातुः पञ्चमासादूर्ध्वंस्य गर्भोभवेत् तदा चौलसंस्कारेण बालकस्य तथा गर्भिण्याः मृत्युर्भवतीति बोध्यम् ।

ज्योति—बालक की माता ५ मास से अधिक की गर्भवती हो तो उसके चौल करने से गर्भिणी स्त्री तथा बालक की मृत्यु होती है ।

क्षौरकर्मविचारः—

षष्ठ्यष्टमी-द्वादशीषु रिक्तापर्वाऽवमेषु च ।
गलग्रहे च भद्रायां क्षौरकर्म न कारयेत् ॥ १५८ ॥

कुन्तला—षष्ठी, अष्टमी, द्वादशी, रिक्ता (४, ९, १४); पर्वतिथिः, अमावस्या आसु तिथिषु गलग्रहे तथा भद्रायां क्षौरकर्म न करणीयमिति ।

ज्योति—षष्ठी, अष्टमी द्वादशी, रिक्तातिथिः, पर्वतिथिः, अमावस्या, गलग्रह; तथा भद्रा में क्षौर कर्म नहीं करना चाहिए।

षट् ६ कृत्तिका पञ्च ५ मघास्त्रिमैत्रा ब्रह्माष्टको यश्चतुरुत्तराश्च।
क्षौरो सवर्षं चतुराननोऽपि न प्राणितीति प्रकटप्रवादः ॥१५९॥

कुन्तला—षट्कृत्तिका=षडवारं कृत्तिकायां, पञ्चवारं मघायां, त्रिवारम् अनुराधायाम्, अष्टवारं रोहिण्यां, वारचतुष्टयं च उत्तराफाल्गुन्यां निरन्तर क्षौरकर्मसम्पादनेन चतुराननोऽपि न जीवति। इयमुक्तिः प्रसिद्धमस्ति।

ज्योति—छः वार कृत्तिका में, पाँचवार मघा में, तीनवार अनुराधा में, आठवार रोहिणी में और चारवार उत्तरा फाल्गुनी में निरन्तर क्षौर कराने वाला प्राणी यदि ब्रह्मा हो तो भी जी नहीं सकता। यह बात विख्यात है।

नख-दन्त-विलेखनमुहूर्त्तः—

येषुयेषु प्रशंसन्ति क्षौरकर्म महर्षयः।
शंसन्ति तेषु भेष्वेव नख दन्त विलेखनम् ॥ १६० ॥

कुन्तला—महर्षयः येषु येषु तिथि वारनक्षत्रेषु च क्षौर कर्म कथितवन्तः तेषु तिथि नक्षत्रवारेषु नख-दन्त विलेखनमपि श्रेष्ठं भवति।

ज्योति—जिन तिथि, वार तथा नक्षत्रादि में महर्षियों ने क्षौरकर्म के लिए कहा है उन्हीं नक्षत्रों, तिथियों और वारों में नख तथा दन्त का कटना भी उत्तम बताया है।

कर्णवेधमुहूर्त्तः—

ज्येष्ठादित्यसमीरणार्कशतभे पुष्ये श्रविष्ठाश्विनी
चित्रावैष्णवमित्रपौष्णमृगभे वारे बुधादित्रये।
षष्ठत्र्यायभगे खले च शुभदे केन्द्रत्रिकोणस्थिते
वर्षे वा युजिकर्णवेधनविधिः पक्षे सिते शोभने ॥ १६१ ॥

कुन्तला—ज्येष्ठा, पुनर्वसु, स्वाती, हस्त, शतभिषा, पुष्य, धनिष्ठा, अश्विनी, चित्रा, श्रवण, अनुराधा, रेवती तथा च मृगशिरा एषु नक्षत्रेषु, बुधादित्रये = बुध, बृहस्पति शुक्रवासरेषु, षष्ठे; तृतीये एवं एकादशे च

पापग्रहास्तथाच केन्द्रत्रिकोणे शुभग्रहाः, प्रथम, तृतीय, पञ्चम, सप्तमादि विषमवर्षेषु, शुक्लपक्षे कर्णवेधः शुभो भवतीति वोध्यम् ।

ज्योति—ज्येष्ठा, पुनर्वसु, स्वाती, हस्त, शतभिषा, पुष्य, धनिष्ठा, अश्विनी, चित्रा, श्रवण, अनुराधा, रेवती तथा मृगशिरा इन नक्षत्रों में बुध, वृहस्पति, शुक्र इन वारों में तीसरे, ग्यारहवें, छठवें ,स्थान में पापग्रह और केन्द्र तथा त्रिकोण में शुभग्रह के होने पर, प्रथम, तृतीय, पञ्चम तथा सप्तम आदि विषम वर्षों में, तथा शुक्ल पक्ष में कर्णवेध संस्कार उत्तम होता है ।

जन्मर्क्षे जन्ममासे च रिक्तापर्वाऽवमेषु च।
भद्रायामशुभे चन्द्रे न कुर्यात्कर्णवेधनम् ॥ १६२ ॥

कुन्तला—जन्मनक्षत्रे, जन्ममासे, रिक्तातिथौ पर्वतिथौ, अमायां, भद्रायां तथा अशुभे चन्द्रे च कर्णवेधं न कुर्यात् ।

ज्योति—जन्म नक्षत्र जन्ममास रिक्तातिथि पर्वतिथि अभवस्या भद्रा और अशुभ चन्द्र में कर्णवेध नहीं करना चाहिए ।

विद्यारम्भमुहूर्त्तः—

मृगात्कराच्छ्रुतेस्त्रयेऽश्विमूलपूर्विकात्रये,
गुरुद्वार्येऽकजीववित्सितेऽन्हि षट्राशिके।
शिवार्कदिग्द्विके तिथौ ध्रुवान्त्यमित्रभे परैः.
शुभैरधीतिरुत्तमा त्रिकोणकेन्द्रगः स्मृताः ॥ १६३ ॥

कुन्तला—मृगत् करात् श्रुतेः त्रये = मृगशिरानक्षत्रात् त्रीणि हस्तनक्षात् त्रीणि एवं च श्रवण नक्षत्रात् त्रीणिनक्षत्राणि अर्थात् मृगशीर्षः; आर्द्रा पुनर्वसुः; हस्तः चित्रा, स्वाती; श्रवणः धनिष्ठा, शतभिषश्च । एवमेव अश्विनी मूल पूर्वात्रिये पुष्यः तथा आश्लेषा एषु नक्षत्रेषु सूर्यः वृहस्पतिः बुधः शुक्रश्च वारेषु षष्ठी पञ्चमी तृतीया एकादशी दशमी द्वितीया तीथिषु; शुभग्रहे त्रिकोणे केन्दे च स्थिते सति विद्यारम्भे शुभो भवतीति परे = केचन आचार्याः उत्तरात्रये रोहिण्यां रेवत्यां तथा च अनुराधायामपि विद्यारम्भो शुभो भवतीति कथयन्ति ।

ज्योति—मृगशिरा आर्द्रा पुनर्वसु हस्त चित्रा स्वाती श्रवण धनिष्ठा

शतभिषा अश्विनी मूल तीनों पूर्वा पुष्य तथा आश्लेषा इन नक्षत्रों में सूर्य बृहस्पति बुध तथा शूक्र इन वारों में षष्ठी पञ्चमी तृतीया एकादशी दशमी तथा द्वितीया इन तिथियों से जब शुभग्रह केन्द्र त्रिकोण में स्थित हों तो विद्यारम्भ शुभ होता है। कोई आचार्य तीनों उत्तरा, रोहिणी, रेवती, रेवती तथा अनुराधा में भी विद्यारम्भ करना शुभ कहते हैं।

धनुर्विद्यामुहूर्त्तः—

अदितिगुरुयमार्कस्वातिचित्राग्निपित्र्यै-
ध्रुवहरिवसुमूलाश्वीभाग्यर्क्षकेषु।
विशनिशशिवुधोर्हविष्णुवोधेऽपि पौषे
सुसमयतिथियोगे चाप विद्या प्रशस्ता ॥ १६४ ॥

कुन्तला—पुनर्वसुः, पुष्यः भरणी, हस्तः, स्वाती, चित्रा, कृत्तिका, मघा, उत्तरात्रयम्, रोहिणी, धनिष्ठा, मूलम्, अश्विनी, मृगशीर्षः, पूर्वाफाल्गुनी एषु नक्षत्रेषु शनि, सोम बुध वार, तिरिक्त दिवसेषु सुसमये धनुर्विद्यारम्भः शुभो भवतीति।

ज्योति—पुनर्वसु, पुष्य, भरणी, हस्त, स्वाती, चित्रा, कृतिका, तीनों उत्तरा, रोहिणी, धनिष्ठा मूल, अश्विनी, मृगशिरा तथा पूर्वाफाल्गुनी इन नक्षत्रों में शनि, सोम, और बुध इनसे अतिरिक्त किसी भी दिन अच्छे योग में धनुर्विद्या सीखना प्रारम्भ करना उत्तम होता है।

वैद्यगारुडीविद्यायाश्चमुहूर्त्तौ—

हस्तत्रयेऽनुराधायां पुनर्भे श्रवणत्रये।
मूले चान्त्येऽश्विनीपुष्ये ज्येष्ठा श्लेषाऽर्द्रभे मृगे ॥
वैद्यविद्याकुजेब्जेऽर्कें ज्येष्ठा हीनेत्रगारुणी ॥ १६५ ॥

कुन्तला—हस्तत्रये = हस्तः, चित्रा, स्वाती, अनुराधा, पुनर्वसुः, श्रवणत्रये = श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषजि। मूलं, अन्त्ये = रेवती। अश्विनी, पुष्यः, ज्येष्ठा, आश्लेषा, आर्द्रा तथा मृगशिरः एषु नक्षत्रेषु; कुजे = भौमे, अब्जे = चन्द्रेः, अर्के = रविवासरे च वैद्यविद्याध्ययनं शुभं भवति।

गारुडीविद्याध्यनं अर्थात् सर्पदंशदिनिवारणविद्याभ्यासः ज्येष्ठा हीने = ज्येष्ठा नक्षत्ररहिते वैद्यविद्योक्त तिथि नक्षत्रवारेषु च शुभो भवति ।

ज्योति—हस्त, चित्रा, स्वाती, अनुराधा, पुनर्वसु, श्रवण शनिष्ठा, मूल, रेवती, अश्विनी, पुष्य, आश्लेषा आर्द्रा तथा मृगशिरा इन नक्षत्रों में, मंगल, सोम तथा रविवार में वैद्यक पढना उत्तम होता है। ज्येष्ठा को छोड़कर उक्त नक्षत्रों और वारों में गारुड़ी विद्या अर्थात् साँप आदि विषैले जीवों के काटने को झाड़ना सीखना शुभ होता है ।

फारसी अरवी विद्याध्ययनमुहूर्त्तौ

ज्येष्ठश्लेषामघा पूर्वा रेवती भरणीद्वये ।
विशाखाद्रोंत्तराषाढतभे पापवासरे ॥
लग्ने स्थिते स चन्द्रे च फारसीमरवीं पठेत् ॥ १६६ ॥

कुन्तला—ज्येष्ठा, आश्लेषा, मघा, पूर्वा, रेवती भरणी, कृत्तिका । विशाखा, आर्द्रा, उत्तराषाढ़ा, तथाच शतभिष एषु नक्षत्रेषु तथा च पापग्रहाणां दिनेषु, स्थिरलग्नेचन्द्रस्य विद्यमाने फारसी तथा अरबी विद्याध्ययनं कर्त्तव्यमिति ।

ज्योति—ज्येष्ठा, आश्लेषा, मघा, पूर्वा रेवती, भरणी, कृत्तिका, विशाखा, आर्द्रा उत्तराषाढ़ा, तथा शतभिषा नक्षत्रों में पापग्रहों के दिनों में स्थिर लग्न के चन्द्रमा में फारसी तथा अरबी विद्या सीखना चाहिए ।

रत्नविद्यामुहूर्त्तः—

पुनर्भे शतहस्ताद्यै श्वो ज्येष्ठा परीक्षणम् ।
रत्नानामष्टमीं भूतां हित्वा भौमश्नैश्चरम् ॥ १६७ ॥

कुन्तला—पुनर्वसु, शतभिषा, हस्त, ज्येष्ठा, नक्षत्रेषु अष्टमी, चतुर्दशी द्वितीयाः तथा भौमशनिवारश्च विहायान्यदिवसेषु रत्नविद्याध्ययनं शुभं भवति ।

ज्योति—पुनर्वसु, शतभिषा, हस्त, ज्येष्ठा और अष्टमी, चतुर्दशी, द्वितीया तिथियों को मंगल तथा शनिवार को छोड़कर उपरोक्त मुहूर्त्त में रत्नविद्या (जौहरी) का काम सीखना प्रारम्भ करना चाहिए ।

शिल्पविद्यारम्भमुहूर्त्तः—

हस्तत्रये श्रवत्र्यक्षें त्र्युत्तरे रोहिणीमृगे ।
रेवत्यामश्विनीपुष्य-पुनर्वस्वनुराधयोः ।
हस्ते तिथौ शुभे वारे शिल्पविद्या समाचरेत् ॥ १६८ ॥

कुन्तला—हस्त, चित्रा, स्वाती, विशाखा, श्रवण धनिष्ठा, शतभिषा, उत्तरात्रयं, रोहिणी मृगशिरः, अश्विनी, पुष्यः, पुनर्वसुः तथा अनुराधा एषु येषु•शुभतिथोवारे च शिल्पविद्यारम्भः शुभो भवति ।

ज्योति—हस्त चित्रा, स्वाती, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, तीनों उत्तरा, रोहिणी; मृगशिरा, अश्विनी, पुष्य, पुनर्वसु और अनुराधा इन नक्षत्रों में शुभतिथि और शुभवारों में शिल्पविद्या (कारीगरी) सीखना प्रारम्भ करना चाहिए ।

व्रतवन्ध मुहूर्त्तः—

विप्राणां व्रतबन्धनं निगदितं गर्भाज्जनेर्वाष्टमे
वर्षे वाप्यथपञ्चमे क्षितिभुजां षष्ठे तथैकादशे ।
वैश्यानां पुनरष्टमेऽप्यथ पुनः स्याद् द्वादशे वत्सरे
कालेऽथ द्विगुणे गते निगदिते गौणं तदाहुर्बुधाः ॥ १६९ ॥

कुन्तला—ब्राह्मणामामुपनयनं गर्भात् पञ्चमे अष्टमे वर्षे वा कथितमस्ति । क्षितिभुजां = क्षत्रियाणां षष्ठे एकादशे वा वर्षे, वैश्यानामष्टमे द्वादशे वर्षे च कर्त्तव्यमित्यर्थः । केचन विद्वान्सः द्विगुणिते काले गते सति गोणमुक्तमस्ति ।

ज्योति—गर्भ के दिन तथा जन्म दिन से पञ्चम वा अष्टम वर्ष में ब्राह्मणों का उपनयन कर्म कहा गया है । गर्भ तथा जन्म से छठे और ग्यारहवें वर्ष में क्षत्रियों के लिए कहा गया है । वैश्यों का गर्भ मे या जन्म से आठवे और वारहवें वर्षों में कहा गया है । इस प्रकार ब्राह्मण; क्षत्रिय तथा वैश्यों के उपनयन के कहे वर्षों से दूने समय वीत जाने पर किये उपनयन को पण्डित लोग गोड़काल कहते हैं । अर्थात् ब्राह्मण का सोलह वर्ष तक, क्षत्रियों का २२ वर्ष तक, और वैश्यों का उपनयन संस्कार २४ वर्ष तक गोड़काल माना जाता है ।

व्रतबन्धेलग्नशुद्धिः—

पूर्वाषाढ़हरित्रयेऽश्विमृगभे हस्तत्रये रेवती
ज्येष्ठापुष्यभगेषु चोत्तरते भानौ च पक्षे सिते।
गोमीन प्रमदाधनुवनचरे शुक्रे गुरौ भास्करे
पञ्चम्यां दशमीत्रये व्रतमिहश्रेष्ठं द्वितीयाद्वयोः ॥ १७० ॥

कुन्तला—पूर्वाषाढ़ः, श्रवणः, धनिष्ठा, शतभिषः, अश्विनी, मृगशिरः, हस्तः, चित्रा, स्वाती, रेवती, ज्येष्ठा, पुष्यः, पूर्वाफाल्गुनी एषु नक्षत्रेषु उत्तरायणे सूर्ये, शुक्ले पक्षे, वृष, मीन, कन्या, धनु सिंहलग्नेषु शुक्र, गुरु सूर्यवासरेषु, पञ्चम्यां दशम्यां, एकादश्यां—द्वादश्यां, द्वितीयायां तृतीयायाञ्च तिथौ उपनयनं शुभम्।

ज्योति—पूर्वाषाढ़, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा; अश्विनी, मृगशिरा, हस्त, चित्रा, स्वाती रेवती, ज्येष्ठा, पुष्य तथा पूर्वाफाल्गुनी इन नक्षत्रों में उत्तरायणसूर्य, शुक्लपक्ष, वृष, मीन, कन्या, धनु और सिंह लग्नों में शुक्र, गुरु तथा रवि वारों में, पञ्चमी, दशमी, एकादशी, द्वादशी, द्वितीया, तथा तृतीया तिथियों में उपनयन संस्कार उत्तम होता है।

वसिष्ठमतानुसारेण लग्ननिर्णयः—

कवीज्य चन्द्र लग्नपा रिपौ मृतौ व्रतेऽधमाः।
व्ययेऽब्ज भार्गवौ तथा तनौ मृतौ सुते खला ॥ १७१ ॥
व्रतबन्धेऽष्टषट्रिःफवर्जिताः शोभनाः शुभाः।
त्रिषडाये खलाः पूर्णो गोकर्कस्थो विधुस्तनौ ॥ १७२ ॥

कुन्तला—व्रतबन्धे शुक्रः, गुरुः, चन्द्रः तथा लग्नाधीशश्च षष्ठाष्टमे अशुभाः भवन्ति। व्यये = द्वादशे, अब्जभार्गवौ = चन्द्रशुक्रौ, च अधमाः भवन्ति। खलाः = पापग्रहाः तनौ = लग्ने, सुते = पञ्चमे, मृतौ = अष्टमे च अधमाः भवन्ति। एवं व्रतबन्धे तृतीये षष्ठे तथैकादशे पापाः शुभाः भवन्ति। शुक्लपक्षस्य चन्द्रः वृषे कर्कराशौ वा लग्नस्थो भवेत् तदापि शुभो भवतीति बोध्यम्।

ज्योति—व्रतबन्ध में शुक्र, वृहस्पति, चन्द्रमा तथा लग्नपति ये षष्ठ और अष्टम भाव में अशुभ होते हैं। चन्द्रमा तथा शुक्र १२ वे भाव में अशुभ

होते है। पापग्रह लग्न, अष्टम तथा पञ्चम में अशुभ होते हैं। तृतीय, षष्ठ तथा एकादश भावों में पापग्रह शुभ होते हैं। शुक्लपक्ष का चन्द्रमा वृष अथवा कर्कराशि पर स्थित होकर लग्न में विद्यमान हो तो भी शुभ कहा गया है।

व्रतबन्धे विशेषवर्ज्यः—

जीवोदये जीव गृहोदये वा जीवांशके जीवनिरीक्षिते च।
अल्प श्रुतेऽपि व्रतवन्धने तु वागीशतुल्यो भवति द्विजेन्द्रः ॥१७३॥

कुन्तला—जीवोदये = गुरोरुदये सति, लग्ने गुरोः राशौ (अर्थात् धनुषि मीने) स्थिते गुरुः, गुरोः नवांशे, लग्ने गुरोः दृष्टो उपनयनसंस्कारसम्पादनेन अल्पज्ञ वालकोऽपि (वटुः) वृहस्पतितुल्यो भवतीति बोध्यम्।

ज्योति—गुरु के उदय होने पर, लग्न में वृहस्पति की राशि, वृहस्पति का नवमांश अथवा लग्न पर वृहस्पति की दृष्टि होने पर, उपनयन संस्कार करने से थोड़ा सा पढ़ा लिखा वालक भी वृहस्पति के समान विद्वान होता है।

कृष्णपक्षे प्रदोषेऽनध्याये शनौ निश्यपराह्णके।
प्राक्सन्ध्यागर्जिते नेष्टो व्रतवन्धो गलग्रहे ॥ १७४ ॥

कुन्तला—कृष्णपक्षे, प्रदोषे, अनध्याये, शनौ, निश्यपराह्णके = रात्रिवेलायाम् अपराह्णे च, प्रातः काले सन्ध्याकाले, मेघगर्जने, तथा च गलग्रहे च उपनयन संस्कारो नेष्टो भवतीति वोध्यम्।

ज्योति—कृष्णप में, प्रदोष में यानी जिस दिन सन्ध्या काल में प्रदोष हो, अनध्याय शनिवार के दिन, रात्रि में, अपराह्ण में, प्रातः काल की सन्ध्या के समय मेघ गर्जन में और गलग्रह में उपनयन संस्कार नहीं करना चाहिए।

गलग्रहः—

कृष्णपक्षे चतुर्थी चतुर्थी च सप्तम्यादिदिनत्रयम्।
त्रयोदश्यां चतुष्कं च अष्टावेते गलग्रहाः ॥ १७५ ॥

कुन्तला—कृष्णपक्षे चतुर्थ्यां; सप्तम्याम्, अष्टम्यां, नवम्यां, त्रयोदश्यां, चतुर्दश्यां, पूर्णिमायां तथा च प्रतिपदि अष्टौ गलग्रहाः कथ्यन्ते।

ज्योति—कृष्णपक्ष में चतुर्थी, सप्तमी, अष्टमी, नवमी, त्रयोदशी, पौर्णमासी और प्रतिपदा ये आठ तिथियाँ गलग्रह कही जाती हैं।

अनध्यायः —

शुचि शुक्र पौषतपसांदिगश्विरुद्रार्कसंख्यसिततिथयः।
भूतादित्रितयाष्टमीसंक्रमणं च व्रतेष्वनध्यायाः ॥ १७६ ॥

कुन्तला—आषाढ़ शुक्लपक्षस्य दशमीतिथिः, ज्येष्ठ शुक्लपक्षस्य द्वितीया, पौषशुक्लपक्षस्यैकादशी, माघशुक्लपक्षस्य द्वादशी च तिथय अनध्याय संज्ञकाः कथ्यन्ते।

ज्योति—आषाढ़ शुक्लपक्ष की दशमी, ज्येष्ठशुक्लपक्ष की द्वितीया, पौषशुक्लपक्ष की एकादशी और माघ शुक्लपक्ष की द्वादशी ये तिथियाँ अनध्याय संज्ञक हैं।

व्रतबन्धे वर्जितकालः—

अयने दक्षिणे चैव शयने वोधने हरेः।
व्रतबन्धो न कुर्वीत मन्वादिषु युगादिषु ॥ १७७ ॥

कुन्तला—दक्षिणायने, हरिशयने, देवोत्थाने, मन्वादितिथिषुः, युगादितिथयषु व्रतबन्धः त्याज्यः।

ज्योति—दक्षिणायन में, हरिशयन में, देवोत्थान में तथा मन्वादि और युगादि तिथियों में व्रतबन्ध नहीं करना चाहिए।

युगादितिथयः—

माघे पञ्चदशी कृष्णा न भस्ये च त्रयोदशी।
तृतीया माधवे शुक्ला नवम्यूर्जे युगादयः ॥ १७८ ॥

कुन्तला—माघमासस्यामावस्यातिथिः, भाद्रपदमासस्य कृष्णत्रयोदशी तिथिः, वैशाखशुक्लतृतीयातिथिः तथा च कार्तिकशुक्लनवमीतिथिश्च क्रमेण द्वापर, कलि, त्रेता तथा च कृतयुगस्य युगादि तिथयः सन्ति।

ज्योति—माघमास की अमावस्या तिथि, द्वापरयुगादि तिथि है। भाद्रपदमास की कृष्ण त्रयोदशी कलियुगादि तिथि है। वैशाख शुक्ल तृतीया त्रेता युगादि तिथि और कार्तिक शुक्लनवमी कृतयुगादि तिथि है।

युगादि तिथिचक्र

कार्तिक	वैशाख	भाद्रपद	माघ	मास
शुक्ल	शुक्ल	कृष्ण	कृष्ण	पक्ष
९	३	१३	३०	तिथियाँ
कृतयुगादि	त्रेतायुगादि	द्वापरयुगादि	कलियुगादि	अनध्याय प्रकुर्वीत मन्व दिषु, युगादिषु,

मन्वादितिथिवर्णनम—

अश्वयुजि शुक्लनवमी द्वादश्यूर्जे मधौ तृतीया च ।
भाद्रपदेऽपि तृतीया श्रावणे मासे त्वमावास्या ॥ १७९ ॥
एकादशी च पौषे शुचि सित दशमी च सप्तमी माघे ।
वहुलाष्टमो नभस्ये वाषाढ़ी कार्तिकी तद्वत् ॥ १८० ॥
फाल्गुने सितपञ्चदशी चैत्रे ज्येष्ठस्य पौर्णमासी च ।
मन्वन्तरादय इमाश्चतुर्दशोक्ता वुधै पुण्याः ॥ १८१ ॥

उपरोक्त त्रयाणां श्लोकानां अर्थः अधोलिखितेन चक्रेण स्पष्टः—

मन्वादितिथि ज्ञापकचक्र—

चै०	ज्ये०	आ०	मा०	आ०	का०	पौ.	भा०	फा०	श्रा०	मास
शु०	शु०	शु०	शु०	मु०	शु०	शु०	शु०	शु०	कृ०	पक्ष
३ १५	१५	१० १	१३	०१	१२ १५	११	७	१५	८ ३०	तिथि

गुरुवलम्—

वटुकन्याजन्मराशेस्त्रिकोणायद्विसप्तगः ।
श्रेष्ठो गुरुः खषट् त्र्याद्ये पूजयान्यत्रनिन्दितः ॥ १८२ ॥

कुन्तला—वटोः कन्यावा जन्म राशेः पञ्चम, नवम, एकादश, द्वितीय सप्तमस्थानेषु विद्यमानो गुरुः शुभो भवतीति । एवं वटोः कन्यावा जन्म-

राशेः दशम, षष्ठ, तृतीय तथा प्रथम स्थानेषु गुरुः पूजया शुभो भवतीति। चतुर्थ, अष्टम तथा द्वादशस्थानेषु स्थितो गुरुः निन्दितो भवति। यः विवाहादि-शुभकार्येषु निन्दितो भवति।

ज्योति—वटु और कन्या की जन्मराशि से पञ्चम, नवम, एकादश, द्वितीय तथा सप्तम इन स्थानों पर स्थित बृहस्पति शुभ होता है। वर तथा कन्या की जन्म राशि से दशम, षष्ठ, तृतीय और प्रथम स्थानों में रहने पर गुरु पूजा करने से शुभ होता। चतुर्थ, अष्टम तथा द्वादश स्थानों में स्थित बृहस्पति निन्दित होता है।

गुरुदृष्टिपरिहारः—

स्वोच्चे स्वभे स्वमैत्रे वा स्वांशे वर्गोत्तमे गुरुः।
रिःफाष्टतुर्यगोऽपीष्टो नीचारिस्थः शुभोऽप्यसत् ॥ १८३ ॥

कुन्तला—गुरुः रिःफाष्ट = द्वादशाष्टम, तुर्यगोऽपि = चतुर्थस्थाने स्थितोऽपि यदि स्वोच्चे = कर्कराशिस्थो, स्वभे = स्वराशौ अर्थात् धनुर्मीनस्थो, स्वमैत्रे = स्वमित्रराशौ अर्थात् सिंह मेष वृश्चिकस्थः, स्वांशे = स्वनवांशे अर्थात् धनुर्मीननवांशे स्थितः वर्गोत्तमे वा. इष्टो = शुभो भवति। शुभोऽपि = पञ्चमादि शुभस्थनेषु विद्यमानोऽपि, नीचारिस्थः=नीचराशिस्थः अर्थात् मकर-स्थः वा शत्रुराशिमिथुन, कन्या, वृष तथा तुला राशिस्थो भवेत्तदा, असत् = अशुभो भवतीति वाच्यम्।

ज्योति—बृहस्पति ४, ८, १२ निन्दित स्थानों में स्थित होता हुआ यदि अपनी उच्चराशि (कर्क) अपनी राशि (धनु, मीन) तथा मित्रराशि सिंह मेष, वृश्चिक तथा स्वनवांश, अर्थात् धनु, मीन का नवांश या वर्गोत्तम नवांश की जो राशियाँ हैं उन्हीं के नवांश में स्थित हो तो शुभ हो जाता है। पञ्चमादि शुभ स्थानों में होता हुआ भी बृहस्पति यदि मकर राशि व शत्रुराशि, मिथुन, कन्या, वृष, तुला इनमें स्थित हो तो अशुभ हो जाता है।

व्रतबन्धेविशेषः—

चैत्रे मासे भास्करे मीनसंस्थे कुर्यान्मौञ्जीबन्धनं ब्राह्मणानाम्।
शुक्रस्यास्तं वाक्पतेर्नो विलोक्यं नैव ग्राह्या चन्द्रगुर्वोश्च शुद्धिः ॥१८४॥

कुन्तला—चैत्रे मासे मीनराशौ स्थिते सूर्ये ब्राह्मणानां व्रतबन्धनं कर्त्तव्यम्। तस्मिन् समये अर्थात् चैत्रमासे शुक्रगुर्वोरस्तं न विचारणीयम् तथा च चन्द्र-गुर्वोश्च शुद्धिरपि नैव ग्राह्या।

ज्योति—चैत्रमास में सूर्य के मीनराशि पर स्थित रहते ब्राह्मणों का उपनयन संस्कार शुभ कहा गया है। इस काल में गुरु और शुक्र के अस्तकाल का भी विचार नहीं करना चाहिए; और चन्द्र अथवा गुरु की शुद्धि भी नहीं ग्रहण करना चाहिए।

मीने स्थितेऽर्के द्विजपुङ्गवानां व्रतस्य वन्धे खलुमासि चैत्रे।
न जीव दोषोऽब्द विरुद्धदोषो गलग्रहानध्ययनादिदोषः॥ १८५॥

कुन्तला—चैत्रेमासे मीनराशौ स्थिते रवौ व्रतवन्धसंस्कारे गुरुर्दोषः, विरुद्धाव्ददोषः, गलग्रहः तथा च अनध्यायदोषश्च न भवतीतिवोध्यम्।

ज्योति—चैत्र मास में मीन रशि पर सूर्य के रहते यदि व्रतवन्ध करें तो वृहस्पति का दोष, विरुद्धवर्ष का दोष, और गलग्रह अनध्याय आदि का दोष नहीं माने जाते।

अग्न्याधानमुहूर्त्तः—

रेवत्युत्तररोहिणी गुरुविधुज्येष्ठा विशाखाग्निभे।
जीवे शीतकरे कुजेऽथ तरणौ केन्द्रत्रिकोणेऽथवा॥ १८६॥
पापे चोपचये स्थिते शुभतिथौ लग्ने विधौ शोभेन।
कुर्यादग्नि परिग्रहं सुर गुरौ पुष्टे शुभे रात्रिये॥ १८७॥

कुन्तला—रेवती, उत्तरात्रयं, रोहिणी पुष्यः मृगशीर्षः, ज्येष्ठा, विशाखा, तथा च कृत्तिका एषु नक्षत्रेषु तथा गुरु, चन्द्र, भौम, सूर्येषु केन्द्र (१, ४, ७, १०) त्रिकोण (९, ५) भावेषु विद्यमानेषु एवं पापग्रहे उपचयभवनेस्थिते सति, शुभतिथौ, शुभलग्ने, शुभचन्द्रे, तथा च गुरौचन्द्रेऽपि, पुष्टे = वलयुक्ते सति यज्ञनिमित्तं अग्न्याधानं कर्त्तव्यमिति।

ज्योति—रेवती, तीनों उत्तरा, रोहिणी, पुष्य, मृगशिरा, ज्येष्ठा, विशाखा, और कृत्तिका इन नक्षत्रों में वृहस्पति, चन्द्र मंगल तथा सूर्य के केन्द्र त्रिकोण में स्थित रहते और पापग्रहों के तृतीय, षष्ठ, दशम तथा

एकादश स्थानों पर स्थित रहने पर शुभ तिथि, शुभ लग्न, शुभ: चन्द्रमा के होने पर और बृहस्पति तथा चन्द्रमा के वलवान् होने पर यज्ञ के निमित्त अग्न्याधान करना चाहिए ।

वह्निवास

सैकातिथिर्वार युताकृताप्ताशेषे गुणेऽभ्रे भुवि वह्निवासः ।
सौख्याय होमे शशि युग्मशेषे प्राणार्थनाशौ दिविभूतले च ॥१८८॥

कुन्तला—सैकातिथिः = यस्मिन् दिने वह्निवासः ज्ञातव्य भवेत् तस्मिन्-दिने शुक्लादि तिथि संख्यामध्ये एक युक्ते सति यन्मानमायाति तस्मिन्माने, वार संख्यायुता अर्थात् रविवारतः वार संख्याम् उपरोक्तमान-मध्ये संयोज्य चतुर्भिर्भक्तेसति यदि, गुण = त्रयः; अभ्र = शून्यं, शेषमायाति तदा भुवि = पृथिव्यां, वह्निवासो विज्ञेयः । यद्येक अथवा, युग्म = द्वौ शेषं समायाति तदा दिवि = स्वर्गे अग्निवासो भवति तस्य फलं प्राणनाशो भवति, यदि दो शेषमवशिष्यते तदा भुवि = पृथिव्यां, वह्निवासो भवति येन हवनकर्त्तुः अर्थनाशो भवतीति वाच्यम् ।

ज्योति—जिस दिन अग्निवास देखना हो उस दिन शुक्लादि तिथिसंख्या में एक जोड़कर; रविवार से गिनकर जो वार संख्या हो उसे भी उसमें जोड़ दें । इसके बाद ४ का भाग देने से यदि शेष तीन और शून्य बचे तो अग्नि का निवास पृथ्वी पर रहता है । जिसमें हवन करने से सुख समृद्धि की प्राप्ति होती है । परन्तु यदि शेष एक अथवा दो बचे तो अग्नि वास, स्वर्ग और पृथ्वी पर होता है । इसमें हवन से प्राण और अर्थ का नाश होता है । अर्थात् एक शेष बचने पर हवन करने से अग्निवास आकाश में, प्राण नाश तथा दो शेष में अग्निवास पृथ्वी पर तथा हवन करने से अर्थ नाश होता है ।

होमाहुतिशुद्धिः—

सूर्यमात्त्रित्रिभेचान्द्रे सूर्यविच्छुक्रपङ्गवः ।
चन्द्रारेज्या गुशिखिनी नेष्टा होमाहुतिः खले ॥ १८९ ॥

कुन्तला—सूर्यभात् = यस्मिन् नक्षत्रे सूयः तिष्ठति तस्मात्, त्रित्रिभे = त्रीणि-त्रीणि नक्षत्राणि चान्द्रे = बुधः सूर्यः, शुक्रः, शनिः, चन्द्रः, आर = भौमः,

इज्यः = गुरुः, अगुः = राहुः, शिखिनो = केतुश्च ग्रहाणां क्रमेण मुखे होमाहुति गच्छति अर्थात् आहुतिः पतति इत्यर्थः। एवं खलग्रहाणां मुखे होमाहुतिः गच्छति तदा अशुभं तथा च शुभग्रहाणां मुखे शुभं भवतीति बोध्यम् ।

॥ हवनचक्रं सूर्यभात् त्रित्रिभेचन्द्रे ॥

सू०	बु०	शु०	श०	च०	मं०	वृ०	रा०	के०
३	३	३	३	३	३	३	३	३
असत्	असत्	असत्	सत्	असत्	सत्	असत्	सत्	असत्

ज्योति—जिस नक्षत्र पर सूर्य स्थित हो उसके तीन-तीन नक्षत्रों में बुध, सूर्य, शुक्र, शनि, चन्द्र, मंगल, वृहस्पति, राहु, केतु आदि ग्रहों के मुख में क्रमशः होमा हुति गिरती है। शुभ ग्रहों के मुख में गिरी हुई होमाहुति शुभ और पापग्रहों के मुख में गिरी हुई होमाहुति अशुभ मानी जाती है।

राज्याऽभिषेकमुहूर्त्तः—

राशीशलग्नेशदशाधिनाश सूर्यार तारायतिभिर्वलिष्ठैः ।
समुद्गतैर्भार्गवजीवचन्द्रैरिष्टभिषेकश्च महीपतीनाम् ॥ १९० ॥

कुन्तला—यदि जन्मराश्यधीशः, जन्मलग्नाधिपः तथा च वर्तमानदशान्तर्दशाधीशश्च सवलो भवति सूर्यः, आर = भौमः, तारापति = चन्द्रश्चापि सवलो एवञ्च शुक्र गुरुचन्द्रेषु उदिते भवेत् महीपतोनां राज्याभिषेकः शुभो भवति ।

ज्योति—जन्म राशि का स्वामी, जन्मलग्न का स्वामी और वर्तमान दशान्तर्दशा के स्वामी यदि वलवान् हों और सूर्य मंगल तथा चन्द्रमा भी वलवान् हो तथा शुक्र, वृहस्पति और चन्द्र के उदित रहने पर राजाओं का राज्याभिषेक करना उत्तम होता है।

रेवत्युरमैत्रपुष्यहरिभे ज्येष्ठाश्विनी रोहिणी
चन्द्रादित्य दिवाकरे शुभतिथौ केन्द्र त्रिकोण शुभे ।
क्रूरे चोपचये स्थिर गृहे वारे बुधादित्रये
चन्द्रेऽर्के च महीभृतां मुनिवरैरुक्तोऽभिषेकः शुभः ॥१९१॥

कुन्तला—रेवती, उत्तरात्रयम्, अनुराधा, पुष्यः, श्रवणं, ज्येष्ठा, अश्विनी, मृगशिरा, पुनर्वसु तथा च हस्तः एषु नक्षत्रेषु शुभतिथौ शुभे = शुभग्रहे केन्द्रे (१, ४, ७, १०) त्रिकोणे (९, ५) स्थिते सति तथा क्रूरग्रहाणाम् उपचय (३, ६, १०, ११) स्थानेषु विद्यमानत्वे, स्थिरलग्नेषु बुधादित्रये = बुध, बृहस्पति एवं शुक्रदिनेषु एवं च चन्द्रसूर्यवारे च महीपतीनां राज्याविषेकः मुनिभिः कथितोस्ति ।

ज्योति—रेवती, तीनों उत्तरा, अनुराधा, पुष्य, श्रवण, ज्येष्ठा, अश्विनी, रोहिणी, मृगशिरा पुनर्वसु तथा हस्त नक्षत्रों में शुभ तिथि मे केन्द्र (१, ४, ७, १०) और त्रिकोण (९, ५) मे शुभ ग्रहों के रहने पर और पापग्रह के उपचय अर्थात् तीसरे छठे दसवें, ग्यारहवें स्थान में स्थित रहने पर स्थिर लग्न में तथा बुध, बृहस्पति, शुक्र. सोम और रवि इन वारों में राजाओं का राज्याभिषेक मुनियों ने शुभ बताया है ।

दीक्षाकालः—

वैशाखे श्रवणे चैत्रे आश्विने कार्तिके तथा ।
मार्गशीर्षे तथा माघेफाल्गुने च शुभावहा ॥ १९२ ॥

कुन्तला—वैशाख, श्रावण, चैत्र, आश्विन, कार्तिक, मार्गशीर्ष, माघ फाल्गुनमासेषु दीक्षाग्रहणं शुभ भवति ।

ज्योति—वैशाख, श्रावण, चैत्र, आश्विन, कार्तिक मार्गशीर्ष, माघ तथा फाल्गुन मासों में दीक्षा शुभदायक कही गई है ।

दीक्षामुहूर्त्त—

शुक्लपक्षे शुभा दीक्षा कृष्णपक्षे मध्यफलप्रदा ।
पञ्चम्येकादशी शुक्ला सप्तमी च त्रयोदशी ॥ १९३ ॥
दशमीशुक्लपक्षस्य द्वादशी तु विशेषतः ।
तृतीया विहिता नित्यं षष्ठी सर्वत्र निन्दिता ॥ १९४ ॥

कुन्तला—शुक्लपक्षे दीक्षा ग्रहणं शुभम्, कृष्णपक्षे मध्यमं, भवति, एवं शुक्लपक्षस्य पञ्चमी, एकादशी, सप्तमी. त्रयोदशी, दशमी, द्वादशी, तृतीया च तिथयः शुभाः दीक्षाग्रहणे सन्ति । परन्तु षष्ठी सर्वत्र निन्दितोक्तास्ति ।

ज्योति—शुक्लपक्ष में दीक्षा शुभ और कृष्ण पक्ष में मध्यम होती है। दीक्षा में शुक्लपक्ष की पञ्चमी, एकादशी, सप्तमी, त्रयोनशी, दशमी, द्वादशी और तृतीया ये तिथियाँ दीक्षा ग्रहण के लिए शुभ कही गई है और अष्ठी सव कार्यों में निन्दित मानी जाती है।

मन्त्राभिषेक मुहूर्त —

रवौ गुरौ शनौ सोमे कर्त्तव्या बुध शुक्रयोः।
अश्विनीरोहिणीस्वाती विशाखा हस्तभेषु च ॥ १९५ ॥
ज्येष्ठो·तरात्रयेष्वेव कुर्यान्मन्त्राभिषेचनम् ॥ १९६ ॥

कुन्तला—रवि, गुरु, शनि, सोम बुध शुक्रवारेषु अश्विनी, रोहिणी, स्वाती, विशाखा, हस्त, ज्येष्ठा, उत्तरात्रयेषु च नक्षत्रेषु मन्त्राभिषेकः शुभः।

ज्योति—रवि, बृहस्पति, शनि, सोम, बुध तथा शुक्र वारों में और अश्विनीं, रोहिणो, स्वाती, विशाखा, हस्त, ज्येष्ठा तथा तीनों उत्तरा इन नक्षत्रों में मन्त्रभिषेक कर्म शुभ होता है।

सर्वदीक्षाग्रहणमुहूर्त्त—

चित्राद्रारेवतीपुष्यमृगाख्यशततारकाः।
धनिष्ठा मित्रपित्रर्क्षे श्रवणे सर्वदीक्षणम् ॥ १९७ ॥

कुन्तला—चित्रा, आर्द्रा, रेवती, पुष्य, मृगशीर्षः, शतभिषः, धनिष्ठा, अनुराधा, मघा तथा श्रवण एषु नक्षत्रेषु सर्वदीक्षा ग्रहण शुभम्।

ज्योति—चित्रा, । आर्द्रा, रेवती, पुष्य, मृगशिरा, शतभिषा, धनिष्ठा, अनुराधा, मघा, तथा श्रवणा इन नक्षत्रों में सर्वदीक्षा ग्रहण शुभ होता है।

शुभोदये शुभैः केन्द्रधर्मात्मजगृहस्थितैः।
सर्वदीक्षा प्रशस्ता स्यात्पापैश्च त्रिषडायगैः ॥ १९८ ॥

कुन्तला—शुभग्रहाणां लग्नेषु, शुभग्रहे केन्द्र (१, ४, ७, १०), नवम तथा पञ्चमभावे स्थिते, पापग्रहे तृतीये, षष्ठे, तथा एकादशभावे वर्तमाने सति सर्वदीक्षाग्रहणं शुभं भवति।

ज्योति—शुभ ग्रह के लग्न में, शुभग्रहों के केन्द्र, नवम पञ्चम भाव में, तथा पापग्रहों के तीसरे छठे तथा ग्यारहवें भाव में स्थिर रहने पर सर्वदीक्षा कर्म शुभ माना जाता है।

मोक्षदीक्षामुहूर्त्तः—

देवाचार्ये कर्मभावप्रपन्ने पापैर्धर्मस्थानगैर्वीर्यहीनैः।
योगे संन्यासाह्वये सुस्थिरे च कार्या तज्ज्ञैस्तत्र दीक्षामुमुक्षोः ॥१९९॥

कुन्तला—गुरोः दशमस्थे, बलहीनपापग्रहाः नवमस्थे, जन्मपत्रिकायां सन्यासयोगविद्यमाने च मुमुक्षुणां दीक्षा ग्रहणं शुभं वाच्यम्।

ज्योति—बृहस्पति के दशम भाव में, पापग्रह नवम में तथा जन्मपत्रिका में सन्यास योग के रहने पर मुमुक्षु को दीक्षा ग्रहण करना चाहिए।

दीक्षाग्रहणे विशेषकालः—

निन्दितेष्वपि कालेषु दीक्षोक्ताग्रहणे शुभा।
रविग्रहे शीघ्रसिद्धिर्दीर्घकाले शशिग्रहे ॥ २०० ॥

कुन्तला—निन्दितकालेष्वपि ग्रहण काले दीक्षा शुभा प्रोक्ता। सूर्यग्रहणे तु शीघ्रसिद्धिर्प्राप्नोति तथा चन्द्र ग्रहणे विलम्बेन च सिद्धिर्भवती बोध्यम्।

ज्योति—निन्दित कालों में भी ग्रहण के समय दीक्षा शुभ कही गई है। सूर्य ग्रहण के समय शीघ्र सिद्धि होती है तथा चन्द्र ग्रहण के समय दीर्घ काल में सिद्धि होती है।

मन्त्रग्रहणचक्रज्ञानम्—

सूर्य्यर्क्षाच्चतुर्वेदेन्द्रास्तथा सप्तदशैव हि।
सप्तैकविंशे शस्तानि मन्त्रग्रहणचक्रके ॥ २०१ ॥

कुन्तला—सूर्य्यर्क्षात् = सूर्यनक्षत्रात् चन्द्रनक्षत्रावधि गणयतया यदि, वेद = चत्वरः, चतुर्दशः, सप्तदशः, सप्तः, तथा एकविंशः; संख्यकनक्षत्राणि मन्त्रग्रहणे शुभानि सन्ति।

ज्योति—सूर्य नक्षत्र से दिन नक्षत्र तक गणना करने पर यदि ४, १४, १७, ७, २१ वें नक्षत्र आवें तो मन्त्र ग्रहण के लिए उत्तम होता है।

यन्त्रमन्त्रव्रतादि साधनमुहूर्त्तः—

उफाहस्ताश्विनी कर्णविशाखामृगभेऽहनि ।
शुभसूर्ययुते शस्तं मन्त्र यन्त्रव्रतादिकम् ॥ २०२ ॥

कुन्तला—उ. फा., हस्तः, अश्विनी, श्रवणः विशाखा तथा मृगशीर्षञ्च रविवारयुक्तो शुभदिवसे यन्त्रमन्त्रव्रतादिधारणं शुभं भवतीति वोध्यम् ।

ज्योति—उ. फा. हस्त, अश्विनी, श्रवण, विशाखा, तथा मृगशीर्ष नक्षत्रों में रविवार युक्त शुभ दिनों में यन्त्र मन्त्र तथा व्रत आदि का धारण शुभ होता है ।

वीरवैतालसाधनमुहूर्त्तः—

मघार्द्रा भरणी मूले मृगाङ्के सुबुधे घटे ।
शुद्धाष्टम भृगौ तूर्ये वीरवैताल साधनम् ॥ २०३ ॥

कुन्तला—मघा, आर्द्रा, भरणी तथा मूलनक्षत्रेषु मकर, एवं कुम्भ लग्ने बुधवासरे अष्टमलग्न शुद्धे, चतुर्थस्थ शुक्रे वीरवैताल साधनं शुभम् ।

ज्योति—मघा, आर्द्रा, भरणी तथा मूल नक्षत्रों में मकर तथा कुम्भ लग्न में बुध के अष्टम लग्न शुद्ध होने पर तथा शुक्र के चतुर्थ में स्थित रहते वीरवैताल साधन शुभ माना गया है ।

विवाहसमयशुद्धिः—

वक्रे चैवातिचारे त्रिदशपतिगुरौ दैत्यपूज्ये च
लुप्ते गुर्वादित्येऽधिमासे दिवसकर विधौ सङ्गमे चैत्रपौ ।
विष्ट्यां केतूदये वा यदि च सुरगुरौ सिंह संस्थे
मघेज्ये, वर्षे लुप्ते च वोढुः सुनियतमरणं देवकन्यावरस्य ॥२०४॥

कुन्तला—त्रिदशपति = त्रि, एवं दशमस्थानाधीशः, गुरुः, दैत्यपूज्ये = शुक्रश्च, वक्रे = वक्रगतो वा अतिचारे अथवा गुर्वादित्ये = खरमासे सति एवं चाधिमासे, दिवसकरः = सूर्यं, विधौ = चन्द्रश्च संगमे, चौत्रपौ = चैत्रपौषे विष्ट्यां केतूदये वा, तथा सिंहस्थे मघानक्षत्रे च गुरौ, संवत्सरलुप्ते देवकन्यावरस्य = इन्द्रकन्यावरस्यापि निधनं भवतीति वाच्यम् ।

ज्योति—तीसरे दशवें का अधिपति गुरु और शुक्रवकी अतिचारी हों अथवा अस्त हों, या गुर्वादित्य (खरमास) हो, अधिमास में सूर्य चन्द्र के संगम में चैत्र तथा पौष मास में, भद्रा में, केतु के उदय के समय वृहस्पति के सिंह गत होने पर अथवा मघा नक्षत्र पर वृहस्पति होने से अथवा लुप्त संवत्सर होने पर यदि देवकन्या (इन्द्र की पुत्री) का भी विवाह हो तो विधवा हो जाती है।

लुप्तसम्वत्सरः—

अतिचारगतो जीवस्तं राशिं नैति चेत्पुनः।
लुप्तसंवत्सरो ज्ञेयः कुम्भाजोक्षझषैर्विना ॥ २०५ ॥

कुन्तला—सुगमः—

ज्योति—वृहस्पति अतिचारी होकर, जिस राशि से अतिचारी हुआ हो फिर उसी राशि पर जब लौटकर न आजाय, तबतक का समय लुप्त संवत्सर माना जाता है। कुम्भ, मेष, वृष तथा मीन राशि से अतिचारी हो और लौटकर वृहस्पति इन राशियों पर नहीं आता तब तक लुप्तसम्वत्सर होता है।

शुभकर्मणि गुर्विचारः—

नीचस्थो सिंहगो वा यदि भवति गुरुः सूर्यराशौ च लीनः,
संयुक्तो वा यदा स्याद्दशशतघृणिना वृद्धरूपोऽथबालः।
यात्रा गेहं विवाहः श्रुति समरविधिर्यज्ञचूणादि सर्वम्
वापी चोद्यानकूपे न भवति शुभदं यद्यदिष्टं च लोके ॥ २०६ ॥

कुन्तला—यदि गुरु नीचस्थः, सिंहराशिस्थितो भवेत् अथवा वालवृद्धो वा चेत् तदा यात्रा, गृहप्रवेशः, विवाहः, वेदारम्भः, देवपतिष्ठा यज्ञकर्म, चूणाकर्म, वापी, उद्यान तथा कुपनिर्मादि शुभकार्यं न कर्त्तव्यमिति।

ज्योति—वृहस्पति यदि नीच राशि में तथा सिंह राशि में स्थित होकर वृद्ध या वालक हो तो यात्रा, गृहप्रवेश, विवाह, वेदारम्भ, देवप्रतिष्ठ-यज्ञकर्म, चूणाकर्म, वावली वाग वगीचा और कूपनिर्माण आदि शुभकर्म नहीं करना चाहिए।

सिंहस्थगुरोः परिहारः—

सिंहे गुरौ गते कार्यो न विवाहः कदाचन।
मेषस्थेऽपि दिवानाथे सिंहस्थोऽपि शुभप्रदः॥ २०७॥

कुन्तला—सिंहराशौ गुरोः विद्यमाने विवाहः कदापि न कर्त्तव्यमिति। सूर्यः मेषे स्थिते सति सिंहस्थोऽपि गुरुः शुभो भवति।

ज्योति—सिंह राशि में बृहस्पति के होने पर विवाह कदापि न करें। यदि सूर्य मेषराशि के हो तो सिंहस्थ बृहस्पति शुभ दायक होता है।

मकरस्थगुरुः परिहारः—

नर्मदापूर्वभागे तु शोणस्योत्तरदक्षिणे।
गण्डक्याः पश्चिमे भागे मकरस्थोनदोषभाक्॥ २०८॥

कुन्तला—नर्मदानद्याः पूर्वे तटे, शोणभद्रस्योत्तरे तथा दक्षिणे भागे एवञ्च गण्डक्याः पश्चिमभागे च मकरस्थो गुरुः दोषयुक्तो न भवति।

ज्योति—नर्मदा नदी के पूर्वतट और शोण के उत्तरी तथा दक्षिण भाग में और गण्डकी नदी के पश्चिम भाग में मकराशिगत बृहस्पतिदोष दायक नहीं होता।

मृगराशिगते जीवे दिनषष्ठिपरित्यजेत्।
गर्गादिमुनयः सर्वे जगदुः सर्वकर्मसु॥ २०९॥

कुन्तला—मकरराशि स्थिते सूर्य षष्ठिदिनं यावत् सर्वाणि शुभकार्याणि त्याज्यम्। गर्गादिमुनयः उक्तवान् इति।

ज्योति—बृहस्पति यदि मकर राशि पर स्थित हो तो साठ दिन सभी कार्यों में त्याग देना चाहिए। ऐसा गर्गादि मुनियों ने सभी शुभ कर्मों के लिए कहा है।

वक्रे चैवातिचारे च अष्टविंशति-वासरान्।
वर्णयेत्सर्वकार्येषु केचिदाहुर्महर्षयः॥ २१०॥

कुन्तला—गुरोः वक्रगतेरथवातिचारे च अष्टविं'शति'दिनानि समस्तशुभकर्मणि हेयानि। कश्चिद् मुनिर्वाक्यमस्ति।

ज्योति—वक्री व अतिचारी बृहस्पतिमें २८ दिन तक समस्त कार्यों में त्याग देना चाहिए। यह किसी महर्षि का वचन है।

गुरुशुक्रयोर्वृद्धत्ववालत्व चः—

वृद्धवाल्यंदशाहं च तथा सप्तदिनं परैः।
कैश्चित्पञ्चदिनं प्रोक्तं त्र्यहं प्रोक्तं तु कर्हिचित ॥ २११ ॥

कुन्तला—गुरुशुक्रयोः वृद्धत्ववालत्वं च दशदिनपर्यन्तं भवति केचन् सप्त, पञ्च, त्रिणिदिनानि अपि कथयन्ति।

ज्योति—बृहस्पति और शुक्र का वृद्धत्व तथा वालत्व दस-दस दिन तक रहता है। कोई-कोई आचार्य सात, पांच, और तीन दिन भी कहते हैं।

जन्ममासादिषुवर्जितकार्याणि—

जन्ममासि न च जन्मभेतिथौ नैव जन्मदिवसेऽपि कारयेत्।
आद्यगर्भ-दुहितुः सुतस्य वा ज्येष्ठमासि न च मंगलं भवेत् ॥ २१२ ॥

कुन्तला—जन्ममासः, जन्मनक्षत्रं, जन्मतिथिः, जन्मदिनं च, ज्येष्ठमासे; आद्यगर्भस्य दुहितुः सुतस्य वा = अर्थात् प्रथम गर्भे उत्पन्न कन्या अथवा पुत्रस्य वा विवाहो नैव कारयेत् अर्थात् त्रिजेष्ठ सर्वत्र निन्दितो भवति। कोऽपि मंगलकार्यं न करणीयमिति।

ज्योति—जन्ममास, जन्मनक्षत्र, जन्मतिथि जन्मदिन, तथा ज्येष्ठ महीने मेंप्रथम गर्भ में उत्पन्न कन्या या पुत्र का विवाह नहीं करना चाहिए। अर्थात् त्रिजेष्ठ का होना उत्तम नहीं माना जाता। इसमें कोई भी माङ्गलिक कार्य शुभ नहीं कहा गया है।

ज्येष्ठमासेविशेषनिन्द्यः—

द्वौ ज्येष्ठौ मध्यमौ प्रोक्तावेकज्येष्ठ शुभप्रदः।
ज्येष्ठत्रयं न कुर्वीत विवाहे सर्वसम्मतम् ॥ २१३ ॥

कुन्तला—विवाहे ज्येष्ठद्वयं मध्यमं, तथा एकज्येष्ठः शुभो भवति, परन्तु वर, कन्या तथा ज्येष्ठमासश्च (त्रिज्येष्ठः) कदापि न शुभः।

ज्योति—विवाह में दो ज्येष्ठ मध्यम, और एक ज्येष्ठ शुभ होता है। वर, कन्या और ज्येष्ठमास ये तीनों हों तो विवाह कदापि न करना चाहिए।

विवाहे विशेषविचारणीयः—

चूणाव्रतं चापि विवाहतो व्रता-
च्चूडा च नैष्टा पुरुषत्रयान्तरे।
वधूप्रवेशाच्च सुताविनिर्गमः
षण्मासतो वाऽब्द विभेदतः शुभः ॥ २१४ ॥

कुन्तला—विवाहानन्तरं. पुरुषत्रयान्तरे = एकस्मिन् कुले त्रिपुरुषान्तरे चूडा, व्रतवन्धः, तथा च समावर्त्तनादि संस्काराः शुभाः न भवन्ति। व्रतवन्धस्य षण्मासान्तरे बालकस्य चूणाकर्म शुभो न भवति। एवमेव वधूप्रवेशान्तन्तरं कन्यायाः प्रथमविनिर्गमः नोचितम्। यदि अब्द विभेदः स्यात् अर्थात् वर्षपरिवर्तनः भवेत्तदा चौल, यज्ञोपवीतविवाहादि शुभकार्याणि कर्त्तुं शक्यते इति।

ज्योति—विवाह के बाद छ मास के भीतर कुल में तीन पुरुषपर्यन्त किसी दूसरे बालक का चौलकर्म, उपनयन और समावर्वन कर्म शुभ नहीं होता। व्रतवन्ध के बाद छः मास के भीतर किसी बालक का चौलकर्म शुभ नहीं होता। वधू प्रवेश के बाद छः मास के भीतर पुत्री की प्रथम विदाई नहीं कहा गया है। यदि वर्ष वदल जाय तो चौलकर्म, यज्ञोपवीत और विवाह आदि सभी शुभकर्म किए, जा सकते हैं।

एकस्मिन् दिनेवर्जितशुभकर्मणि—

भातृयुगे स्वसृयुगे कन्याभ्रातृयुगे तथा।
न कुर्यात् मङ्गलं किञ्चिदेकस्मिन्मण्डपेऽहनि ॥ २१५ ॥

कुन्तला—भ्रातृयुगे = सहोदरभ्रातृद्वयस्य, स्वसृयुगे=सहोदरकन्यकाद्वयस्य च एवं एक कन्या तथा एकसहोदरस्य च एकस्मिन् मण्डपे एकस्मिन् दिने च कोऽपि माङ्गलिककार्यं न कर्त्तव्यमिति।

ज्योति—दो भाइयों का, दो बहनों का, एक भाई तथा एक बहन का एक ही मण्डप में कोई भी मङ्गलकार्य नहीं करना चाहिए।

विवाहे आगतविघ्नानां परिहारः—

वध्वा वरस्यापि कुले त्रिपुरुषे नाशं व्रजेत् कश्चन निश्चयोत्तरम् ।
मासोत्तरं तत्र विवाहइष्यतेशान्त्याथवा सूतकनिर्गमे परैः ॥ २१६ ॥

कुन्तला—विवाहनिश्चयोत्तरं वध्वा वरस्यापि कुले, त्रिपूरुषे = त्रिपुरुषपर्यन्तं कश्चन् मृत्युर्भवेत् तदा मासोत्तरं विवाहः शुभो भवति केचन् आचार्याः मरणसूत्तकोत्तरं शान्त्या अर्थात् पूजनदानादिकं च कृत्वा विवाहः शुभो वदन्ति ।

ज्योति—विवाह निश्चित हो जाने के वाद यदि वधू तथा वर के तीन पुरुष पर्यन्त कुल में कोई प्राणी मर जाय तो वह मरण के दिन से एकमास बाद शान्ति करके विवाह कर सकता है । किसी आचार्य के मत से मरणसूतक व्यतीत होने पर शान्ति करके विवाह कर्म शुभ कहा गया है ।

कार्यवशग्रहशुद्धिः—

रविशुद्धौ गृहकरणं रविगुरुशुद्धौ व्रतोद्वाहाः ।
क्षौरं ताराशुद्धौ सर्वं चन्द्राश्रितं कर्म ॥ २१७ ॥

कुन्तला—रविशुद्धौ, गृहकरणं = गृहनिर्माणं शुभं भवति । रविगुरुशुद्धौ यज्ञोपवीतं विवाहं च शुभं भवति । ताराशुद्धौ क्षौरकर्मं तथा चन्द्र शुद्धौ सर्वाणि कार्याणि करणीयमिति ।

ज्योति—सूर्य के शुद्ध होने पर मकान वनाना, सूर्य और गुरु के शुद्धि में व्रतवन्ध और विवाह शुभ होता है । तारा की शुद्धि होने पर क्षौर कर्म तथा चन्द्र के शुद्ध रहने पर समी कार्य करना चाहिए ।

मंगलीयोगः—

मूर्त्तौ तुर्येऽष्टमे भौमे सप्तमेऽन्त्ये च जन्मनि ।
भर्त्तुर्योषिद्विनाशः स्यात् स्त्रीस्यात् भर्त्तुविनाशिनी ॥ २१८ ॥
एवं विधे कुजे संस्थे विवाहो न कदाचन ।
कार्यो वा गुणवाहुल्ये कुजो वा तादृशे द्वयोः ॥ २१९ ॥

कुन्तला—यदि जन्मकुण्डल्यां भौमः लग्ने, चतुर्थे, अष्टमे, सप्तमे तथा द्वादशे स्थितो भवेत्तदा स्त्रीविनाशः स्यात् । एवमेव यदि कन्यायाः पत्रिकायां

ग्रहाः स्युस्तदा-वरस्य नाशो भवतीति ज्ञेयम् । अतः द्वयोः वर कन्यकयोः कुण्डल्यां तादृश्ये भौमो भवेत्तदा विवाहः शुभो भवति । गुणवाहुल्येऽपि भौमदोषः अवश्यमेव विचारणीमिति ।

ज्योति—वर की कुण्डली में मंगल यदि जन्म लग्न में, चौथे, आठवें, सातवे और वारहवें हो तो स्त्री का नाश होता है। उसी तरह यदि स्त्री के कुण्डली में मंगल हो तो पति का नाश करता है। इस प्रकार एक के कुण्डली में इस प्रकार का योग हो तो विवाह नहीं करना चाहिए, परन्तु यदि दोनों के पत्री में एक तरह मंगल पड़े तो विवाह शुभ कहा गया है। इस प्रकार गुण वाहुल्य में भी मंगली दोष का विचार करना आवश्यक होता है। अन्यत्र भी कहा गया है—

लग्ने व्यये च पाताले जामित्रे चाष्टमे कुजः ।
कन्याभर्त्तुविनाशाय भर्त्तुः पत्नी विनाशकृत ॥

इसे लग्न और चन्द्रमा दोनों से विचार करना चाहिए।

कन्यायाः विवाहफलम्—

गुरुशुद्धिदशेन कन्यकानां समवर्षेषु षडब्दकोपरिष्टात् ।
रविशुद्धिवशाच्छुभो नराणामुभयोश्चन्द्रविशुद्धितो विवाहः ॥ २२० ॥

कुन्तला—षड्ब्दकोपरिष्टात् = षड्वर्षानन्तरं समवर्षेषु गुरुशुद्धिवशेन = ४, ८, १२ रहितेगुरुः, कन्यायाः विवाहो शुभो भवति । एवमेव विषमवर्षेषु सूर्यशुद्धिवशात् अर्थात् सूर्यस्य ४, ८, १२ रहिते सति वालकानां विवाहः शुभो भवति । विवाहकाले वरवध्वोः चन्द्रशुद्धिः अवश्यमेव विचारणीयमिति ।

ज्योति—छः वर्ष के वाद समसंख्यक वर्षों में वृहस्पति की शुद्धि में कन्या का विवाह शुभ होता है। विषम वर्षों में सूर्य की शुद्धि होने पर पुरुषों का विवाह शुभ होता है। विवाह समय में कन्या तथा वर दोनों की चन्द्र शुद्धि देखना आवश्यक है।

विवाहनक्षत्राणि—

रेवत्युत्तररोहिणीमृगमघा मूलानुराधाकरे
स्वातीषु प्रमदातुला मिथुनगो लग्ने विवाहः शुभः ।

मासाः फाल्गुन माघमार्गशुचयो ज्येष्ठास्तथा माधवः
शस्ता सौम्यदिने तथैव तिथयो रिक्ताकुहूवर्जिता ॥ २२१ ॥

कुन्तला—रेवती, उत्तरात्रयः, रोहिणी, मृगशिरः, मघा, मूलं, अनुराधा, हस्तः, स्वाती एषु नक्षत्रेषु कन्या, तुला, मिथुन, वृषलग्नेषु, फाल्गुन मार्गशीर्षः, आषाढ, ज्येष्ठ तथा वैशाखमासेषु च शुभदिवसेषु रिक्ता (४, ९, १४) तथा अमावस्यारहितेषु तिथिषु विवाहः शुभो भवति ।

ज्योति—रेवती, तीनों उत्तरा, रोहिणी, मृगशिरा, मघा, मूल, अनुराधा, हस्त, स्वाती इन नक्षत्रों में, और कन्या, तुला, मिथुन और वृष लग्नों में फाल्गुन. मार्गशीर्ष, आषाढ, ज्येष्ठ, तथा वैशाख इन महीनों में शुभ दिनों में रिक्ता (४, ९, १४) और अमवस्या इनसे वर्जित तिथियों में विवाह शुभ होता है ।

वरकन्ययोः प्रीतिः—

वर्णो योनिश्च मैत्री च ग्रहाणां गणसंज्ञकम् ।
वर्गश्च राशिकूटं च नाड़ी चैते गुणाऽधिकाः ॥ २२२ ॥

कुन्तला—वर्णः, योनिः, ग्रहमैत्री, गणः वर्गः, राशिकूटः, नाडीश्च क्रमशः गुणाधिकाः भवन्ति ।

ज्योति—वर्ण, योनी, ग्रहमैत्री, गण, वर्ग, राशिकूट, नाड़ी यह क्रमशः गुणाधिक होते है ।

वर्णविचारः—

कर्कालिमीनविप्रेशो मेषः सिहो धनुर्नृपः ।
वृष कन्या मृगो वैश्यः शूद्रो युग्मतुला घटः ॥ २२३ ॥
वर्ण श्रेष्ठा तु या नारी तस्या भर्त्ता न जीवति ।
यदि जीवति चेद्भर्त्ता विदेशनिरतः सदा ॥ २२४ ॥

कुन्तला—कर्कः, वृश्चिकः तथा मीनः विप्रवर्णाः, मेषः, सिंहः, धनुः, क्षत्रियवर्णाः, वृष, कन्या, तथा मकरः वैश्यवर्णाः, एवं मिथुन, तुला, कुम्भश्च शुद्रवर्णाः सन्ति । वर्णेषु कन्यायाः वर्णः यदि श्रेष्ठः तदा तस्या भर्त्ता न जीवति यदि जीवति तदा परदेशे एव निवसति ।

ज्योति—कर्क, वृश्चिक तथा मीन ये ब्राह्मण वर्ण हैं। मेष, सिंह, और धनु ये क्षत्रिय वर्ण है। वृष, कन्या, और मकर ये वैश्य वर्ण हैं। मिथुन, तुला, कुम्भ ये शूद्र वर्ण हैं। यदि वर्णो में नारी का वर्ण श्रेष्ठ हो तो उसका भर्त्ता नहीं जीता। यदि जीता भी है तो परदेश में रहता है।

योनि विचारः—

अश्वौ शतभिषाश्विन्यौ रेवती भरणी गजः।
छागश्च कृत्तिकायुष्योनागौ च मृगरोहिणी ॥ २२५ ॥
आर्द्राभूलमपि श्वानौ मूषकौ भगपैतृकौ।
आदित्योऽहिश्च मर्जारः वारि विष्णुश्च मर्कटः ॥ २२६ ॥
अहिर्बुध्न्यार्यमे गावौ मित्रज्येष्ठे मृगौ तथा।
वसुप्रोष्ठपदे सिंहो हस्तस्वाती च महिषौ ॥ २२७ ॥
चित्राविशाखे व्याघ्राख्यौ अभिजिद्विश्वे च बभ्रकौ।
योनयः, कथिता भानां वैरमैत्री विचारयेत् ॥ २२८ ॥

अधोलिखित चक्रेण 'कुन्तला' 'ज्योति' स्पष्टम्।

योनिवोधकचक्रम्

अश्व	गज	छाग	नाग	श्वान	मूषक	मर्जार	योनयः
अश्वि	रे.	पु.	रो.	आ.	पू. भा.	पुनर्वसु	नक्षत्र
शं	भ.	कृ.	मृ.	मू.	म.	आश्ले.	नक्षत्राणि
गो	महिष	मृग	व्याघ्र	वानर	सिंह	नकुल	योनिः
उ. फा.	स्वा.	ज्ये.	चि.	पू. भा.	घ.	अभि.	नक्षत्राणि
उ. भा.	ह.	अनु.	वि.	श्रवण	पू. षा.	उ. षा	नक्षत्राणि

योनिमैत्रीविचारः—

गोव्याघ्रं गजसिंहमश्वमहिषं श्वैणं च बभ्रूरगं
वैरं वानरमेषयोश्च सुमहत्तद्वद्बिडालोन्दुरम्।

लोकानां व्यवहारतोऽन्यदपि च ज्ञात्वा प्रयत्नादिदं
दम्पत्योर्नृपभृत्ययोरपि सदा वर्ज्यंशुभस्यार्थिभिः ॥ २२९ ॥

कुन्तला—गोव्याघ्रम्; गजसिंहम्, अश्वमहिषम्, श्वानमृगम्, नकुलसर्पः, वानरमेषः, विडालमूषकश्च परस्परमहद्वैरमस्ति। एवं विचारः दम्पत्योर्मध्ये तथा नृपभृत्ययोर्मध्ये अवश्यमेव त्याज्यमिति।

ज्योति—गौ व्याघ्र, गजसिंह, अश्वमहिष, श्वानमृग, नकुल सर्प, वानर मेष और विडालमूषक इसका परस्पर महा वैर है। यह वैर स्त्री पुरुष और स्वामी सेवक में अवश्य त्याग देना चाहिए।

राशिस्वामिविचारः—

कुज शुक्रज्ञेन्द्वर्क ज्ञशुक्रकुजजीवसौरिगुरवः।
भेशा नवांशकानामजमकरतुला कुलीराद्याः ॥ २३० ॥

कुन्तला—मेषराशेः स्वामी भौमः, वृषस्य शुक्रः, मिथुनस्य बुधः, कर्कस्य चन्द्रमा सिंहस्य सूर्यः, कन्यायाः बुधः, तुलाया, शुक्रः, वृश्चिकस्य भौमः, धनुराशेः गुरुः, मकरकुम्भयोः शनिः, मीनस्य च गुरुः अधिपाः भवन्ति। एवमेव नवांशकानां अधिपाः क्रमेण मेष, मकर, तुला तथा च कर्कश्च मेषादिराशीनां भवन्ति।

ज्योति—अधोलिखित चक्र से स्पष्ट है।

राशिस्वामिचक्र

राशयः	मे.	वृ.	मि	क.	सि.	क.	तु.	वृ.	ध.	म.	कु.	मी
अधिपाः	मं.	शु.	बु.	चं.	सू.	बु.	शु.	मं.	गु.	श.	श.	गु.

नवमांशचक्र

राशयः	मे.	वृ.	मि.	क.	सि.	क.	तु.	वृ.	ध.	म.	कु.	मी.
नवांशपति	१	१०	७	४	१	१०	७	४	१	१०	७	४

ग्रहमैत्री—

शत्रुमन्दसितौ समश्च शशिजो मित्राणि शेषाः रवेः
तीक्ष्णांशु र्हिमरश्मिजश्च सुहृदो शेषाः समाः शीतगोः ।
जीवेन्दूष्णकराः कुजस्य सुहृदो शोऽरिः सितार्की समौ
मित्रे सूर्यसितौ बुधस्य हिमगुः शत्रुः समाश्चापरे ॥२३१॥

सौरेः सौम्यसितावरी रविसुतो मध्योऽपरे त्वन्यथा
सौम्यार्की सुहृदौ समाकुजगुरु शुक्रस्य शेषावरी ।
शुक्रज्ञौ सुहृदौ समः सुरगुरुः सौरेश्च चान्येऽरयः
तत्काले च दशायबधुसहृजस्वन्त्येषमित्रंस्थिताः ॥२३२॥

'कुन्तला' एवं 'ज्योति' टीका अधोलिखितचक्रेण स्पष्टम्—

ग्रहमैत्रीबोधकचक्रम्

सू.	चं.	म.	बु	गु.	शु.	श.	वार
चं. वृ. मं.	सू. बु.	चं. सू. वृ	श. सू.	मं. सू. चं.	बु. श.	बु. श.	मित्र
बु.	वृ. मं. शु. श.	शु. श.	वृ. श. मं.	श.	मं. वृ.	वृ.	सम
शु. श.	०	बु.	चं.	शु. बु.	सू. चं.	सू. चं. मं.	शत्रु

गणविचारः—

हस्तस्वाती–श्रुतिमृगशिराः पुष्यमैत्राश्वभानि
पौष्णादित्ये जगुरिहबुधा देवसंज्ञानि भानि ।
प्राहुर्मर्त्या ह्यसुडुगणं नूनमेतन्मुनीन्द्राः ॥ २३३ ॥
चित्राश्लेषानिर्ऋतिपितृभे वासवं वारुणर्क्षम्
शक्राग्न्योर्भं सुरपदहनर्क्षं च रक्षोगणोऽयम् ।
श्रेष्ठा प्रीतिः स्वकुलगणयोर्मध्यमां देवपुंसां
मर्त्यैर्दैत्यैर्मरणराक्षसैर्वैरमाहुः ॥ २३४ ॥

कुन्तला—हस्तः, स्वाती, श्रवणः, मृगशीर्षः, पुष्यः, अनुराधा, अश्विनी, रेवती, पुनर्वसु च नक्षत्राणां पण्डितैः देवसंज्ञा प्रदत्ता । पूर्वात्रयं, आर्द्रा, भरणी,

रोहिणी, उत्तरात्रयं च नक्षत्राणां मनुष्यगणः कथ्यते। चित्रा, आश्लेषा, मूलं, मघा, धनिष्ठा शतभिषा, विशाखा तथा ज्येष्ठा राक्षसगण इति कथ्यते। वरकन्ययोः एकस्मिन्नेव जन्मनक्षत्रो भवेत्तदा उत्तमा प्रीतिः, तथा च वरकन्ययोः पृथक्-पृथक् जन्मनक्षत्रो भवेत्तदा मध्यमाप्रीतिः, एवमेव वरकन्ययोर्मध्ये एकः राक्षसगणः द्वितीयश्च मनुष्यगणः भवेत्तदा मरणं वाच्यम्। तथा च देवराक्षसगणयोः वरकन्ययोर्मध्ये सदैव वैरभावं भवतीति।

ज्योति—हस्त, स्वाती, श्रवण, मृगशिरा, पुष्य अनुराधा, अश्विनी, रेवती, पुनर्वसु इन नक्षत्रों को पण्डित जन देवसंज्ञक कहते हैं। तीनों पूर्वा, आर्द्रा, भरणी, रोहिणी, तीनों उत्तरा इननक्षत्रों को मनुष्य गण कहते हैं। चित्रा, आश्लेषा, मूल, मघा, धनिष्ठा, शतभिषा विशाखा ज्येष्ठा ये नक्षत्र राक्षसगण हैं। अपने ही एक गण में वर कन्या का जन्म हो तो उत्तम प्रीति, देवगण तथा पुरुषगण में वर कन्या का पृथक्-पृथक् जन्म नक्षत्र हो तो मध्यम प्रीति, वर कन्या में एक राक्षस और एक मनुष्यगण हो तो मरण कहा गया है और देव राक्षस के संयोग में अर्थात् विवाह होने पर वर कन्या में सदैव वैरभाव बना रहता है।

वर्गविचारः—

अकचतपयश वर्गाः खगेशमार्जारसिंहशुनाम्।
सर्पाखुमृगवीनां निजपञ्चमवैरिणामष्टौ ॥ २३५ ॥

कुन्तला—अवर्गः गरुणः, कवर्गः, मार्जारः, चवर्गः सिंह, टवर्गः श्वानः, तवर्गः सर्पः, पवर्गः मूषकः, यवर्गः मृगः तथा च शवर्गः मेष इति स्वामिनः भवन्ति। एषु स्ववर्गात् पञ्चमः शत्रुः भवतीति बोध्यम्।

ज्योति—अवर्ग का गरुण, कवर्ग का मार्जार, चवर्ग का सिंह, टवर्ग का श्वान, तवर्ग का सर्प, पवर्ग का मूषक, यवर्ग का मृगः तथा शवर्ग का मेष स्वामी कहे गये हैं। अपने वर्ग से पञ्चम वर्ग वैरी होता है।

राशिकूटविचारः—

षट्काष्टके मृत्युरपत्यहानिः पाणिग्रहःस्यान्नवपञ्चमेषु।
नैः स्वं धनद्वादशके परेषु प्रेमातिरेकी हि वधूवरस्य ॥ २३६ ॥

कुन्तला—वरराशेः कन्यायाः राशिः ६, ८, यदि भवेत्तदा मृत्युर्वाच्यम्। यदि ६, ५ भवेत्तदा सन्तानहानिः, २, १२ तथा दरिद्रता एवं एतदतिरिक्तं ३, ११, ४, १० तथा ७ भवेत्तदा वरकन्ययोर्मध्ये प्रेमाधिक्यं भवतीति बोध्यम्।

ज्योति—यदि वर की राशि से कन्य की राशि छठी, आठवीं राशि होने पर विवाह हो नो मृत्यु, नवीं, पांचवीं राशि होने पर सन्तानहानि, दूसरी, बारहवीं राशि होने पर ददिद्रता इसके अतिरिक्त राशि अर्थात् ३, ११, ४, १० या ७ वीं राशि होने पर विवाह हो तो वर और वधू दोनों में प्रेम की अधिकता होती है।

नाडीचक्रम—

आवृत्तिभिर्भैस्त्रिभिरश्विमाद्यैः क्रमोत्क्रमाभ्यां गणयेदुडूनि।
तदैकपर्वण्युभयोश्च धिष्ण्येनेष्टा नृनार्योर्भृशमेकनाडी ॥ २३७ ॥

कुन्तला—अश्विन्यादि क्रमेण विपरीतेन त्रिरावृत्ति गणनया यदि एकस्मिन् पर्वे वरकन्ययोः नक्षत्रे भवेत्तदा एकनाडीभवति। वरकन्ययोरेक नाडी अशुभमिति।

ज्योति—अश्विनो आदि नक्षत्रों को क्रम से और विपरीत क्रम से तीन-तीन आवृत्तियां करके गणना करने पर यदि एक ही पर्व में वर कन्या दोनों का नक्षत्र हो तो एकनाडी होती है। वर कन्या की एक नाडी होना अशुभ माना जाता है।

नाडीचक्र

अश्वि,	आ.	पु.	उ. फा.	ह.	ज्ये.	मू.	शत.	पू. भा.	आदि नाडी
भ.	मृ.	पुष्य	पू. फा.	चि.	अनु.	पू. षा.	धनि.	उ. भा.	मध्य नाडी
कृ.	रो.	श्ले.	म.	स्वा.	वि.	उ. षा.	श्र.	रेवती	अन्त नाडी

नक्षत्रराश्यैक्यविचारः—

रश्यैक्ये चेद्भिन्नमृक्षे द्वयोः स्यान्नक्षत्रैक्ये राशियुग्मं तथैव।
नाडी दोषो नो गणानां च दोषो नक्षत्रैक्ये पावभेदे शुभं स्यात् ॥२३८॥

कुन्तला—वरवध्वोः एकराशिः तथा च भिन्ननक्षत्रं च भवेत्तदा नाडी गणदोषश्च न भवतीति। नक्षत्रैक्ये यदि भिन्नराशिः स्यात् तदापि पूर्वं दोषो न भवति। द्वयोः राश्यैक्यं नक्षत्रैक्यं च यदा स्यात् तदा पादभेदे सति शुभं भवतीति वाच्यम्।

ज्योति—वर वधू दोनों की एक राशि होने पर यदि भिन्न-भिन्न नक्षत्र हो तो नाडी दोष और गण दोष नहीं होता। नक्षत्र की एकता होने पर यदि भिन्न राशि होवे तो भी पूर्वोक्त दोष नहीं होता। वर वधू दोनों भी राशि की एकता और नक्षत्र की एकता होने पर यदि चरण भेद हो तो भी विवाह शुभ माना जाता है।

पादवेधः—

आद्यांशेन चतुर्थांशं चतुर्थांशेन चादिमम्।
द्वितीयेन तृतीयं तु तृतीयेन द्वितीयकम्॥ २३९॥

कुन्तला—आदिचरणेन चतुर्थस्य वेधो भवति। चतुर्थेन आदिचरणस्य वेधो भवति एवं द्वितीयेन तृतीयस्य तथा तृतीयेन द्वितीयस्य वेधो भवतीति बोध्यम्।

ज्योति—आदि चरण से चतुर्थचरण का वेध होता है। चतुर्थ चरण से आदि चरण का वेध होता है। इसी प्रकार द्वितीय चरण से तृतीय चरण का तथा तृतीय चरण से द्वितीय चरण का वेध होता है।

विवाहदिनस्य संशोधने दशयोगविचारः—

शून्यैकवेदऋतवो दश रुद्रयुक्ता
पञ्चैकनाग-विधुनन्द कुखाश्विभिश्च।
आद्यर्क्षतः शशिदिवाकरधिष्ण्य योगे
भागश्च देय उडुभिर्दशयोग चक्रम्॥ २४०॥

कुन्तला—अश्विनी नक्षत्रतः विवाहनक्षत्रं यावद् गणनया यस्मिन्नक्षत्रे चन्द्रः तिष्ठति तथा यस्मिन्नक्षत्रे सूर्यश्च स्थितो भवेत् तयोः नक्षत्रयोः योगे सति

यद मानं तन्मध्ये सप्तविंशतिभक्ते च यदि ०, १, ४, ६, १०, ११, १५, १८, १९ तथा च २० शेषाङ्कं लभेत् तदा दशयोग चक्रमिति बोध्यम् ।

ज्योति—अश्विनी से विवाह के दिन नक्षत्र तक गिनें, जिस नक्षत्र पर चन्द्रमा स्थित हो और जिस नक्षत्र पर सूर्य स्थित हो उन दोनों नक्षत्रों को एक ही में जोड़ दें। उसमें २७ का भाग देकर यदि ०, १, ४, ६, १०, ११, १५, १८, १९, २० शेषाङ्क बचे तो दशयोग चक्र होता है।

दशयोगचक्र

०	१	४	६	१०	११	१५	१८	१९	२०	शेषा.
वायु भय	वर्षा भय	अग्नि भय	राज भय	चोर भय	मृत्यु भय	ज्वर भय	वज्र. भय	जल भय	नाश भय	फलम्

दशयोगफलम्—

वायुवर्षाग्निभूपालचौरमृत्यु ज्वराः क्रमात् ।
वज्रघातः क्षतिनूनं दशयोगफलं भवेत् ॥ २४१ ॥

कुन्तला—शून्यशेषेन वायुदोषः, एकशेषेन वर्षा, ४ शेषेन अग्निदोषः, ६ शेषेण मृत्युभयं, १० शेषेण चोरभयं, ११ शेषेण मृत्युभयं, १० शेषेण ज्वर दोषः, १८ शेषेण वज्रभयं, १९ शेषेण जलभयं, तथा च २० शेषो भवेत्तदा द्रव्यनाशो भवतीति । एवं दशयोगफलं वाच्यम् ।

ज्योति—यदि शून्य शेष रहे तो वायुदोषः, १ शेष रहे तो वर्षा होती है। ४ शेष रहे तो अग्निदोष, ६ शेष बचे तो राजभय, १० शेष बचे तो चोरभय, ११ शेष बचे तो मृत्युभय, १५ शेष बचे तो ज्वर दोष, १८ शेष बचे तो वज्र का भय, १९ शेष बचे तो जलभय तथा २० शेष बचे तो द्रव्यनाश होता है। इस प्रकार दस योगों का फल कहा गया है।

लताविचारः—

नक्षत्रं द्वादशं भानुस्तृतीयं लत्तया कुजः ।
षष्ठं जीवोऽष्टमं सौरिर्हन्ति दक्षिणतः सदा ॥ २४२ ॥

वामेन सप्तमं चान्द्रिं नवमं सिंहिकासुतः ।
पञ्चमं भृगुजो हन्ति द्वाविंशं पूर्णचन्द्रमा ॥ २४३ ॥

कुन्तला—सूर्यनक्षत्रात् द्वादश नक्षत्रं सूर्यः लत्तयति । कुजः तृतीयं, गुरुः षष्ठं, शनिश्च अष्टमं नक्षत्रं दक्षिणक्रमेण लत्तयति । एवं वामक्रमेण च; चान्द्रिं = बुधः, सप्तमं, सिंहिकासुतः = राहुः, नवमं, शुक्रः पञ्चमं, तथा च पूर्णचन्द्रः द्वाविंशं नक्षत्रं लत्तयति । लतादोषयुक्तानि नक्षत्राणि विवाहे शुभाः न भवन्ति ।

ज्योति—सूर्य स्थित नक्षत्र से बारहवें नक्षत्र को सूर्य लात से मारता है । मंगल तीसरे, गुरु छठें, शनि आठवें नक्षत्र को दाहिने क्रम से लात मारतें हैं । इसी प्रकार उल्टे अर्थात् वाम क्रम से बुध सातवें, राहु नवें, शुक्र पाँचवें और पूर्णचन्द्रमा बाइसवें नक्षत्र को लात मारता है । जिस नक्षत्र में लात लग जावें वह नक्षत्र विवाह में शुभ नहीं माना जाता ।

विशेष—विवाह के समय जिस नक्षत्र पर चन्द्रमा होता है, उससे पहले के ७ वें नक्षत्र पर बुध को, ५ वें नक्षत्र पर शुक्र को, ९ वें पर राहु को और आगे आने वाले १२ वें नक्षत्र पर सूर्य को ८ वें पर शनि को, ६ ठें पर गुरु को और ३ रे पर मंगल ग्रह को न होना चाहिए । इसमें से कोई हो तो उस ग्रह का लता दोष होना है ।

पातविचारः—

शूलस्य गण्डस्य च वैधृतेश्च साध्यव्यतीपातकहर्षणानाम् ।
यत्तारकं स्यादवसानसंस्थं तत्पातितं वंग कलिङ्गदुष्टम् ॥ २४४ ॥

कुन्तला—सुगमः

ज्योति—शूल, गण्ड, वैधृति, साध्य, व्यतीपात हर्षण इत योगों का जिस नक्षत्र में अन्त हो उसे पात दोष जानना चाहिए । पात दोष वंग और कलिंग देश में वर्णित है ।

जामित्रदोषः—

पापात्सप्तमगः शशी यदि भवेत्पापेन चेत् संयुतो
यत्नेनापि विवर्जयेन्मुनिगतो दोषोऽपि संकथ्यते ।

यात्रायां शिवदो गृहेषु मरणं क्षौरेषुरोगो महा-
नुद्वाहे विधवा व्रते च मरणं शूलं च पुंस्कर्मणि ॥ २४५ ॥

कुन्तला—पापग्रहात् सप्तमराशौ स्थितः चन्द्रः पापग्रहेण युक्तो भवेत्तदा चन्द्रस्य त्यागमपेक्षितं भवति। मुनिसम्मतोऽयं दोषः। अतः यत्नेन त्याज्यमिति। यात्रायां अनेन दोषेण विपत्ति समायाति, गृहप्रवेशे मरणं, क्षौर-कर्मणि रोगं, विवाहे च कन्याविधवा; व्रतबन्धे मरणं पुन्स्कर्मणि च शूलं भवति इति बोध्यम्।

ज्योति—यदि पापग्रह से सप्तम राशि पर स्थित चन्द्रमा पापग्रह से युक्त हो तो ऐसे चन्द्रमा को यत्न से त्याग दें। यह मुनि सम्मत दोष है। यह दोष यात्रा में हो तो विपत्ति, गृह प्रवेश में हो तो मरण, क्षौर में हो तो रोग, विवाह में हो तो कन्या विधवा, यज्ञोपवीत में हो तो मरण और पुन्स्कर्म में हो तो शूल होता है।

विवाह के समय जिस राशि पर चन्द्र हो, उसकी ७ वी राशि पर यदि कोई ग्रह हो तो उस ग्रह का जामित्र दोष होता है।

विशेषः—

पापयुक्तं च नक्षत्रं विवाहर्क्षाच्चतुर्दशात्।
विवाहे वाऽशुभं प्रोक्तं ज्योतिषशास्त्रविशारदैः ॥ २४६ ॥

'कुन्तला' मूलेनैव स्पष्टम्।

ज्योति—विवाह नक्षत्र से १४ वाँ नक्षत्र पापग्रह से युक्त हो तो अशुभ माना गया है।

अन्यदपि—

क्रूरैर्युक्तं क्रूरगन्तव्यमृक्षं क्रूराक्रान्तं क्रूरविद्धं च नेष्टम्।
यच्चोत्पातैर्भौमदिव्यान्तरिक्षैर्दुष्टैः तद्वत्क्रूरलत्ता हतं च ॥ २४७ ॥

कुन्तला—विवाहे यदि नक्षत्रं क्रूरग्रहेण युक्तो भवेत् तथा क्रूरग्रहगन्तव्यनक्षमपि, एवं क्रूर ग्रहेणवेधप्राप्तनक्षत्रं अथवा दिव्यान्तरिक्षैः जायमानाः उत्पातैः दुष्टनक्षत्रं, क्रूरग्रहेण प्रहारितनक्षत्रमपि अवश्यमेव त्याज्यमिति।

ज्योति—जो विवाह नक्षत्र क्रूरग्रह से युक्त हो, जिस नक्षत्र पर क्रूरग्रह

आनेवाला हो, जो नक्षत्र क्रूरग्रह से वेध को प्राप्त हुआ हो अथवा पृथ्वी तथा आकाश से जायमान तीन प्रकार के उत्पत्तों से दुष्ट हुआ हो; अथवा जो नक्षत्र क्रूरग्रह से प्रहारित हो तो इन सबको विवाह में अवश्य त्याग देना चाहिए।

अथयुतिदोष—

यत्रराशौभवेत्त्चन्द्रो ग्रहस्तत्र यदा भवेत्।
युतिदोषः तदा ज्ञेयो विना शुक्रं शुभाशुभम्॥ २४८॥
रविणा संयुतोहानिर्भौमेन निधनं शशी।
करोति भूलनाशं च राहुकेतुशनैश्चरै॥ २४९॥
वर्गोत्तमगतेचन्द्रे स्वोच्चे मित्रर्क्षगे तथा।
युतिदोषश्च न भवेद्दम्पत्यो श्रेयसा तदा॥ २५०॥
पाणिग्रहस्य शातांशोर्नक्षत्रं यच्चतुर्दशम्।
नक्षत्रखेटयुक्तं चेद्यामित्रं स्याद्विगर्हितम्॥ २५१॥

कुन्तला—सुगमः

ज्योति—चन्द्रस्थित राशि में कोइ ग्रह होने से युतिदोष होता है। परन्तु शुक्र को छोड़ कर शुभ ग्रह भी अशुभ कारक होते हैं। पाग्रह अशुभ कहे गए हैं। सूर्य युक्त हो तो हानि, मंगल में मृत्यु तथा राहु केतु शनि युक्त हों तो समूलनाश हो जाता है। चन्द्रमा वर्गोत्तम में हो अर्थात् जिसकी राशि में हो उसी का नवमांश हो अथवा उच्चा का हो या मित्र क्षेत्री हो तो युतिदोष नहीं होता ओर स्त्री पुरुष सुखी रहते हैं। विवाह के नक्षत्र से चोदहवें नक्षत्र पर कोई ग्रह हो तो थामित्र दोष होता है। यह दोष विवाह में निन्दित है।

विशेष—जिस नक्षत्र में चन्द्र हो उसी नक्षत्र में यदि कोई ग्रह हो तो उस ग्रह की युक्ति दोष समझा जाता है।

पञ्चशलाकाविचारः (वेधविचारः)

पञ्चोर्ध्वाः स्थापयेद्रेखाः पञ्चोतिर्यङ्मुरखास्तथा।
द्वयोश्च कोणयोर्द्वे द्वे चक्रपञ्चशलाककम्।

ईशाने कृत्तिका देया क्रमादन्यानि भानि च ॥ २५२ ॥
यद्दक्षगो यः खचरः स तत्र प्रलेखनीयोगणकैस्तुपूर्वैः
या पौर्णमासी निकटे विवाहात्ततारकस्थो विधुरत्र देयाः ॥२५३॥

कुन्तला—पञ्च उर्ध्वाः रेखा तथा च पञ्च तिर्यङ्रेखा कार्या । द्वे द्वे रेखा च द्वयोः कोणयोश्च कार्या । एवमेव ईशानकोणे कृत्तिकानक्षत्रमस्थाप्यम् । पुनः क्रमेण शेष नक्षत्राणि लेख्यानि । अनेन पञ्चशलाकाचक्रं जातम् ।

ज्योति—पांच रेखा खड़ी, पांच रेखा पड़ी और कोनों में दो-दो रेखा तिरछी खींच कर ईशान कोण के रेखा पर कृत्तिका नक्षत्र रखें । पौर्णमासी के निकट जो नक्षत्र हो उसी में चन्द्रमा स्थित करना फिर क्रम से शेष नक्षत्रों को रखें, यही पञ्च शलाका चक्र है । ग्रह नक्षत्र और विवाह नक्षत्र एक रेखा पर होने से वेध होता है ।

पञ्चशलाकाचक्र—

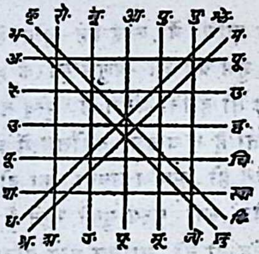

विशेष—'वधूप्रवेशने दाने वरणे, पाणि पीडने । वेधः पञ्चशलाकाख्यो-ऽन्यत्र सप्तशलाककः ॥ इस श्लोक में पञ्चशलाका चक्र का उपयोग बताया गया है ।

सप्तशलाका चक्र विचारः

चक्रेः सप्तशलाकाख्य सवेधः सर्वकर्मसु ।
चिन्तनीयो विवाहे तु पञ्चरेखा समुद्भवे ॥ २५४ ॥

'कुन्तला' एवं ज्योति टीका मूलेनैव स्पष्टम् ।

सप्तशलाकाचक्रम्—

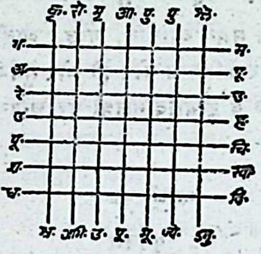

एकार्गल (खर्जूर) विचारः —

त्रयोदश तिरोरेखा एकोर्ध्वा मुध्न्र्यभिस्मृताः ।
योगांके प्राप्तनक्षत्रे ज्ञेयमेकार्गलं बुधः ॥ २५५ ॥

व्याघात शूलपरिघंव्यतिपात पूर्वं
गण्डातिगण्डकुलिशेषु सवैधृतेषु ।
आदित्यचन्द्र पितृसर्पभदास्रभूलं-
मैत्राख्यतिष्यसुरवार्द्धं किमानिमूर्ध्नि ॥ २५६ ॥

यस्मिन् दिनैकरेखायां सूर्यचन्द्रमसोर्भवेत् ।
दृष्टिपातस्तयोस्तस्मिन्मं गलं च विवर्जयेत् ॥ २५७ ॥

कुन्तला—त्रयोदश तिरोरेखा तथा एकोर्ध्वा रेखा कृत्वा यस्मिन् दिने व्याघातादि दुष्टयोगाः भवेयुः तस्मिन् दिने दिननक्षत्रं मध्यरेखायां स्थापनेन एकार्गलो भवतीति । एवं व्याघातयोगे खर्जूरचक्रे पुनर्वसुनक्षत्रो लेख्यः । शूलयोगे मृगशीर्षः, परिघयोगे मघा, व्यतीपाते आश्लेषा, विष्कुम्भे अश्विनीः, गण्डे मूलं, अतिगण्डे अनुराधा वज्रे पुष्यः, वैधृतौ रोहिणीः च लेख्यः । यदि एकस्मिन्नेव रेखायां सूर्यं चन्द्रो भवेतां तदा विवाहादि न कर्त्तव्यमिति ।

ज्योति—व्याघात योग हो तो खजूर चक्र में पुनर्वसु नक्षत्र लिखना चाहिए । इसी प्रकार शूल में मृगशिरा, परिघ में मघा, व्यतीपात में

आश्लेषा, विष्कुम्भ में अश्विनी, गण्ड में मूल, अतिगण्ड में अनुराधा, वज्र में पुष्य, वैधृति में रोहिणी ऊपर लिखना चाहिए। यदि एक ही रेखा पर सूर्य चन्द्र वर्तमान हों तो विवाहादि मङ्गलकार्य न करें।

विशेष—विवाह के समय व्याघात, गण्ड, व्यतीपात, विष्कुम्भ, शूल, वैधृति, वज्र, परिघ और अतिगण्ड योग हो और सूर्य के नक्षत्र से विषम नक्षत्र पर अर्थात् ३ रे, ५ वे, ७ वें इत्यादि नक्षत्रों पर चन्द्रमा हो तो एकार्गल दोष होता है।

खार्जूरचक्र—

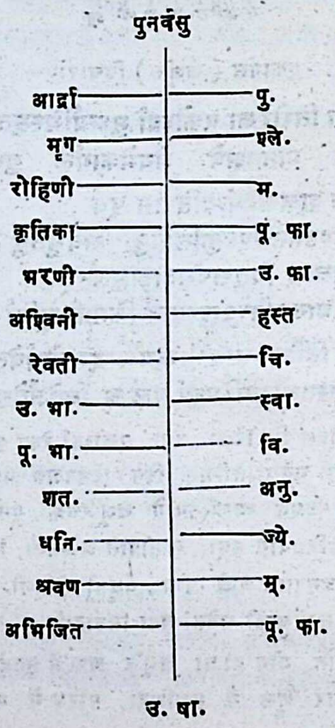
पुनर्वसु
आर्द्रा — पु.
मृग — श्ले.
रोहिणी — म.
कृतिका — पू. फा.
भरणी — उ. फा.
अश्विनी — हस्त
रेवती — चि.
उ. भा. — स्वा.
पू. भा. — वि.
शत. — अनु.
धनि. — ज्ये.
श्रवण — मू.
अभिजित — पू. फा.
उ. षा.

वाणपञ्चकविचारः—

धार्या तिथिः सूर्यदशाष्टवेदाः संक्रांतितो यातदिनैश्च योज्याः ।
ग्रहैर्विभक्ता यदि यत्र पञ्च शेषो रुजाग्निर्नृपचौर मृत्युः ॥२५८॥

कुन्तला—तिथिः = १५, सूर्यं = १२, दश = १०, अष्ट = ८' वेदाः=४, एषु अङ्केषु क्रमेण संकान्तितः, यातदिनैश्च योज्या = संक्रान्तितः गतदिन संख्या च योज्यम् । युक्ते सति तदुपलभ्येत तन्मध्ये, गृहैर्विभक्ता = नवभिः भक्तमित्यर्थः । भक्ते सति यदि यदि पञ्चशेषमायाति तदा क्रमेणः रोग, अग्निः, नृपः, चोरः तथा च मृत्युबाणश्च भवतीति बोध्यम् ।

ज्योति—१५, १२, १०, ८, ४, में पृथक-पृथक संक्रान्ति से गतदिनों को जोड़कर ९ से भाग देने पर यदि ५ शेष बचे तो क्रमेण रोग, अग्नि, नृप, चोर तथा मृत्यु वाण होता हैं ।

सूर्यगतांश से वाणपञ्चकचक्र—

वाण	गतांश
रोग	८,१७,२६
अग्नि	२,११,२०,२९
नृप	४,१३,२२
चोर	६,१५,२४
मृत्यु	१,१०,१९,२८

वाणदोषपरिहारः—

रात्रौ चौर रुजौ दिवा नरपतिर्वह्निः सदा सन्ध्ययो-
र्मृत्युश्चाथ शनौ नृपौविदि मृतिर्भौमाग्नि चौरारवौ ।
रोगोऽथ व्रतगेह गोपनृपसेवायानपाणिग्रहे
वर्ज्याश्चक्रमतो बुधैरुगनलक्ष्मापालचौराम्रतिः ॥ २६० ॥

कुन्तला—चोररुजो रात्रौ, नरपतिः = नृपवाणः दिवा, वह्नि = अग्निवाणः, सदा = सदैव, मृत्युबाणः, सन्ध्ययोः = प्रातःकालः सायंकालश्च, शुभं न भवति । एवं शनौ नृपवाणः, विदि = बुधे, मृति = मृत्युबाणः, भौमे अग्निवाणः चोरवाणश्च, रवौ = रविवासरे रोगबाणाश्च वर्ज्याः सन्ति । विशेषस्तु व्रत = व्रतबन्धे रोगवाणः, गेहगोपने अग्निबाणः, सेवायां नृपवाणः, यान = वाहने, चोरवाणः, पाणिग्रहे = विवाहे च, मृत्यु वाणः बुधैः; वर्ज्या = त्याज्यमिति ।

ज्योति—चोर तथा रोगवाण रात्रि में, राज बाण दिन में, अग्निबाण सर्वदा और मृत्युवाण प्रातः एवं सायंकाल और सन्ध्याओं में शुभ नहीं होता है। शनिवार को राजवाण, बुध को मृत्युबाण, मंगल को अग्निबाण तथा चोरवाण और रविवार को रोगबाण अत्यन्त वर्जित है। विशेष करके यज्ञोपवीत में रोग बाण, गृह गोपन अर्थात् मकान छवाने इत्यादि कार्यों में अग्नि बाण, राजसेवा कर्म में राजवाण, सवारी करने में चोर बाण और विवाह में मृत्यु बाण का विचार अवश्य ही करना चाहिए।

क्रान्तिसाम्यदोषः—

पञ्चास्याजौ गोमृगौ तौलिकुम्भौ
कन्यामीनौ कर्क्यलीचापयुग्मे ।
तत्रान्योन्यं चन्द्रभान्वोर्निरुक्तं
क्रान्ते साम्यं नो शुभं मङ्गलेषु ॥ २६१ ॥

कुन्तला—यदि सायनमेषस्थे सूर्ये सायनचन्द्रः सिंहराशौ भवेत् तथा वृषस्थे सूर्ये मकर राशौ चन्द्रः, मिथुनस्थे सूर्ये धनुराशौ चन्द्रःवृश्चिकस्थे सूर्ये कर्कराशौ चन्द्रः, मकरस्थे सूर्ये वृषराशौ चन्द्रः, कुम्भस्थे सूर्ये तुलाराशौ चन्द्रः भवति तदा क्रान्तिसाम्य दोषो भवतीति ज्ञेयम् !

ज्योति—सायन मेष के सूर्य में यदि सायन चन्द्रमा सिंह राशिपर हो, वृष के सूर्य में यदि चन्द्रमा मकर राशि पर हो, मिथुन के सूर्य में यदि

चन्द्रमा धनु राशि पर हो, वृश्चिक के सूर्य में यदि चन्द्रमा कर्कराशि पर हो, मकर के सूर्य में यदि चन्द्रमा वृष राशि में हो और कुम्भ के सूर्य में यदि चन्द्रमा तुला राशि में हो तो क्रान्ति साम्यदोष होता है ।

क्रान्तिसाम्यचक्रम्—

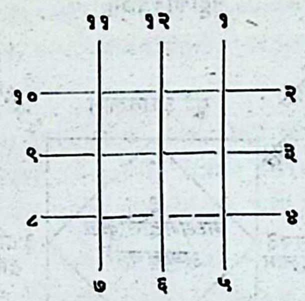

पट्टाकारचक्रविचारः तत्फलञ्च—

पट्टाकारं लिखेच्चक्रमष्टकोणसमन्वितः ।
यस्मिन्नृक्षे स्थितः सूर्यस्तदाद्यं मध्यमं त्रयम् ॥ २६१ ॥

त्रयस्त्रयश्च सर्वत्र ततः पूर्वादितो लिखेत् ।
नक्षत्रं त्रितयं मध्ये पक्षद्वयविनाशनम् ॥ २६२ ॥

पर्वस्थाने भवेल्लक्ष्मीर्धनधान्यसमागमः ।
अग्निकोणे भवेन्मृत्युर्नारी कुलविनाशनी ॥ २६३ ॥

दक्षिणे दुर्भगानारी दारिद्र्यं मृत्युमाप्नुयात् ।
नैर्ऋत्ये पुत्रलाभश्च सुखसौभाग्यमेव च ॥ २६४ ॥

पश्चिमे विधवा कन्या वायव्ये व्यभिचारिणी ।
उत्तरे धनधान्यानि ईशाने सुखसम्पदौ ॥ २६५ ॥

मांगल्यं सर्वकार्येषु पट्टचक्रं विचारयेत् ।
गर्गाचार्येण संप्रोक्तं सर्वसिद्धिप्रदायकम् ॥ २६६ ॥

कुन्तला—सुगमः

ज्योति—सूर्य नक्षत्र से दिननक्षत्र तक गिन कर चक्र का स्थापनक्रम चक्र में देखें। जिस दिशा में दिननक्षत्र पड़े उसी का फल जानना चाहिए।

पट्टाकारचक्रम्

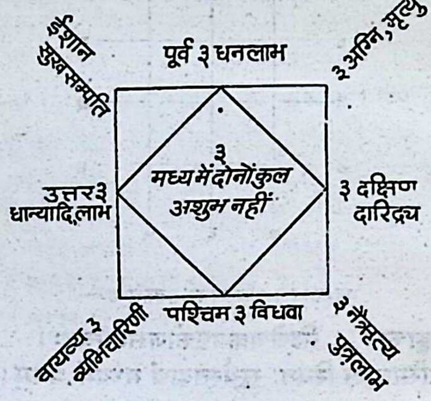
ईशान सुखसम्पति
पूर्व ३ धनलाभ
३ अग्नि, मृत्यु
३
मध्य में दोनों कुल अशुभ नहीं
उत्तर ३ धान्यादि, लाभ
३ दक्षिण दारिद्र्य
वायव्य ३ व्यभिचारिणी
पश्चिम ३ विधवा
३ नैर्ऋत्य पुत्रलाभ

कर्त्तरीयोगः—

द्वयोः पापर्क्षयोर्मध्ये चन्द्रलग्ने भविष्यतः
तदा मृत्युं विजानीयात्पञ्चाब्दे नात्रसंशयः।
सौम्य योगात्कर्त्तरीयोगो न स्यादिति स्मृतः॥ २६७॥

कुन्तला—द्वयोः पापग्रहयोर्मध्ये चन्द्रः तथा लग्नश्च भवेत्, पञ्चाब्दे = पञ्चवर्षाभ्यान्तरे एव कन्यायाः मृत्युः भविष्यति नास्त्यत्र संदेहः। सौम्यग्रहयोः योगात् कर्त्तरीयोगो न भवति।

ज्योति—यदि दो पापग्रहों के बीच चन्द्रमा तथा लग्न हो तो पांच वर्ष के भीतर ही कन्या की मृत्यु हो जाती है। इसी को कर्त्तरीयोग कहते हैं। सौम्य (शुभ) ग्रहों के योग में कर्त्तरीयोग नहीं होता हैं।

एकार्गलादिदोषानां परिहारः—

एकार्गलोपग्रहपातलत्ताजामित्रकर्त्तर्युदयास्त दोषाः ।
नश्यन्ति चन्द्रार्कवलोपपन्नेलग्ने यथार्काभ्युदये तु दोषाः ॥२६८॥

कुन्तला—चन्द्रसूर्यस्यापि उच्चस्थे, मित्रराशिगते, सवले सति च एकार्गल, उपग्रह, पात, लता, जामित्र कर्त्तरी, उदयास्तदोषाश्च सर्वे नश्यन्ति यथा सूर्योदये निशा ।

ज्योति—चन्द्रमा तथा सूर्य के उच्च, मित्रादि राशिगत तथा सलब होने पर एकार्गल, उपग्रह, पात् लता, जामित्र कर्त्तरी, उदयास्तादि ।सभी दोष नष्ट हो जाते हैं जैसे सूर्य के उदय होने पर रात्रि नष्ट हो जाती हैं ।

देशभेदेन परिहारः—

उपग्रहर्क्षं कुरुवाह्लिकेषुकलिङ्गवङ्गेषु च पातितं भम् ।
सौराष्ट्र शाल्वेषु च लत्तितं भं त्यजेत्तु विद्धं किल सर्वदेशे ।।२६९।।

कुन्तला—कुरु तथा वाह्लिक देशे उपग्रहदोषः, कलिङ्ग तथा वङ्गदेशे पातदोषः सौराष्ट्र तथा शाल्वदेशे लतादोषः, तथा च वेधदोषः सर्वेषु वर्ज्यम् भवति ।

ज्योति—कुरु और वाह्लिक देश में उपग्रह दोष कलिङ्ग और वंगदेश में पातदोष, सौराष्ट्र और शाल्वदेश में लत्ता दोष तथा वेध दोष सभी देशों में वर्जित है ।

अष्टमलग्नपरिहारः (लग्नशुद्धि,)

जन्मलग्नभयोर्मृत्यु राशौ नेष्टः करग्रहः ।
एकाधिपत्ये राशीशे मैत्रे वा नैव दोषकृत् ॥ २७० ॥

कुन्तला—जन्म लग्न तथा जन्मराशितः अष्टमलग्ने विवाहः नेष्टो भवतीति । जन्मराशि तथा च जन्मलग्ने अनयोर्मध्ये कस्यापि अधिपतिः तथा विवाहलग्नाधिपतिः उभयोर्मध्ये यदि ऐक्यं स्यात् तदा दोषो न भवतीति बोध्यम् ।

ज्योति—जन्मलग्न तथा जन्मराशि से अष्टम लग्न में विवाह अशुभ होता है। जन्मराशि और जन्म लग्न इनमें किसी के स्वामी और विवाह लग्न के स्वामी में एकता हो तो यह दोष नहीं लगता ।

अन्यच्च—

उदयगतनवांशः स्वेशदृष्टो युतो वा
न भवति यदि मृत्युः स्यात्तदानीं वरस्य ।
परिणय समये चेन्नैव चास्तोदयांशः
स्वपतिसहितदृष्टो मृत्युकारी च वध्वाः ॥ २७१ ॥

कुन्तला—लग्न तथा लग्ननवांशाश्च स्वपतिनादृष्टो युक्तो वा न भवेत् तदा वरस्य मृत्युः ज्ञेयम् । विवाहकाले यदि सप्तमभावः तथा च सप्तमभावस्य नवांशः स्वपतिना दृष्टो युक्तो वा नभवेत् तदा वध्वाः मृत्युर्विजानीयात् ।

ज्योति—लग्न या लग्न का नवांश अपने स्वामी से दृष्ट या युत न हो तो वर की मृत्यु होती है । विवाह समय में यदि सप्तम भाव तथा सप्तम भाव का नवांश अपने स्वामी से युक्त या दृष्ट न हो तो वधू की मृत्यु होती है ।

इस प्रकार उक्त विधि से वर-वधू दोनों के लिए शुभ नहीं है। अन्तः इसका विवाह में सर्वथा त्याग कर देना चाहिए ।

अन्यच्च —

भौमे लग्नकलत्रनैधनगते शुक्राऽरिसप्ताष्टगे
चन्द्रे रन्ध्रविलग्नषष्ठनिरते लग्नास्तगे भास्करे ।
तद्वद्भानु सुते गुरौ निधनगते सौम्येऽष्टजामित्रगे
जायां भोविलग्नकर्मनिरते राहौ न पाणिग्रहः ॥ २७२ ॥

कुन्तला—लग्नः = प्रथमभावः, कलत्र = सप्तमभावः, नैधनगते = अष्टमभावगते भौमः, अरिसप्ताष्टगे = ६, ७ एवं ८ स्थानेषु विद्यमाने, शुक्रः, रन्ध्रविलग्नषष्ठनिरते = ८, १, ६ स्थानेषु गते, चन्द्रः, लग्नास्तगे=लग्न सप्तम

भावे-सूर्यः तद्वद्भानुसुते = अर्थात् लग्नसप्तमे च शनिः, निधनगते = अष्टमें गुरुः अष्टजामित्रगे = अष्टम सप्तमे गते च, सौम्यें = बुधः तथा च जायांभोधिविलग्नकर्मनिरते राहौ = ७, ४, १, १० स्थानेषु विद्यमाने राहुश्च विवाहः नेष्टो भवति।

ज्योति—१, ७, ८ भावों में मंगल हो ६, ७, ८ स्थानों में शुक्र हो, ८, १, ६ स्थानों में चन्द्रमा तथा लग्नसप्तम पर सूर्य तथा शनि हों, ८ स्थान पर गुरु हो, ८, ७ स्थानों पर बुध और ७, ३, १, १० स्थानों पर राहु हो तो विवाह शुभ नहीं होता।

अन्यच्च—

हिबुकधर्मसुतोदय कर्मसु त्रिदशराजगुरौ यदि वासिते।
यदशुभंशुभतां समुपैति तच्छुभफलं नितरामभिवर्द्धते ॥२७३॥

कुन्तला—चतुर्थ पञ्चम नवम, दशम स्थानेषु विद्यमानौ गुरुशुक्रौ नेष्टफलमपि शुभो भवति, तथा च शुभफलमपि वृद्धि, प्राप्नोतीति भावः।

ज्योति—चतुर्थ, नवम, पञ्चम एवं दशम स्थानों में बृहस्पति अथवा शुक्र के होने पर जो अशुभ फल है वह भी शुभ हो जाता है और शुभ फल वृद्धि भाव को प्राप्त हो जाता है।

अनेकानेक दोषपरिहारः—

अब्दायनर्तुतिथिमासभपक्ष दग्ध-
तिथ्यन्धकाणबधिरांगमुखाश्च दोषाः।
नश्यन्ति विद्गुरुसितेष्विह केन्द्रकोणे-
तद्वच्च पापविधुयुक्तनवांश दोषाः ॥ २७४ ॥
लग्नाधिपंविना द्युने सर्वनेष्टाः खगाः स्मृताः ॥ २७५ ॥

कुन्तला—गुरुशुक्रौ केन्द्रत्रिकोणे विद्यमाने सति वर्षायन, ऋतुः, तिथिः, मासः, नक्षत्रम्, पक्षः, दग्धा तिथिः, अन्धकाण वधिर लग्नादीनां दोषाः नश्यन्ति। तथैव बुधः, गुरुः, शुक्रश्च केन्द्र त्रिकोणे पापग्रहैः चन्द्रेण वा युक्तः सन् नवमांश दोषोऽपि नश्यति। लग्नेशातिरिक्तः सप्तमें सर्वे ग्रहा अशुभफलदा भवन्ति।

ज्योति—बृहस्पति तथा शुक्र केन्द्र तथा त्रिकोण में स्थित हो तो वर्ष, अयन, ऋतु तिथि, मास नक्षत्र, पक्ष, दग्धा तिथि, अन्ध-काण और वधिर लग्नादि के दोष नष्ट हो जाते हैं। उसी प्रकार बुध, बृहस्पति और शुक्र केन्द्र त्रिकोण में स्थित हों और पापग्रह और चन्द्रमा से युक्त हों तो नवांश दोष भी नष्ट हो जाता है। लग्नेश के अतिरिक्त सप्तम भाव स्थित समस्त ग्रह अशुभ फल देते हैं।

गोधूलिकालः—

यावद्दिनान्तं दिशि पश्चिमायां पश्येत्तदीयं रविबिम्बभागम् ।
तस्मात् परं नाडिकयुग्ममेके गोधूलिकालं मुनयो वदन्ति ॥ २७६ ॥

कुन्तला—पश्चिमायां = पश्चिमदिशि दिनान्तं यावत् रविबिम्बं पश्येत् तस्मिन्नकाले घटिकाद्वयं गोधूलिकालः मुनयः वदन्ति ।

ज्योति—सायं काल में पश्चिम दिशा में अस्त होते समय सूर्य के दो घटी तक के काल को गोधूलि का समय कहा जाता है। ऐसा मुनियों का कहना है।

गोधूलिकालस्यश्रेष्ठत्वम्—

नास्यामृक्षं न तिथि करणं नैव लग्नस्य चिन्ता
नो वा वारो न च लवविधिर्नोमुहूर्तस्य चर्चा ।
नो वा योगो न मृतिभवनं नैव जामित्रदोषो
गोधूलिः सा मुनिभिरुदिता सर्वकार्येषुशस्ता ॥ २७७ ॥

कुन्तला—नक्षत्रम् , तिथिः, करणम् ; लग्नम् वारः, नवांशः, मुहूर्त्तः, योगः, अष्टमस्थानम्, जामित्रदोषादीनां विचारो गोधूल्यां न कर्त्तव्यमिति । गोधूलिकालः मुनिभिः सर्वकार्येषु श्रेष्ठमुक्तमन्ति ।

ज्योति—नक्षत्र, तिथि, करण, लग्न, वार, नवांश मुहूर्त्त, योग, अष्टम स्थान, जामित्रादोषो का विचार गोधूलि में नहीं किया जाता है। गोधूलि समय को सभी मुनियो ने सभी कार्यों में श्रेष्ठ कहा है।

गोधूल्यां वर्ज्यकालः—

अस्तं याते गुरुदिवसे सौरे सार्के
लग्नान्मृत्यौ रिपुभवने लग्ने चेन्दौ ।
कन्यानाशस्तनुमदमृत्युस्थे भौमे
वोढुर्लाभे धनसहजे चन्द्रे सौख्यम् ॥ २७८ ॥

कुन्तला—गुरुः एव सूर्यस्यास्तं गते गोधूलिलग्नं शुभं भवति । शनौ सूर्यः पश्येत् तदा गोधूलिकाल शुभः । सूर्यास्तकाले गोधलिलग्नात् षष्ठाष्टमे चन्द्रो भवेत् तदा कन्यायाः नाशो भवति । एवमेव यदि गोधूलिलग्नात् लग्ने, सप्तमे अष्टमे वा भौमो भवेत् तदा वरस्य नाशो भवतीति बोध्यम् । एवं गोधूलिलग्नात् एकादशे, द्वितीये तृतीये वा चन्द्रः उभयोः (वरकन्ययोः) कल्याणदायकमितिध्येयम् ।

ज्योति—गुरुवार सूर्य के अस्त होने पर गोधूलि लग्न शुभ होता है । शनिवार को सूर्य दीखते रहने पर गोधूलि लग्न शुभ होता है । सूर्य के अस्त होते समय गोधूलि लग्न से अष्टम, षष्ठ लग्न में चन्द्रमा हो तो कन्या का नाश होता है । गोधूलि लग्न से लग्न में सप्तम या अष्टम भवन में मंगल हो तो वर का नाश होता है । गोधूलि से एकादश द्वितीय या तृतोया में चन्द्रमा हो तो वर कन्या दोनों का कल्याण होता है ।

पंग्वन्धादिलग्नः—

दिवा पंगुघटी ज्ञेया बधिरौ तुलवृश्चिकौ
अन्धो मेषो वृषः सिंहः सन्धौ कुब्जामृगात्त्रयः ॥ २७९ ॥
रात्रौ पङ्गुः झषश्चान्धः कन्यामिथुन कर्कटाः
बधिरौ तु धनुर्नक्रौ तत्कालेतान् परित्यजेत् ॥ २८० ॥

कुन्तला—दिवायां कुम्भराशिः पङ्गुः, तुला वृश्चिकौ बधिरः; मेषवृषः तथा सिहश्च अन्धः, मृगात् त्रयः = मकर कुम्भ मीनाश्च कुब्जाः भवन्ति । एवमेव रात्रौ मीनः पङ्गुः, मिथुनकर्कश्चान्धः, तथा च धनुमकरो बधिरो भवतः । विवाहे एतेषां तत्काले = शीघ्रम्, परित्यजेत् = त्याज्यमिति ।

ज्योति—दिन में कुम्भराशि लंगड़ी, तुला तथा वृश्चिक राशि बहिरी,

मेष, वृष सिंह राशि अन्धी और मकर, कुम्भ तथा मीनराशि कुबडी कही गई हैं। इसी प्रकार रात्रि में मीन लग्न लंगड़ी, मिथुन और कर्क अन्धी और धनु तथा मकर बहिरी होती हैं। इनको विवाह में त्याग देना चाहिए।

तैलादि लेपन मुहूर्त्तः—

कार्यं वियाहाकार्याङ्गविवाहोदितभादिभिः।
विवलञ्चविधुं हित्वा त्रिषष्ठनवमं दिनम् ॥ २८१ ॥
विशाखा भरणी चित्रा ज्येष्ठाख्यामश्विनी शतम् ।
आर्द्राचतुष्टयं हित्वा कुर्याद् वैवाहिकीं विधिम् ॥२८२॥
हेरम्बपूजनं तैलं सकलं चाङ्कुरार्पणम् ।
भूषणं कङ्कणाद्यञ्च वेदिकामण्डपादिकम् ॥ २८३ ॥

कुन्तला—विवाहोदितभादिभिः = विवाहोक्त नक्षत्रेषु, विवाहकार्याङ्गं कार्यम् = विवाहाङ्गानि सर्वाणि कार्याणि शुभानि भवन्ति। विवलञ्च विधुं हित्वा = निर्बलं चन्द्र परित्यज्य, त्रि, षष्ठं, नवमं दिनं च शुभं भवति। विशाखा, भरणी, चित्रा, ज्येष्ठा, अश्विनी, शतभिषा, आर्द्राचतुष्टयं = आर्द्रा, पुनर्वसु, पुष्य एवं आश्लेषा नक्षत्राणि, हित्वा = परित्यज्य विवाहो कर्त्तव्यमिति। एवं गणेशपूजनं तैलपूजनं अङ्कुरारोपणं भूषणं कंकणं तथा मण्डपनिर्माणादि कार्यं भवति।

ज्योति—विवाहोक्त नक्षत्र में विवाहाङ्ग कार्य शुभ होता है। परन्तु निर्बल चन्द्रमा को छोड़कर तीसरा छठा और नवाँ दिन शुभ होता है। विशाखा भरणी चित्रा ज्येष्ठा अश्विनी शतभिषा आर्द्रा पुनर्वसु पुष्य आश्लेषा इन नक्षत्रों को छोड़कर विवाह कार्य करना चाहिए। गणेश पूजन तैलपूजन अङ्कुरारोपण भूषण कंकण वेदी तथा मण्डप सम्बन्धी कार्य शुभ होता है।

विवाहानन्तरं मण्डपोद्वादनमुहूर्त्तः—

मण्डपोद्वावसनं षष्ठं हित्वा कुर्यात्समेऽहनि ।
पञ्चमे सप्तमेवापि शुभभे शुभवासरे ॥ २८४ ॥

कुन्तला—षष्ठं दिनं हित्वा समदिवसेषु पञ्चमे सप्तमे दिने शुक्रवासरे मण्डपोद्वासनं शुभम् ।

ज्योति—विवाह से छठे दिन को छोड़कर सम दिनों में पांचवे, सातवें दिन शुक्रवार को मण्डपउद्वासन (माड़ो-उखाड़नाशुभ) कहा गया है ।

वधूप्रवेशः—

समाद्रिपञ्चाङ्कदिनेविवाहाद्वधूप्रवेशोऽष्टिदिनान्तराले ।
शुभः परस्ताद्विषमाब्दमासदिनेऽक्षवर्षात् परतो यथेष्टम् ॥२८५॥

कुन्तला—विवाहात् अष्टिदिनान्तराले = षोडशदिवसाभ्यान्तरे समाद्रिपञ्चाङ्कदिने = समदिवसेषु अर्थात् अद्रि=सप्त-पञ्च तथा अङ्कदिने= नवमेदिने वधूप्रवेशः शुभः स्यात् । परस्तात् = पश्चात् विषमाब्दमासदिने शुभः स्यात् । अक्षवर्षात् परतः यथेष्टम् अर्थात् स्वेच्छानुसारं यस्मिन् कस्मिन्नपि शुभे दिने वधूप्रवेशः शुभः स्यात् ।

ज्योति—विवाह के सोलह दिन के भीतर सम दिनों में अथवा पांचवे, सातवें और नवें दिन में वधूप्रवेश शुभ होता है परन्तु सोलह दिन के बाद विषम वर्ष, विषम महीना, विषम दिन में वधू प्रवेश शुभ है । पांच वर्ष के बाद स्वेच्छानुसार किसी भी शुभ दिन में वधू प्रवेश शुभ कहा गया है ।

वधूप्रवेशनक्षत्राणि—

ध्रुवक्षिप्रमृदुश्रोत्रवसुमूलमघानिले ।
वधूप्रवेशः सन्नेष्टो रिक्तारार्के बुधे परैः ॥ २८६ ॥

कुन्तला—ध्रुवः=उत्तरात्रयः, रोहिणी, हस्त, अश्विनी, पुष्यः मृगशिरा, रेवती, चित्रा, अनुराधा, श्रवणः, धनिष्ठा, मूलं, मघा, स्वाती एषु नक्षत्रेषु वधूप्रवेशः शुभः । रिक्ता(४, ९, १४) तिथिः भौमवारः तथा च रविवासरे च वधूप्रवेशः नेष्टो भवतीति तथा च, परैः = कैश्चिन्मते बुधवारेऽपि वधूप्रवेशो नेष्टो भवति ।

ज्योति—तीनों उत्तरा, रोहिणी, हस्त, अश्विमी, पुष्य, मृगशिरा, रेवती, चित्रा, अनुराधा, श्रवण, धनिष्ठा, मूल मघा, स्वाती इन नक्षत्रों में

वधूप्रवेश शुभ है। रिक्ता (४, ९, १४) तिथियाँ तथा मंगल और रविवार को वधू प्रवेश शुभ नहीं होता। किसी-किसी आचार्य के मत से बुधवार को भी वधूप्रवेश शुभ नहीं माना जाता है।

द्विरागमनमूहूर्त्तः—

ज्येष्ठापुष्यपुनर्वसूत्तरहरिब्रह्मानुराधाऽश्विनी
हस्तादित्रयपौष्णमूलमृगभे मेषालि कुम्भे रवौ।
कन्या तौलिनृयुग्ममीनमकरे लग्ने च यात्रा तिथौ
नारीणां शुभदो द्विरागमविधिर्जीवज्ञशुक्रेऽहनि ॥ २८७ ॥

कुन्तला—ज्येष्ठा, पुष्यः, पुनर्वसुः, उत्तरात्रयः श्रवणः, रोहिणी, अनुराधा, अश्विनी, हस्त, रेवती, मूलं तथा मृगशीर्षश्च एषु नक्षत्रेषु मेषे, वृश्चिके एवं कुम्भराशिस्थे सूर्यः, कन्या, तुला, मिथुनं, मीनं तथा मकरलग्नेषु, यात्रायाः तिथिषु, गुरु, बुध एवं शुक्रवारेषु च नारीणां द्विरागमनं शुभम्।

ज्योति—ज्येष्ठा, पुष्य, पुनर्वसु तीनों उत्तरा श्रवण, रोहिणी, अनुराधा, अश्विनी, हस्त, रेवती, मूल तथा मृगशिरा नक्षत्रों में मेष, वृश्चिक, कुम्भ इन राशियों के सूर्य में, कन्या, तुला, मिथुन मीन और मकर लग्नों में, यात्रा की तिथियों में, गुरु, बुध तथा शुक्रवारों में स्त्रियों का द्विरागमन शुभ माना गया है।

पुन्नार्योः प्रथमसंगममुहूर्त्तः—

उत्तरात्रयरोहिण्यां पुष्येमैत्रे करे मृगे।
चित्रास्वातीविशाखासु पुन्नार्योः संगमः शुभः ॥ २८८ ॥

कुन्तला—उत्तरात्रयः, रोहिणी, अनुराधा, हस्तः, मृगशीर्षः, चित्रा, स्वाती तथा विशाखा नक्षत्रेषु दम्पत्योः संगमः शुभः।

ज्योति—तीनों उत्तरा, रोहिणी, पुष्य, अनुराधा, हस्त, मृगशिरा, चित्रा, स्वाती तथा विशाखानक्षत्रों में स्त्री-पुरुष का प्रथम संगम शुभ है।

अन्यच्च—

कन्याजूकवृषालिमीनभवनेकेन्द्रस्थिते सद्ग्रहे
पापे विक्रमालाभवीरसहिते द्युने शुभैरीक्षिते।

वारे सौम्यदिनेष्वविष्टिकरणे शस्ते च रिक्ताष्टमी
राकामारहिते तिथौ शुभविधौ दारोपभोगः स्मृतः ॥२८९॥

कुन्तला—कन्या, तुला, वृषः, वृश्चिकः तथा मीनलग्नेषु शुभग्रहाः केन्द्र-(१, ४, ७, १०) स्थानेषु स्थिते सति, एवं पापग्रहाः तृतीय, एकादश तथा षष्ठस्थानेषु विद्यमाने शुभवारे, भद्रारहिते, शुभकरणे, रिक्ता-(४, ९, १४); पूर्णिमा, तथा आमावस्यावर्जिततिथिषु शुभेचन्द्रे च पुन्नार्योः संगमः शुभः।

ज्योति—कन्या, तुला, वृष, वृश्चिक और मीन लग्नों में, शुभग्रह के केन्द्र (१, ४, ७, १०) स्थान में रहने पर, पापग्रह के तृतीय, एकादश, तथा षष्ठ स्थानों में रहने पर, शुभवार में भद्रा के न होने पर शुभकरण में रिक्ता (४, ९, १४), पौर्णमासी तथा अमावस्या से वर्जित तिथियों में और शुभ चन्द्रमा में स्त्री के साथ प्रथम वार संगम शुभ माना जाता है।

सम्मुखदक्षिणशुक्रविचारः—

दैत्येज्यो ह्यभिमुखदक्षिणे यदि स्याद्
गच्छेयुर्नहि शिशुगर्भिणी नवोढा।
बालश्चेद् व्रजति विपद्यते नवोढा
चेद्वन्ध्या भवति च गर्भिणी त्वगर्भा ॥ २९० ॥

कुन्तला—यदि शुक्रः सम्मुखे दक्षिणे च भवेत् तदा बालकः गर्भिणी, नवोढा च यात्रा न कार्या। यदि शुक्रस्य सम्मुखदक्षिणे च विद्यमाने गमनो भवति तदा बालकस्य मृत्युः, नवोढा वन्ध्या, गर्भिण्याः गर्भपातो भवतीति। यदि गर्भपातो न भवेत् तदा वन्ध्या भवतीति शास्त्रसिद्धान्तः।

ज्योति—शुक्र यदि सम्मुख या दक्षिण हो तो बालक, गर्भवती, नवोढा यात्रा न करे। यदि शुक्र के सम्मुख या दक्षिण होने पर बालक गमन करे तो मृत्यु, नवोढा स्त्री गमन करे तो वन्ध्या और गर्भवती स्त्री का गर्भपात हो जाता है। यदि ऐसा न हो तो वन्ध्या होती है।

शुक्रदोषपरिहारः—

नगरप्रवेशे विषयाद्युपद्रवे करपीडने विबुधतीर्थयात्रयोः।
नृपपीडने नववधूप्रवेशने प्रतिभार्गवो भवति दोषकृन्नहि ॥२९१॥

कुन्तला—नगरप्रवेशे, दुर्भिक्षादिकउपद्रवे, विवाहे, देवदर्शने, तीर्थयात्रायां नृपपीडने अर्थात् राजदण्डप्राप्ते सति, नवोढायाः गमने शुक्रसम्मुख दोषो न भवति।

ज्योति—किसी नगर या ग्राम में जाने में, देश ग्रामादि में दुर्भिक्षादिक उपद्रव होने पर, विवाह, देवदर्शन, तीर्थयात्रा, राजा की ओर से दण्डित होने पर नवविवाहित, वधू के प्रवेश करने में (यात्रा करने में) सम्मुख शुक्र होने पर भी दोष नहीं होता।

अन्यच्च—

पित्र्ये गृहे चेत्कुचपुष्पसम्भवः स्त्रीणां न दोषः प्रतिशुक्रसम्भवः।
भृग्वंगिरोवत्सवशिष्ठकश्यपोस्त्रीणां भरद्वाजमुनेः कुले तथा ॥२९२॥

कुन्तला—भृगुः, अंगिरा, वत्सः, वशिष्ठः, कश्यपः, अत्रिः, भरद्वाजादिदिमुनीनां गोत्राणां स्त्रीणां सम्मुखशुक्रस्य दोषो न भवतीति। यदि पितृगृहे स्तनोद्भवः एवं रजोदर्शनमपि अभूत् तदा शुक्रसम्मुखदोषो न भवति।

ज्योति—भृगु, अंगिरा, वत्स, वशिष्ठ, कश्यप, अत्रि, भरद्वाज, आदि मुनियों के गोत्र की स्त्रियों का भी शुक्र सम्मुखदोषो नहीं होता। यदि पिता के घर कुच (स्तन) अथवा रजोदर्शन होने पर कदापि शुक्र सम्मुख दोष नहीं होता।

द्वचगे राहुविचारः—

अलिधनुमकरार्के पूर्वसंस्थश्च राहु-
कलशसफरमेषे दक्षिणे संहिकेयः।
वृषमिथुन कुलीरे पश्चिमे दिग्विभागे
हरियुवती तुलायां चोत्तरे द्व्यंगराहुः ॥ २९३ ॥

कुन्तला—वृश्चिक धनु, मकरराशौ गते सूर्ये राहुः पूर्वे तिष्ठति। कुम्भः, मीनः एवं मेषराशौ सूर्यस्थे राहुः दक्षिणे तिष्ठति। वृष मिथुनौ एवं कर्कराशौ विद्यमाने सवितरि पश्चिमदिशायां राहुस्तिष्ठति। सिंहः कन्या, तुलायां च राहुः उत्तरे तिष्ठतीति।

ज्योति—वृश्चिक, धनु, मकर राशियों के सूर्य होने पर राहु पूर्व में रहता है। कुम्भ मीन, मेष के सूर्य रहने पर राहु दक्षिण में रहता है। वृष

मिथुन, कर्क इन राशियों के सूर्य होने पर राहु पश्चिम में रहता है। सिंह, कन्या, तुला, इन राशियों के सूर्य रहने पर राहु उत्तर में रहता है।

राहु दिशाचक्रम्

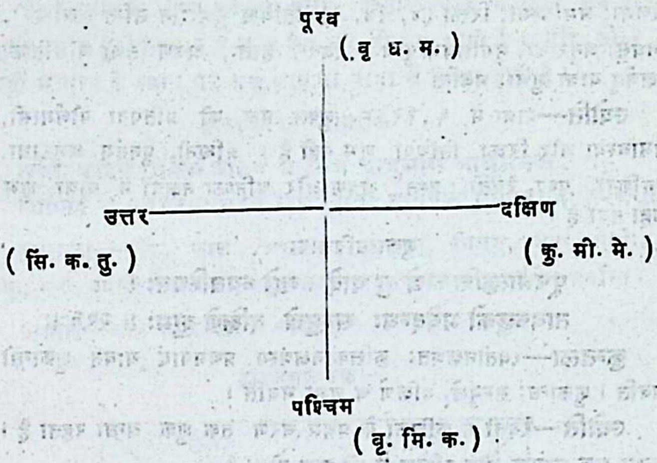
पूरब
(वृ ध. म.)
उत्तर
(सिं. क. तु.)
दक्षिण
(कु. मी. मे.)
पश्चिम
(वृ. मि. क.)

राहुफलम्—

अग्रतो राहुर्वैधव्यं दक्षिणे सुतहा भवेत्।
पृष्ठे पुत्रवती प्रोक्ता वामे सौभाग्यदायिनी ॥ २९४ ॥

कुन्तला—सम्मुखे स्थिते राहुः कन्या विधवा भवति । दक्षिणे पुत्रनाशः पृष्ठे पुत्रवती, वामे च सौभादायिनी च भवतीति ।

ज्योति—सम्मुख राहु हो तो स्त्री विधवा होती है, दक्षिण हो तो पुत्र नाशः पीछे हो तो पुत्रवती और वायें हो तो सोहागिन होती है।

* * *

अथ यात्रा प्रकरणम्

यात्रामुहूर्त्तः—

न षष्ठी न च द्वादशी नाष्टमी नो सिताद्या तिथिः पौर्णिमामा न रिक्ता ।
हयादित्यमैत्रेन्दुजीवान्त्यहस्तश्रवो वासवैरेव यात्रा प्रशस्ता ॥ २९५ ॥

कुन्तला—यात्रायां षष्ठी, द्वादशी, अष्टमी शुक्लपक्षस्य प्रतिपद् तिथिः, पूर्णिमा, अमावस्या, रिक्ता (४, १४, ९) तिथिश्च शुभाः न सन्ति । अश्विनी, पुनर्वसु, अनुराधा, मृगशिर्षः, पुष्यः, रेवती, हस्तः, श्रवणः तथा च धनिष्ठा नक्षत्रेषु यात्रा शुभाः भवन्ति ।

ज्योति—यात्रा में ६, १२, ८, शुक्ल पक्ष की प्रतिपदा पौर्णमासी, अमावस्या और रिक्ता तिथियां शुभ नहीं हैं । अश्विनी, पुनर्वसु, अनुराधा, मृगशिरा, पुष्य, रेवती, हस्त, श्रवण और धनिष्ठा नक्षत्रों में यात्रा शुभ कहा गया है ।

शुक्रान्धविचारः—

पूषभात्कृत्तिकाद्ये तु पादे चन्द्रो व्यवस्थितः ।
तावच्छुक्रो भवेदन्धः सम्मुखे दक्षिणे शुभः ॥ २९६ ॥

कुन्तला—रवतीनक्षत्रतः कृत्तिकानक्षत्रस्य प्रथमपादं यावत शुक्रान्धो भवति । शुकान्धः सम्मुखे, दक्षिणे च शुभो भवति ।

ज्योति—रेवती से कृत्तिका के प्रथम चरण तक शुक्र अन्धा रहता है । अन्धा शुक्र सम्मुख और दक्षिण में भी शुभ होता है ।

सर्वाङ्कविधिः—

तिथिवारं च नक्षत्रं नामाक्षरसमन्वितम् ।
द्वित्रिचतुर्भिगुणितं रससप्ताष्टभाजितम् ॥ २९७ ॥
आदिशून्ये भवेद् हानिर्मध्यशून्ये रिपोर्भयम् ।
अन्त्यशून्ये भवेन्मृत्युः सर्वाङ्के विजयी भवेत् ॥ २९८ ॥

कुन्तला—शुक्लप्रतिपदारभ्य तिथिसंख्या, वारसंख्या, नक्षत्रसंख्या तथा च यात्राकर्त्तुः नामाक्षराणि संख्या च संयोज्य स्थानत्रये स्थाप्यम् । क्रमेण द्वि, त्रिः, चतुर्भिश्च संगुण्य रस = षट्, सप्त, तथा च अष्टभिः भाजिते सति यदि प्रथमस्थाने शून्यशेषो भवेत् तदा हानिः, द्वितीयस्थाने शुन्यशेषे शत्रुभंयम्, तृतीय स्थाने शुन्यशेषे च मृत्युर्वाच्यम् यदि त्रिषु स्थानेषु शुन्यशेषस्थाने अङ्क उपलभ्येत् तदा यात्रायां यात्राकर्त्ता विजयी भवतीति ।

ज्योति—शुक्ल प्रतिपदा से लेकर तिथि संख्या, वारसंख्या नक्षत्रसंख्या, और यात्रा कर्त्ता के नाम अक्षर की संख्या को जोड़कर पृथक्-पृथक् तीन स्थानों में रखें। एक स्थान में दो से गुणाकर छः का भाग दें, द्वितीय स्थान में इसे गुणाकर ७ से भाग दें, तृतीय स्थान में ४ से गुणाकर ८ का भाग दें। पहले स्थान में शून्य बचे तो हानि, द्वितीय स्थान में शून्य बचे तो शत्रुभय, और तृतीय स्थान में शून्य शेष बचे तो मृत्यु होती है। यदि तीनों स्थानों में शून्य के स्थान पर अङ्क आवे तो यात्रा में विजय होती है।

द्वादशभावनां नामानि—

मूर्तिः कोशो विक्रमं वाहनं च मित्रं शत्रुभार्गं आयुर्मनश्च ।
व्यापारं च प्राप्तिरप्राप्तिरेव लग्नाद्भावो द्वादशैते विचिन्त्याः ॥२९९॥

कुन्तला—मूर्तिः, कोशः, पराक्रमः, वाहनम्, मित्रम्, शत्रुः, मार्गः, आयुः, मनः, व्यापारः प्राप्तिः, अप्राप्तिश्च द्वादशभावाः लग्नात्क्रमेण भवन्ति।

ज्योति—नीचे लिखे चक्र से स्पष्ट हैं—

द्वादशभावचक्र—

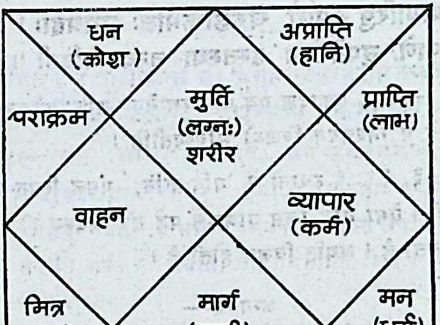
धन
(कोश)
अप्राप्ति
(हानि)
मुर्ति
(लग्नः)
शरीर
पराक्रम
प्राप्ति
(लाभ)
वाहन
व्यापार
(कर्म)
मित्र
(पुत्र)
मार्ग
(पत्नी)
मन
(धर्म)
शत्रु
(मातुल)
आयु

यात्रालग्ने शुभाशुभफलम्—

घ्नन्ति क्रूरास्त्र्यायशत्रून् विहाय न व्यापारं संहतः सूर्यभौमाः ।
सौम्याः पुष्यन्त्येवहित्वारिभावं शुक्रश्चास्तं मूर्तिभावं तथेन्दुः ॥३००॥

कुन्तला—तृतीयः, एकादशः एवं षष्ठस्थानं विहाय सर्वान् भावान् क्रूरग्रहाः नश्यन्ति । सूर्यः भौमश्च व्यापारं दशमभावं न, संहृतः = नश्यतः । शुभग्रहाः षष्ठंभावं विहाय अन्यभावान् पुष्यन्ति । शुक्रः सप्तमंभावं विहाय अन्यभावन् पुष्यति । चन्द्रः; मूर्तिः=लग्नं विहाय सर्वेषां भावानां पुष्टं करोति ।

ज्योति—तृतीय, एकादश और षष्ठ इन भावों को छोड़कर सब भावों को क्रूरग्रह नष्ट करते हैं । सूर्य तथा मंगल दशम भाव को नष्ट नहीं करते हैं। क्रूरग्रह षष्ठ भाव को छोड़कर अन्य भावों को पुष्ट करते हैं । शुक्रसप्तम भाव को छोड़कर अन्य भावों को पुष्ट करता है और चन्द्रमा लग्न को छोड़कर सभी भावों अन्य भावों को पुष्ट करता है ।

विजययोगः—

त्र्यायारिषु यमारौ चेच्छक्तिभाजः शुभग्रहाः ।
प्रयाणे नृपतेर्यस्य हस्तस्था तस्य मेदिनी ॥ ३०१ ॥

कुम्तला—तृतीय, एकादश एवं षष्ठ स्थानेषु शनिः भौमश्च विद्यमाने, ग्रहाणां सवलत्वे च निश्चयेन विजयो भविष्यतीति ।

ज्योति—३, ११, ६ स्थानों में यदि शनि, मंगल स्थित हो और शुभ ग्रह वलवान् हों । ऐसा योग जिस यात्रा में पड़े तो अवश्य ही राजा पृथ्वीमण्डल को जीतता है । अर्थात् विजय होती है ।

अन्यच्च—

गुरौ लग्ने रविः षष्ठे रन्ध्रे नेन्दुश्च गच्छतः ।
तस्य यस्यारि सेनाग्रे खलमैत्रीव न स्थिरा ॥ ३०२ ॥

कुन्तला—यात्राकाले गुरुः यस्य लग्ने, सूर्यः षष्ठे, तथा च चन्द्रः अष्टम-

स्थानातिरिक्तान्येषु स्थानेषु विद्यमाने सति तस्याग्रे शत्रुसेना खलमैत्रीव न तिष्ठति अर्थात् विजयो भवति इति वाच्यम् ।

ज्योति—यात्राकाल में बृहस्पति जिसके लग्न में हो; सूर्य छठे स्थान में हो, और चन्द्रमा अष्टम स्थान के सिवाय और स्थानों में हो तो उसके आगे शत्रु सेना खल की मित्रता के समान नहीं ठहरती अर्थात् सेना नष्ट हो जाती हैं और विजयश्री प्राप्त होती है ।

कल्याणयोगः—

गुरौ केन्द्रे त्रिकोणे च रवौ लाभे च कर्मणि ।
कल्याण योगो भूपस्य यातुः कल्याणकृद् भवेत् ॥ ३०३ ॥

कुन्तला—यदि गुरुः केन्द्रे (१, ४, ७, १०), त्रिकोणे (९, ५) विद्यमाने तथा च सूर्यः एकादशे, दशमे च स्थिते सति यात्राकर्त्तभूपालस्य विजयो भवतीति वाच्यम् ।

ज्योति—यदि बृहस्पति केन्द्र में त्रिकोण में स्थित हो और सूर्य एकादश तथा दशम भाव में स्थित हो तो यात्रा करनेवाले राजा के लिए कल्याणप्रद योग होता है ।

अन्यच्च—

लग्नारिकर्महिबुकेषु शुभेक्षितो ज्ञो द्युनान्त्यलग्नरहितेष्वशुभग्रहेषु ।
यातुर्भयं न भवति प्रतरेत्समुद्रं यद्यश्मना किमुतवैरिसमागमेव ॥

कुन्तला—लग्न, अरि = षष्ठभावे, कर्म = दशमभावे, हिबुके = चतुर्थ भावेषु च यदि शुभग्रहावलोकितः बुधः तथा च पापग्रहाः सप्तम द्वादाशसभाव-रहितान्येषु भावेषु विद्यमाने सति गमनकर्त्ता प्रस्तरोपरि उपविश्य समुद्रं तर्त्तुं कामये तदापि भयं न भवति, वैरिसमागमेन किम् । अर्थात् निश्चयेन विजयो भवतीति बोध्यम् ।

ज्योति—लग्न, षष्ठ, दशम, चतुर्थ इन भावों में शुभग्रह द्वारा देखा हुआ बुध स्थित हो और पापग्रह सप्तम, द्वादश भावों से रहित अन्यभावों में विद्यमान हों तो गमन करनेवाला यदि पत्थर पर बैठकर समुद्र में तैरे तो भी भय नहीं होता, वैरी के समागम से क्या भय हो सकता है ।

योगाधियोग—

पकेनापि झस्फुजिद्वाक्पतीनां योगः प्रोक्तः केन्द्रधर्मात्मजेषु ।
द्वाभ्यामेषां वाधियोगाभिधानं नूनं सर्वैरेव योगधियोगः ॥३०५॥
योगेन ये नृपतयोऽरिगृहं व्रजन्ति क्षेमेण ते गमनमागमनं च कुर्युः ।
क्षेमं यशो रिपुविनाशमथाधियोगे योगाधियोगगमने लभते धरित्रीम् ॥

कुन्तला—बुधः, शुक्रः तथा गुरुश्च येषु एकोपि, केन्द्रे (१, ४, ७, १०), नवमे, पञ्चमे च स्थितो भवेत् तदा **'योग'** नामकमुहूर्त्तो भवति । यदि एषु द्वौग्रहौ स्थितो भवेतां तदा अधियोगनामकमुहूर्त्तो भवति । एवमेव यदि उक्तस्थानेषु (केन्द्रे, त्रिकोणे वा) बुधः शुक्रो, गुरुश्च सर्वे स्थिताः भवन्ति तदा 'योगाधियोगनामक'-मुहूर्त्तो भवतीति बोध्यम् । नृपाः योगमुहूर्त्ते शत्रुगृहं व्रजन्ति (गच्छन्ति) ते क्षेमपूर्वकं अग्रे गच्छन्ति, तथा च ये अधियोगमुहूर्त्ते गच्छन्ति ते क्षेमं (कल्याणं) कीर्ति च सम्प्राप्य शत्रुनाशं कुर्व्वन्ति । एवं योगाधिमोगमुहूर्त्ते च गमनकर्त्तारः सम्पूर्णभूमण्डलं लभन्ते इति ।

ज्योति—बुध, शुक्र, बृहस्पति इन तीनों में से एकग्रह केन्द्र में (१, ४, ७, १०) और नवम पञ्चम भाव में स्थित हो तो योग नामक मुहूर्त्त होता है । दो ग्रह स्थित हों तो अधियोग नामक मुहूर्त्त होता है । इन्हीं स्थानों पर बुध, शुक्र, बृहस्पति आदि सभी ग्रह स्थित होवें तो योगाधियोग मुहूर्त्त होता है । योग मुहूर्त्त में जो राजा शत्रुगृह जाता है वह क्षेम पूर्वक आगे जाता है और जो अधियोग मुहूर्त्त में जाता है वह क्षेम और कीर्ति प्राप्त कर शत्रु का नाश करता है और जो योगाधियोग में गमन करता है वह सम्पूर्ण पृथ्वी को विजय कर लेता है ।

योगान्तरम्—

जननसमयलग्नान्नैधने जन्मभाद्वा
निजरिपुभवनाद वा शत्रुभे लग्नयाते ।
पतिभिरुदितवीर्यैः लग्नगैः पार्थिवानां
गमनमथ विषं वा भक्षणं तुल्यमेव ॥ ३०७ ॥

कुन्तला—यदि जन्मकालस्य लग्नात् अथवा जन्मराशितः अष्टमराशि

यात्रा लग्ने भवेत् अथवा शत्रोः राशे षष्ठं राशिः च यात्रा लग्ने भवेत् तथा च लग्नाधीशः सवले सति लग्ने विद्यमानत्वात् नृपाणां लग्नोऽयं विषभक्षण तुल्यो अनिष्टकरो भवति ।

ज्योति—यदि जन्म समय के लग्न से अथवा जन्मराशि से ८ वीं राशि यात्रा में हो अथवा शत्रु की राशि से छठी राशि यात्रा लग्न में हो और लग्नपति (वलवान्) होकर लग्न में स्थित हो तो राजाओं के लिए यह लग्न विषभक्षण के समान अनिष्टकारी होता है ।

योगविशेषः—

षष्ठाष्टमान्त्यास्तगते विलग्ने यात्रा न देया शुभदैरपि ग्रहैः ।
दिनाश्य तेषां फलमत्र लग्नपो मृत्युं करोत्येव यतो हि भूपतेः ॥२०८॥

कुन्तला—षष्टे, अष्टमे, द्वादशे, सप्तमे च स्थिते लग्नेशः तथा च अन्ये ग्रहाणां शुभत्वेऽपि यात्रा न कार्या । उपर्युक्तस्थानेषु विद्यमाने लग्नेशः शुभफलमपि विनश्य शीघ्रमेव नृपस्य मृत्यु करोति ।

ज्योति—षष्ठ, अष्टम, द्वादश और सप्तम स्थान में यदि लग्नपति हो और शुभग्रह शुभदायक हों तो भी यात्रा नहीं करनी चाहिए । उपर्युक्त स्थानों पर स्थित लग्नपति शुभग्रहों का भी फल विनाश कर शीघ्र ही राजा की मृत्यु करा देता है ।

अन्ययोगः—

लग्नाधिपे सूर्यसुते च नीचगे पराजिते नैधनशत्रुगेहे ।
एवं नृपो यात्यरि राजगेहे प्राप्नोति मृत्युं यवना वदन्ति ॥२०९॥

कुन्तला—लग्नाधिपे = लग्नेशः, सूर्यसुते = शनैश्चरः, नीचराशिस्थिते तथा पराजिते च अष्ठमे षष्ठे च विद्यमाने नृपस्य शत्रुगृहगमने अवश्यमेव मृत्युर्भवति । एवं यवनाचार्याः वदन्ति ।

ज्योति—लग्नपति और शनि अपने नीच राशि में और पराजित होकर अष्टम भाव तथा षष्ठ भाव में हो तो ऐसे समय राजा शत्रु के घर जाय तो निःसंदेह वह मर जाता है । ऐसा यवनाचार्य कहते हैं ।

यात्रायां राहुविचारः—

अष्टासु प्रहरार्द्धेषु प्रथमाद्येष्वहर्निशम् ।

पूर्वस्यां वामतो राहुस्तुर्यां तुर्यां दिशं व्रजेत् ॥
यात्रायां दक्षिणे राहुर्युद्धकाले जयो भवेत् ।
पृष्ठे च समता ज्ञेया सम्मुखे वाममृत्युदा ॥ ३१० ॥

अधोलिखित चक्रेण कुन्तला ज्योति टीका स्पष्टं भवति ।

राहुचक्र—

पू.	वा	ट.	ई.	प.	अ।	उ.	नै.	दिशा
॥	१	१॥	२	२॥	३	३॥	४	दिन प्रहरार्द्ध
४॥	५	५॥	६	६॥	७	७॥	८	रात्रि प्रहरार्द्ध

नारदवासज्ञानम्—

तिथिवारयुतं कार्यं त्रिभिर्भागो विधीयते ।
स्वर्गपातालमर्त्येषु क्रमतो याति नारदः ॥
मृत्युलोकं यदा तिष्ठेत् तदा युद्धं न संशयः ॥ ३११ ॥

कुन्तला—तिथिवारं योज्यत्रिभिः भक्ते यदि १ शेषे स्वर्गे, २ शेषे पाताले, ३ शेषे च मृत्युलोके नारदवासो ज्ञेयः । यत्र नारदवासो भवति तत्र निश्चयेन युद्धं ज्ञेयमिति ।

ज्योति—तिथिवार जोड़कर ३ का भाग दें । यदि १ शेष वचे तो स्वर्ग में, २ शेष बचे तो पाताल में ओर यदि ३ शेष वचे तो मृत्यु लोक में नारद वास होता है जहाँ पर नारद वास हो वहाँ अवश्य हो युद्ध होगा, इसमें संशय नहीं है ।

आर्द्रादियुद्धनाडीचक्रम्—

आर्द्रादौ मृगपर्यन्तमध्ये मूलं प्रतिष्ठितम्
रवीन्दुनामनक्षत्रं यद्येको नाडिको भवेत् ।
तस्य मृत्युर्न संदेहो रोगाद्वाथवा रणेपि वा
विशेषेण चिन्तयेत् नाड्यां युद्धकाले सदा वुधैः ॥३१२॥

कुन्तला—सुगमं;

ज्योति—आर्द्रा नक्षत्र को आदि से लेकर मृगशिरा तक गिनें और मध्य कोष्ठ में मूल नक्षत्र लिखें। यदि सूर्य, चन्द्र और नाम नक्षत्र एक ही नाड़ी में पड़े तो मृत्यु समझना चाहिए। यह योग रोग और रण दोनों में विचार करना चाहिए।

आर्द्रादियुद्धनाडीचक्रम्

आ.	पू. फा.	उ. फा.	अनु.	ज्ये.	ध.	श.	म.	कृ.	आदि नाडी
पु.	म.	ह.	वि.	मूल	श्र.	पू. भा.	अ.	रो.	मध्य नाडी
पु.	श्ले.	चि.	स्वा.	पू. षा	उ. षा.	उ भा.	रे.	मृ.	अन्त्य नाडी

शत्रुञ्जयोगः—

शुक्रवाक्पति वुधैधनसंस्थै सप्तमे शशिनि लग्नगतेर्के।
निर्गतो नृपतिरेति कृतार्थो वनतेय वदरीन्विनिहन्ति ॥२१३॥

कुन्तला—गुरु, शुक्रः, बुधश्च धनस्थाने, चन्द्रः सप्तमे तथा च लग्ने सूर्यश्चेत् तदा यात्राकर्त्तानृपः निश्चयेन विजयी भवति।

ज्योति—गुरु, शुक्र और बुध धन स्थान में हों, चन्द्रमा सप्तम में हो, और लग्न में सूर्य हो तो ऐसे योग में यात्रा करने वाला राजा अवश्य हीं शत्रु को जीत कर निःसन्देह विजयलक्ष्मी को प्राप्त करता है।

शत्रुञ्जय चक्रम्

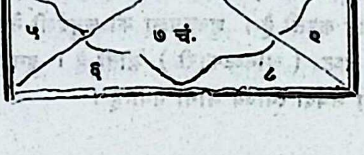

यात्रायां ग्राह्याग्राह्यतिथयः—

कृष्णा च प्रतिपच्छ्रेष्ठा नो शुक्ला गमनादिषु ।
द्वितीया कार्यसिद्धये स्यात्तृतीया क्षेमसम्मदः ॥ ३१४ ॥

चतुर्थी क्लेशदा ज्ञेया लाभदा पञ्चमी तथा ।
व्याध्यर्त्तिदायिनी षष्ठी सप्तमी योग्यभोगदा ॥ ३१५ ॥

रोगदा चाष्टमी ज्ञेया नवमी मृत्युदा सदा ।
दशमी लाभदा नित्यं हेमदैकादशी स्मृता ॥ ३१६ ॥

प्राणहृत् द्वादशी प्रोक्ता सर्वसिद्धा त्रयोदशी ।
शुक्ला चतुर्दशी नेष्टा कृष्णपक्षे विशेषतः ॥ ३१७ ॥

पौर्णिमा मध्यमा प्रोक्ता त्याज्यो दर्शस्तु सर्वथा ।
तिथीनां फलमेतद्धि ज्ञातव्यं गमने बुधैः ॥ ३१८ ॥

कुन्तला—यात्रायां कृष्णपक्षस्य प्रतिपदतिथिः श्रेष्ठा भवति । शुक्लपक्षस्य प्रतिपदतिथिः अशुभं भवति । उभयोः पक्षयोः द्वितीयातिथिः सिद्धिदा, तृतीयाक्षेमंदा, धनदा च, चतुर्थी क्लेशप्रदा, पञ्चमी लाभदा, षष्ठी व्याधिदा, सप्तमी योग्यभोग्यकरो, अष्टमी रोगदा, नवमी, मृत्युदा, दशमी लाभदा, एकादशी सुवर्णप्रदा, द्वादशी प्राणनाशकरी, त्रयोदशी च समस्तसिद्धिप्रदायिनी भवति । शुक्लपक्षस्य चतुर्दशी नेष्टा, तथा च कृष्णपक्षस्य च विशेषनेष्टा भवति । एवं पूर्णिमा मध्यमा, तथा अमावस्या सर्वदा त्याज्या भवति । एवमेव तिथीनां फलं यात्राकाले बुधैः ज्ञेयम् ।

ज्योति—प्रत्येक मास के कृष्णपक्ष की प्रतिपदा शुभ और शुक्लपक्ष की प्रतिपदा अशुभ होती है । दोनों पक्ष की द्वितीया सिद्धि देनेवाली, तीज क्षेम और सम्पत्ति देनेवाली, चौथी क्लेश, पञ्चमी लाभ, षष्टी व्याधि, सप्तमी योग्य और भोगदायिनी, अष्टमी रोग, नवमी मृत्यु, दशमी लाभ, एकादशी सुवर्ण देनेवाली, द्वादशी प्राणनाश और त्रयोदशी समस्त कार्यों की सिद्धि प्रदान करती है । शुक्लपक्षा की चतुर्दशी नेष्ट और कृष्णपक्ष की तो विशेष नेष्ट (अनिष्टकारी) होती है । इस प्रकार पूर्णिमा मध्यम तथा अमावस्या सर्वदा त्याज्य मानी गयी है ।

पिनाक योगः—

रविः षष्ठे सितः छिद्रे तृतीये भूमिनन्दने।
पिनाकयोगो विख्यातायातुर्विजयकारकः॥ २१९ ॥

कुन्तला—रविः षष्ठे, सितः=शुक्र छिद्रे = अष्टमे, भूमिनन्दनः = भौमः तृतीये स्युस्तदा पिनाकनामकयोगो भवति। यस्मिन् योगे यातुः निश्चयेन विजयी भवतीति।

ज्योति—सूर्य छठे में, शुक्र आठवें में, मंगल तीसरे में हो तो पिनाक नामक योग होता है। इसमें यात्रा करने से निश्चय ही शत्रु भाग जाता है और विजयश्री प्राप्त होती है।

यात्रायां उत्तम, मध्यम एवं निकृष्टनक्षत्राणि—

धनिष्ठाश्रवणौ हस्तोऽनुराधा रेवती द्वयम्।
मृगः पुनर्वसु पुष्यः श्रेष्ठान्येतानि भानि च॥ ३२० ॥
मूलं पूर्वात्रयं ज्येष्ठा रोहिणीशततारकम्।
उत्तराणां त्रयं याने मध्यान्येतानि भानि च॥ ३२१ ॥
चित्रात्रयं मघाश्लेषा कृत्तिकार्द्राभरण्यपि।
वर्ज्यानीमानि धिष्ण्यानि यात्रायां जन्मभं तथा॥ ३२२ ॥

कुन्तला—धनिष्ठा, श्रवणः, हस्तः, अनुराधा, रेवती, अश्विनी, मृगशिरा, पुनर्वसु एवं पुष्यनक्षत्राणि यात्रायां श्रेष्ठाः सन्ति। मूलं पूर्वात्रयं, ज्येष्ठा, रोहिणी, शतभिषा तथा उत्तरात्रयं च यात्रायां मध्यमाः सन्ति। चित्रा, स्वाती, विशाखा, मघा, आश्लेषा, कृत्तिका, आर्द्रा तथा च भरणी इमानि नक्षत्राणि यात्रायां वर्जितानि सन्ति।

ज्योति—धनिष्ठा, श्रवण, हस्त, अनुराधा, रेवती, अश्विनी मृगशिरा, पुनर्वसु, और पुष्य—ये नक्षत्र यात्रा में श्रेष्ठ हैं। मूल, तीनों पूर्वा, ज्येष्ठा, रोहिणी, शतभिषा, तीनों उत्तरा—ये नक्षत्र यात्रा में मध्यम हैं। चित्रा, स्वाती, विशाखा, मघा, आश्लेषा, कृत्तिका, आर्द्रा और भरणी ये नक्षत्र यात्रा में त्याज्य माने गये हैं।

दिक्विदिक्शूलं च—

दिक्शूलं पूर्वदिग्भागे ज्येष्ठायां शनिसोमयोः ।
पूर्वाभाद्रपदे याम्यां तथैव गुरुवासरे ॥
रवौ शुक्रे च रोहिण्यां पश्चिमायां त्यजेद् बुधः ।
उदीच्यामुत्तराफाल्गुन्यप्रिधे मङ्गले बुधे ॥ ३२३ ॥

कुन्तला—एवं ज्योति टीका अधोलिखित चक्रेण स्पष्टं भवति—

॥ दिक्विदिक्शूलचक्र ॥

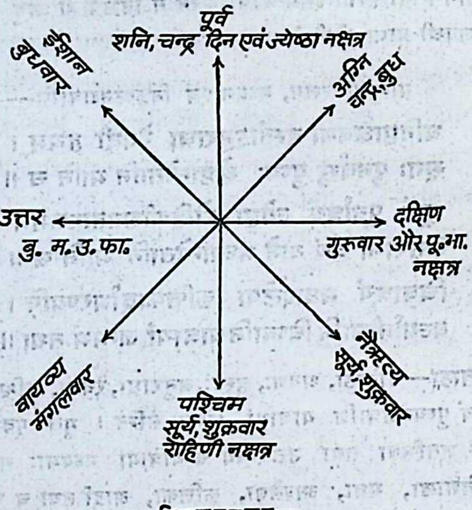
पूर्व
शनि, चन्द्र दिन एवं ज्येष्ठा नक्षत्र
ईशान
बुधवार
अग्नि
चन्द्र, बुध
उत्तर
बु. म. उ. फा.
दक्षिण
गुरुवार ओर पू. भा.
नक्षत्र
वायव्य
मंगलवार
नैर्ऋत्य
सूर्य, शुक्रवार
पशिचम
सूर्य, शुक्रवार
रोहिणी नक्षत्र

दिक्शूलचक्रम्—

शूलसंज्ञानि धिष्ण्यानि शूलज्ञाश्च वासराः ।
यायिनां मृत्युदाः शीघ्रमथवा चार्थहानिदा ॥ ३२४ ॥

कुन्तला—सुगमः

ज्योति—शूल संज्ञक नक्षत्र तथा वारों में गमन करने से धन नाश ओर मृत्यु होती है ।

योगिनीवासः—

प्रतिपन्नवमी पूर्वे ईशान्यां दर्शे चाष्टमी।
तृतीयैकादशात्यग्नौ याम्यां पञ्चत्रयोदशी॥ ३२५॥

द्वादशी च चतुर्थी च नैर्ऋत्ये योगिनी सदा
षष्ठी चतुर्दशी चैव पश्चिमायां वसेत्सदा।
सप्तमी पौर्णिमा चैव वायव्ये योगिनी वसेत्
द्वितीया दशमीयुक्ता शिवा वसति उत्तरे॥ ३२६॥

'कुन्तला' एवं 'ज्योति' टीका अधोलिखित चक्रेण स्पष्टम्।

योगिनीवास चक्र

पूर्व.	अग्नि.	दक्षिण	नैऋ.	पश्चिम	वायव्य	उत्तर	ईशान	दिक्
१	३	५	४	६	७	२	८	तिथयः
९	११	१३	१२	१४	१५	१०	३०	

योगिनीफलम्—

योगिनी सम्मुखे द्युते युद्धे च मृत्युदा।
अशुभा दक्षभागस्थापृष्ठे वामे जयप्रदा॥ ३२७॥

कुन्तला—द्युते, युद्धे, गते = यात्रायां च सम्मुखयोगिनी मृत्युदा भवति। दक्षिणे अशुभाः तथा पृष्ठे वामे च जयप्रदा भवति।

ज्योति—जूए में, यात्रा में, युद्ध में सम्मुख योगिनी मृत्युप्रद है। दाहिने भाग में अशुभ, और पीछे व वाम भाग में योगिनी जय प्रद होती है।

कालवासः—

अर्कोत्तरे वायुदिशा च सोमे, भौमे प्रतीच्यां, बुध नैर्ऋते च।
याम्यां गुरौ वह्निदिशां च शुक्रे मन्दे च पूर्वे प्रवदन्ति कालम्॥३२८॥

अधोलिखित चक्रेण 'कुन्तला; एवं ज्योति टीका स्पष्टं भवति—

॥ कालवासचक्र ॥

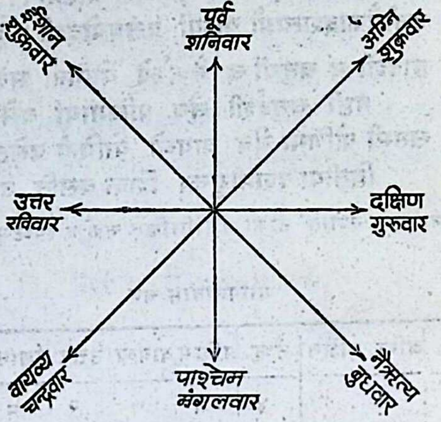
ईशान
शुक्रवार
पूर्व
शनिवार
अग्नि
शुक्रवार
उत्तर
रविवार
दक्षिण
गुरुवार
वायव्य
चन्द्रवार
पश्चिम
मंगलवार
नैऋत्य
बुधवार

कालवासफलम्—

कालस्याभिमुखः पाशो वैपरीत्यन्तयोनिशि ।
तावुभौ सम्मुखौत्याज्यो वामदक्षिण गौ शुभौ ॥ ३२९ ॥

कुन्तला रात्रौ कालस्य = अभिमुखः = सम्मुखः, पाशो = वन्धनः (फांस इति) भवति । दिवायां विपरीतं ज्ञेयम् अर्थात् कालस्य दिशि पाशः तथाच पास्यस्य दिशि कालो भवति । अतः इमौ यात्रायां त्याज्यौ भवतः । एवं क्रमेण वामे दक्षिणे च शुभौ भवतः ।

ज्योति—रात्रि में काल के सम्मुख पाश (फांस) रहता है । दिन में दोनों विपरीत रहते हैं । अर्थात् काल की दिशा में पाश और पाश की दिशा में काल हो जाता है । इन्हें यात्रा में सम्मुख त्याग दें । वे क्रमशः वाम और दक्षिण भाग में शुभ हो जाते हैं ।

चन्द्रवासः—

मेषसिंह धनुः संस्थः पूर्वस्यां दिशि चन्द्रमाः ।
दक्षिणस्यां वसेन्नित्यं कन्यावृषभनक्रगाः ॥ ३३० ॥

तुलामिथुनकुम्भस्थः पश्चिमायां निशाकरः।
कर्कवृश्चिकमीनेषु गतस्तिष्ठेत्तथोत्तरे ॥ ३३१ ॥

मेषः, सिंहः तथा च धनुराशेः चन्द्रः पूर्वस्यां (पूर्वदिशि) तिष्ठति। कन्या, वृष एवं मकरराशेः चन्द्रः दक्षिणाशायाम्; तुला मिथुन एवं कुम्भराशेः चन्द्रः पश्चिमआशायाम्, कर्क, वृश्चिक तथा च मीनस्थे चन्द्रः उत्तरदिशि च निवसति।

ज्योति—मेष, सिंह और अनुराशि का चन्द्रमा पूर्व दिशा, कन्या, वृष, मकर का चन्द्रमा दक्षिण दिशा, तुला, मिथुन, कुम्भ का चन्द्रमा पश्चिम दिशा में, और कर्क, वृश्चिक तथा मीन का चन्द्रमा उत्तर दिशा में निवास करता है।

चन्द्रवासफलम्—

सम्मुखेऽञ्जेऽर्थलाभः स्यात्सुखं सम्पच्च दक्षिणे।
पृष्ठगे निधनं यातु वामभागे वसुक्षयः ॥ ३३२ ॥

कुन्तला—सम्मुखे चन्द्रे यात्राकर्त्तु धनलाभः, दक्षिणे सुखसम्पदा, पृष्टे मृत्युः तथा च वामभागे धननाश करोति।

ज्योति—यदि सम्मुखचन्द्र में यात्रा करे तो धनलाभ, दहिने सुखसम्पदा, पीछे मृत्यु और वामभाग में धननाश होता है।

विजयादशमी—

आश्विने दशमी शुक्ला विजया सर्वसिद्धिदा।
श्रवणेन युताऽत्यन्तं जयदानृपतेर्गमे ॥ ३३३ ॥

कुन्तला—आश्विनमासस्य शुक्लदशमी तिथिः सर्वसिद्धिदा विजयादशमी भवति। सा दशमी तिथिः यदि श्रवणनक्षत्रेण युक्ता भवेत् तदा यात्रायां नृपतेः विजयं करोति।

ज्योति—आश्विन शुक्ल की दशमी को विजयादशमो कहते हैं। वह दशमी समस्त अर्थ सिद्ध करने वाली होती है। यदि वह श्रवण नक्षत्र युक्त होवे तो यात्रा में राजाओं को विजय प्रदान करती है।

शकुनादिविचारः—

उषः प्रशस्यते गर्गः शकुनश्च वृहस्पतिः।
अङ्गिरामन उत्साहो विप्र वाक्यो जनर्दनः ॥ ३३४ ॥

कुन्तला—गर्गाचार्याः कथयन्ति यत् प्रातः काले अरुणोदये यात्रा शुभद, भवति। वृहस्पतिः शुभशकुनानन्तरं यात्रा कार्या। अङ्गिरामतानुसारेण यस्मिन् काले मनप्रसन्नो भवेत् तस्मिन्नेव काले यात्रा कार्या। जनार्दनः कथयति यद् ब्राह्मणाज्ञानुसारेण कस्मिन्नपि काले यात्रा करणेन शुभं भवतीति बोध्यम्।

यात्रायां शुभ शकुनविचारः—

विप्राश्वेभफलान्नदुग्धदधिगोसिद्धार्थपद्माम्बरम्
वेश्यावाद्यमयूर चाषनकुला वद्धैकपाश्वाभिषम्।
सद्वाक्यं कुसुमेषु पूर्णकलशछत्राणि भृत्कन्यका
रत्नोष्णीषसिताक्षमद्यसस्तुत स्त्रीदीप्तवैश्वानराः ॥ ३३५ ॥

आदर्शाञ्जन धौतवस्त्ररजकामीनाज्यसिंहासनम्
शावं रोदन वर्जितं ध्वजमधुच्छागास्त्र गोरोचनम्।
भारद्वाज नृयानवेदनिनदा माङ्गल्य गोतांकुशाः
पृष्ठाः सत्फलदाः प्रयाण समयेरिक्तो घटः स्वानुगः॥३३६॥

कुन्तला—ब्राह्मणः, अश्वः, ईभः = हस्तिः, फलं, अन्नम् दुग्धः, दधि, गोः, पद्मः = कमलः स्वच्छवस्त्रं, वेश्या, वाद्य, मयूरः, चाषः = वाजपक्षीः, नकुलः, पाशवद्धवृषभः, मांसः, शुभवाक्यं, पुष्पं, इक्षुः, सजलकलशः, क्षत्र, मृतिका कन्या, रत्नम् उष्णीषः, श्वेत वृषम मघः, पुत्रसहितस्त्री, दीप्ताग्निः दर्पणः, अज्जनः, श्वेतवस्त्रसहितरजकः, मत्स्यः, घृतः, सिहासनं, रोदनरहितशवः, ध्वजः, मधु, छागः, अस्त्रं, गोरोचनः, भरद्वाजपक्षी, पालकी, वेदध्वनिः, मंगालगीतः, अङ्कुशः, पृष्ठे आगतरिक्तघटः, यात्रा (प्रयाण) काले दर्शनं शुभो भवति।

ज्योति—ब्राह्मण, घोड़ा, हाथी, फल, अन्न दुग्ध, गो, स्वच्छवस्त्र वाद्य, क़ोरपक्षी, कमल, वेश्या, चाषन = वाजनपक्षी, न्योला, रस्सी से बँधावृषम,

मांस, शुभ वाक्य, फूल, ईख, सजलकश, क्षत्र, मृतिका, कन्या, रत्न, पगडी, सफेद बैल, मद्य, पुत्रसहितस्त्री, प्रजवलित अग्नि. दर्पण, अज्जन, स्वेतवस्त्र के साथ धोबी, मछली, घी सिंहासन, रोदन रहित शव, ध्वजा, मधु, वछड़ा; अस्त्र गोरोचन, भरद्वाजपक्षी, पालकी, वेदध्वनि, मंगलगीत, अङ्कुश, पीछे से आता हुआ रिक्त घट यात्रा काल में शुभ माना जाता है।

यात्रायां अशुभशकुनविचारः—

वन्ध्याचर्म तुषास्त सर्प लवणाङ्गारेन्धन क्लीवविट
तैलोन्मत्तवसौषधारिजटिल प्राव्रट्तृषा व्याधितः।
नग्नाभ्यक्तविमुक्तकेशपतितं व्यंगक्षुधार्ताअस्रक्
स्त्रीपुष्पं सरटः स्वगेहदहनं मार्जानयुद्धं क्षुतम् ॥ ३२७ ॥

काषायी गुणतक्रपङ्गुविधवाकुब्जाकुटुम्बे कलि·
र्वस्माद्देः स्खलनं लुलायसमुरं कृष्णानि धान्यानि च
कर्पासं वमनं च गर्दभखो दक्षेतिरुट् गर्भिणी
मुण्डार्द्राम्बर दुर्वचोऽन्धवधिरोदवयानदृष्ठा शुभाः ॥३३८॥

कुन्तला—वन्ध्या; चर्मः, तुषः = (भूषाइति) अस्थिः, सर्पः, लवणः, अङ्गारः, इन्धनः क्लीवः, विट् = विष्टा, तैलः, उन्मत्तः, तवसः = (चर्वी) औषधः, अरिः, जटाधारीयोगी, सन्यासी, तृणः, रोगाकान्तः, नग्नपुरुषः, परित्यक्त वालकः, तैलमर्दनकृतः पुरुषः, त्रिमुक्तकेशः, पतितब्राह्मणः अङ्गहीनः, मानवः, स्त्रीपुष्पं = स्त्रीऋतुः, सरटः = गिरगिट इति लोके प्रसिद्धः, स्वगृहदहनम्, मार्जार यूद्धः, क्षुतम् = छींक इति लोके प्रसिद्धम्, कौषेयवस्त्रधारीमनुष्यः, गुणः, तक्र, पंगु, विधवा, कुब्जः, कुटुम्बकलहः, वस्त्रस्खनं, महिषयुद्धः, कृष्णधान्यः, कर्पासः, वमनं, गर्दभखः दक्षे = दक्षिणभागेगर्दभशब्दः, क्रोधाधिम्यं, गर्भिणी, मुण्डशिरः, आर्द्रवस्त्रं अशुभवाणी, अन्धः, वधिरः, रजस्वलास्त्री, एतेषां दर्शनं न शुभः।

ज्योति—बांझ स्त्री, चमड़ा, भूषा, हड्डी, सर्प, नमक, अङ्गार, इन्धन, हिजड़ी स्त्री, विष्ठा, तैल पागल मनुष्य, चर्वी, औषध, शत्रु, जटाधारी, योगी, सन्यासी, तृण, रोगी, नग्नपुरुष, वालक को छोड़कर, तैल लगाया

हुआ पुरुष, खुलाकेश, पतित ब्राह्मण, अंगहीन, स्त्री का रज, गिरगिट, अपने घर का जलना, विलार का युद्ध, छोंकना, कौषेयवस्त्रधारी, गुण, मट्ठा, पङ्क; विधवा, कुटुम्व कलह, वस्त्र का खिसकना, भैंसों का युद्ध, काला धान, कपास, गर्दभस्वर, वमन, क्रोधाधिक्य, गर्भिणी, मुण्डशिर गिलावस्त्र, अशुभवाणी, अन्ध, वधिर, रजस्वलास्त्री, इनका दर्शन यात्रा काल में शुभ नहीं होता।

अकाल वृष्टिः—

त्र्यहं पौषे द्व्यहं माघे दिनमेकन्तु फाल्गुने।
चैत्रे घटीद्वयं दोषो नायं गर्भसमुद्भवे ॥ ३३९ ॥

कुन्तला—पौषादि चतुर्षु मासेषु वृष्टि अकालवृष्टिः कथ्यते। एवमेव पौषमासे दिनत्रयम्, माघमासे दिनद्वयम्, फाल्गुने चैकदिनम्, चैत्रे च घटीद्वयं यावत् अकालवृष्टिदोषो भवति। आषाढादि चतुर्षु मासेषु दोषो न भवतीति वोध्यम्। अतः अकालवृष्टौ यात्रा न कार्या।

ज्योति—पौषादि ४ मासों में यदि वृष्टि हो तो आकाल वृष्टि कही जाती है। वह पौष में तीनदिन, माघ में दो दिन, फाल्गुन में एक दिन, और चैत्र में दो घटी तक अकाल वृष्टि का दोष होता है। यह आषाढ़ादि ४ मासों में दोष नहीं होता। इस प्रकार अकाल वृष्टि में यात्रा नहीं करनी चाहिए।

यात्रायां त्याज्यवस्तुनि—

भुक्त्वा गच्छति यदि चेत्तैलगुडक्षार पक्वमांसानि।
निवर्त्तते स रुग्णः स्त्रीद्विजमवमान्य गच्छतो मृत्युः ॥ ३४० ॥

कुन्तला—यात्राकाले यदि तैलं, गुड, लवणं, पक्वमांसमुक्त्वा यात्रां करोति तदा स रुग्णो भवति। एवमेव स्त्रीं, द्विजं च यः अवज्ञां कृत्वा यात्राकरोति तदा तस्य मृत्युर्भवतीति वोध्यम्।

ज्योति—यात्रा समय में यदि तेल, गुण नमक और पकामांस भोजन करके यात्री जाय तो वह रोगी हो कर लौटता है। और स्त्री तथा ब्राह्मण की अवज्ञा कर यात्रा करता है तो वह जिन्दा 'नहीं लौटता।

यात्राविधिः—

हुत्वा पावकमभ्यर्च्य देवद्विजदिगीश्वरान् ।
कृतस्वस्त्ययनो विप्रैर्दत्त्वा दानं नरेश्वरः ॥ ३४१ ॥

कुन्तला—यात्रायां नृपं हवनादिकं कृत्वा अग्निं ब्राह्मणं देवं च सम्पूज्य यात्रा कार्या । अथनन्तरं स्वस्तिवाचनं कृत्वा ब्राह्मणेभ्यो दानं सम्प्रददे । पुनः दिक्स्वामिनं च ध्येयम् । एवमेव प्रसन्नमनसा यात्रा कार्या ।

ज्योति—यात्रा के समय राजा को चाहिए कि अग्नि में हवन करके ब्राह्मण तथा देवताओं का पूजन करे । फिर स्वस्त्ययन करके ब्राह्मणों को दान दे और जिस दिशा की जाना हो उस दिशा के स्वामी का ध्यान करता हुआ प्रसन्न मन से यात्रा करे ।

प्रस्थानविधिः—

विलम्बः स्वगमे राज्ञः कार्याद्यैर्यदि चेत्स्वयम् ।
छत्र चामर शस्त्रादि गम्याशां प्रति प्रेषयेत् ॥

चालयेयुश्च विप्राद्या उपवीतमथायुधम् ।
क्षौद्रं धात्री फलं चापि प्रस्थाने चात्मनः प्रियम् ॥ ३४२ ॥

कुन्तला—विशेष परिस्थितिवशात् शुभमुहूर्त्ते यदि यात्रा न कर्त्तुं शक्येत तदा नृपः छत्रः चामरः, शस्त्रादि, गम्यदिशि प्रेषयेत् । एवं ब्राह्मणः यज्ञोपवीतः, क्षत्रियः आयुधः वैश्यः मिष्ठान्नम् शूद्रश्च धात्रीफलं अथवा आत्मनः प्रियवस्तुनि च प्रस्थाने प्रेषयेत् ।

ज्योति—यदि यात्री कार्यवश मुहुर्त्त में यात्रा न कर सके तो निम्नलिखित वस्तुओं को प्रस्तान में रखे । जैसे राजा छत्र, चामर, शस्त्र, आदि चीजे यात्रा की दिशा में भेज दे । ब्राह्मण जनेऊ क्षत्रिय आयुध, वैश्य मिष्ठान्न, शूद्र आमला के फल अथवा जो वस्तु प्रिय हो वही प्रस्थान में आगे (पहले) भेज दें ।

प्रस्थानदिनानि—

प्राच्यामहानि मुनयः प्रवदन्ति सप्त
याम्यामतीव शुभदानि दिनानि पञ्च।
त्रीण्येव पश्चिम दिशि क्षितिनायकानां
प्रस्थानकेषु दिवसद्वयमुत्तरे स्यात् ॥ ३४३ ॥

कुन्तला—पूर्वदिशि सप्तदिनानि प्रस्थाने शुभानि सन्ति। एवं दक्षिणे पञ्चदिनानि, पश्चिमे त्रिणि दिनानि, तथा चोत्तरे दिनद्वयं शुभं भवति।

ज्योति—पूर्व दिशा में प्रस्थान करने से सात दिन शुभ है। दक्षिण दिशा में पांच दिन, पश्चिम दिशा में तीन दिन, और उत्तर दिशा में केवल दो दिन शुभ माना गया है। अन्यत्र भी कहा गया है—

सप्ताहन्येव पूर्वस्यां प्रस्थाने पञ्चदक्षिणे
पश्चिमे त्रिणि दिनानि दिनद्वयं चोत्तरे।
गेहाद्गेहान्तरं गर्गः सीमान्तरं भृगुः
शरक्षेपात् भरद्वाजो वशिष्ठो नगराद् वहिः॥

प्रस्थानदिनसंख्या चक्र—

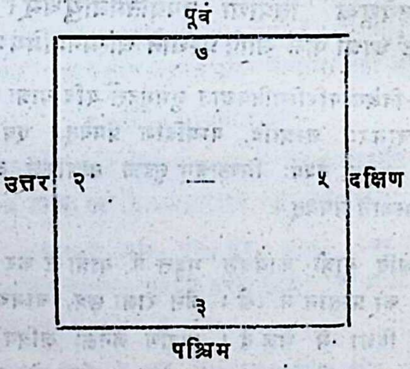

कुन्तला—सुगमः

ज्योति—गर्ग ऋषि के मत से गृह को छोड़कर दूसरे के घर में प्रस्थान

रखें। शुक्राचार्य के मत मे ग्राम के हद्द से बाहर प्रस्थान रखना चाहिए। भरद्वाज के मत से वाण फेकने से जितनी दूर वाण जाय, उतने ही दूर पर प्रस्थन रखना चाहिए।

चन्द्रकालानलचक्रम्—

चन्द्रकालानलं चक्रं व्योमाकारं च लिखेद् वुधः।
चतुर्दिक्षु त्रिशूलानि मध्यभिन्नानि कारयेत् ॥ ३४४ ॥
मध्ये त्रिशूले पूर्वस्य दिनऋक्षादि लिख्यते।
त्रिशूले च वहिर्मध्ये वहिस्त्रिशूलके तथा ॥ ३४५ ॥
नामऋक्षं स्थितं यत्र ज्ञेयं तत्र शुभाऽशुभम्।
त्रिशूलं चक्रवाह्य च चक्रमध्ये तथैव च ॥ ३४६ ॥
त्रिशूले च भवेत्मृत्युर्मध्मं वहिरष्टकम्।
लाभः क्षेमो जयः प्रज्ञा चन्द्रगर्भेन संशयः ॥ ३४७ ॥
वर्जनीयः प्रयत्नेन प्रथमाष्टत्रिपञ्चकम्।
ऋक्षं द्वाविंशकं चात्र कालरूपं न संशयः ॥ ३४८ ॥
लाभालाभं सुखं दुःखं जयं चैव प्रजायते।
चन्द्रकालानलं चक्रं ज्ञानसंशयवर्जितम् ॥ ३४९ ॥
रोगे च कुजनक्षत्राद्दिनऋक्षाच्च युद्ध के।
गमने कृतिकाक्षीद्वै सूर्यर्क्षादिन्यतो वुधः ॥ ३५० ॥

कुन्तला—सुगमः

ज्योति—निम्नलिखित क्रम के अनुसार चन्द्रकालानल चक्र को लिखकर जो त्रिशूल पूर्व में है, उसके मध्य में दिन नक्षत्र लिखें। फिर क्रम से जन्म नक्षत्र लिखे। यदि त्रिशूल पर जन्म नक्षत्र आ जावे तो मृत्यु होती है। वाहरों जो आठ भाग है, उसमें जन्म नक्षत्र हो तो मध्यम होता है। मध्य में हो तो लाभ क्षेम, जय तथा वृद्धि होती है। दिन नक्षत्र से जन्म नक्षत्र तक प्रथम, आठवाँ, पन्द्रहवाँ, तथा वाइसवाँ होवे तो वर्जित है। लाभ, हानि, सुख दुख तथा जय चन्द्रकालानल चक्र के अनुसार होते हैं। इस

चन्द्रकालानल चक्र को रोग में मंगल के नक्षत्र से और युद्ध में दिन नक्षत्र से क्षौर गमन (यात्रा) में कृत्तिका नक्षत्र से तथा अन्य कार्यों में सूर्य नक्षत्र से विचार करना चाहिए ।

नोट—कृत्तिका से नाम नक्षत्र तक गणना करने पर सदा एक ही नक्षत्र आयेगा । क्योंकि नाम नक्षत्र एक ही सदैव रहेगा । परन्तु इसमें नाम नक्षत्र से गणना न करके दिन नक्षत्र से करना चाहिए ।

चन्द्रकालानलचक्र—

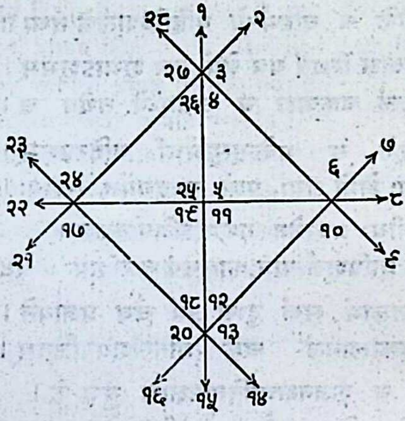

२८
१
२
२७
३
२६
४
२३
७
२४
६
२५
५
२२
८
१९
११
१७
१०
२१
९
१८
१२
२०
१३
१६
१५
१४

सूर्यकालानलचक्रम्—

ऊर्ध्वगास्त्रित्रिशूलाग्रास्त्रिस्त्रस्तिर्यक्सु संस्थिताः ।
द्वे द्वे न्यूब्जे स्थिते कोणे शृङ्गयुग्मे तथैव च ॥ ३५१ ॥

मध्ये त्रिशूल दण्डाधो भानुभाद्यभमण्डलम् ।
सव्यमार्गेण दातव्यमष्टाविंशतिसंख्यया ॥ ३५२ ॥

नामऋक्षं स्थितं यत्र ज्ञेयं तत्र शुभाशुभम् ।
अधोगतस्त्रिनक्षत्रैरुद्वेगो वध-बन्धनम् ॥ ३५३ ॥

ऋक्षाष्टके जयो लाभ ऋक्षाष्टके यथा पुनः ।
श्रृङ्गयुग्मं रुजाभंगो मृत्युः शूलत्रये स्फुटम् ॥ ३५४ ॥
यात्रायुद्धे विवादेषु रोगे तु व्यसने तथा ।
सूर्यं कालानलं चक्रं ज्ञातव्यं तु प्रयत्नतः ॥ ३५५ ॥

कुन्तला—सुगमः

ज्योति—मध्यत्रिशूल के नीचे सूर्य नक्षत्र से सीधे क्रम से नक्षत्र मण्डल रखना चाहिए । जहाँ नाम नक्षत्र पड़े वहाँ ही उसका शुभाशुभ फल समझना चाहिए । यात्रा में, युद्ध में विवाद में, रोग में और व्यसन में सूर्यकालानलचक्र को भलिभाँति विचार करना चाहिए ।

सूर्यकालानल चक्र—

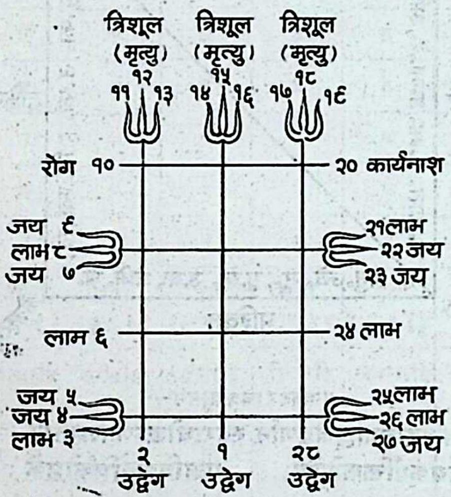
त्रिशूल (मृत्यु)
त्रिशूल (मृत्यु)
त्रिशूल (मृत्यु)
१२
११
१३
१५
१४
१६
१८
१७
१९
रोग १०
२० कार्यनाश
जय ९
लाभ ८
जय ७
२१ लाभ
२२ जय
२३ जय
लाभ ६
२४ लाभ
जय ५
जय ४
लाभ ३
२५ लाभ
२६ लाभ
२७ जय
२ उद्वेग
१ उद्वेग
२८ उद्वेग

परिघदण्डज्ञानम्—

पूर्वादिषु चतुर्दिक्षु सप्तसप्तानलक्षितः ।
वायव्याग्नेयदिक्संस्थं परिघं नैव लंघयेत् ॥ ३५६ ॥

कुन्तला—कृत्तिकादि सप्त-सप्त नक्षत्राणां पूर्वादिषु स्थाप्य वायव्यतः अग्निदिशापर्यन्तं परिघदण्डो भवतीति । यात्रायां परिघं नैव लघयेत् ।

ज्योति—कृत्तिकादि सात-सात नक्षत्रों को पूर्वादि दिशाओं में रखकर वायव्य दिशा से अग्नि दिशा तक परिघदण्ड कहलाता है। यह यात्रा में लांघना वर्जित है ।

परिघदण्डचक्र—

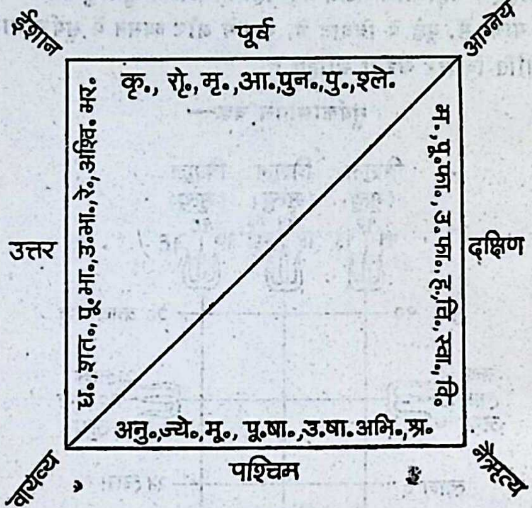
ईशान
पूर्व
आग्नेय
कृ., रो., मृ., आ.,पुन.,पु.,श्ले.
ध.,शत.,पू.भा.,उ.भा.,रे.,अश्वि. भर.
उत्तर
म.,पू.फा.,उ.फा.,ह.,चि.,स्वा.,वि.
दक्षिण
अनु.,ज्ये.,मू., पू.षा.,उ.षा.अभि.,श्र.
वायव्य
पश्चिम
नैऋत्य

पञ्चस्वराचक्रज्ञानम्—

कादिहान्ताल्लिखेद्वर्णान् स्वराधोङञणोज्झितान् ।
तिर्यक्पंक्तिक्रमेणैव पञ्चत्रिंशत्त्रिकोष्ठके ॥ ३५७ ॥
नराणामादितो वर्णो यस्मात्स्वरादधः स्थितः ।
स स्वरस्तस्य वर्णस्य वर्णस्वर इहोच्यते ॥ ३५८ ॥
नभस्ये मार्गवैशाखे अस्वरस्योदयो भवेत् ।
आश्विने श्रावणाषाढे इकारो नायकः स्मृतः ॥ ३५९ ॥

उकारश्चैत्रपौषे स्यादेकारो ज्येष्ठकार्तिके।
ओकार उदयं याति माघफाल्गुनभासयोः॥ ३६०॥
किंचिल्लाभकरो बालः कुमारस्त्वर्द्धलाभदः।
सर्वसिद्धि युवादत्ते वृद्धिर्हानिर्मृतर्मृतिः॥ ३६१॥

'कुलन्तला' एवं 'ज्योति' टीका अधोलिखित चक्रेण स्पष्टम्।

पञ्चस्वराचक्र—

बाल	कुमार	युवा	वृद्ध	मृत	स्वर
अ	इ	उ	ए	ओ	वर्णं
क	ख	ग	घ	च	
छ	ज	झ	ट	ठ	
ड	ढ	त	थ	द	
ध	न	प	फ	ब	
म	म	य	र	ल	
व	श	ष	स	ह	
नन्दा १.६–११	भद्रा २–७ १२	जया ३, ८, १३	रिक्ता ४,९,१४	पूर्णा ५,१०,१५	तिथि
रेवत्यादि ७	अश्विन्या. ५	अर्यमादि ५	मित्रादि ५	श्रवणादि ५	नक्षत्र
सू. मं	बु. च.	वृ.	शु.	श.	वार
मे.सि.वृ.	क. मि.क.	ध. मी.	तु. वृष	म. कु.	लग्न
मार्ग. वै. भाद्रपद	आषा.श्रा. आश्विन	चैत्र, पौ.	ज्येष्ठ कार्तिक	माघ फाल्गुन	मास

दुर्गचक्रम्—

दुर्गाकारं लिखेच्चक्रमष्टकोणसमन्वितम् ।
ईशाने ग्रामनक्षत्रं दत्वा चाभिजिता सह ॥ ३६२ ॥
चतुष्कं च चतुष्कं च कोणेषु सकलेषु च ।
मध्ये-मध्ये संग्रहं च दद्यादिवं त्रयं त्रयम् ॥ ३६३ ॥

कुन्तला—अष्टकोणयुक्तः एकः दुर्गचक्रं निर्माय ईशाने च अभिजित सहितं ग्रामनक्षत्रं लिखेत् । चत्वारि-चत्वारि नक्षत्राणि च सर्वेषु कोणेषु तथा च त्रिणि नक्षत्राणि मध्ये लिखेत् । एवमेव दुर्गचक्रं भविष्यति ।

ज्योति—अष्टकोण का दुर्ग बनावे, और ईशान कोण से अभिजित् सहित ग्राम का नक्षत्र लिखें । चार-चार नक्षत्र सभी कोणों में तथा तीन नक्षत्र मध्य में लिखें । इस प्रकार दुर्ग चक्र बन जायेगा ।

॥ दुर्गचक्रम् ॥

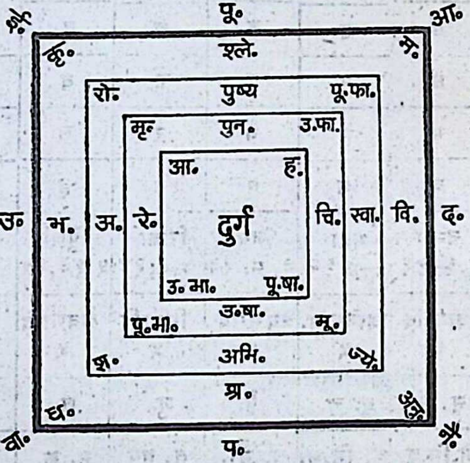
ई०
पू०
आ०
कृ०
श्ले०
म०
रो०
पुष्य
पू.फा.
मृ०
पुन०
उ.फा.
आ०
ह.
उ०
भ०
अ०
रे०
दुर्ग
चि०
स्वा०
वि०
द०
उ० भा०
पू.षा.
उ०षा०
पू०भा०
मू०
श०
अभि०
ज्ये०
श्र०
ध०
अनु०
वा०
प०
नै०

कोटपालविधिः—

शुक्रः सौम्यो गुरुर्मन्दोराहुश्च भानुजः सितः ।
वुधेन्दुभास्कराः सौरिः सौम्यश्चेत्यधिपामताः ॥ ३६४ ॥

कुन्तला—शुक्रः, सौम्यः, गुरुः, मन्दः, राहुः, भानुजः = शनिः, सितः = शुक्रः, बुधः, इन्दुः, भास्करः, सौरि = शनिः, सौम्यः = बुधः क्रमेण, अधिपाः स्मृताः = द्वादशराशीनां अधिपाः भवन्ति ।

ज्योति—मेष का, स्वामी शुक्र, वृष का बुध, मिथुन का वृहस्पति, कर्क का शनि, सिंह का राहु, कन्या का शनि, तुला का शुक्र वृश्चिक का बुध, धन का चन्द्रमा, मकर का सूर्य, कुम्भ का शनि और मीन राशि का स्वामी बुध ये कोटाधिप होते हैं ।

रविर्भौमः सितः सौम्य गुरुः सौरि शशी तमः ।
वर्गेशाष्ट कवर्गादी कोटपालाः प्रकीर्तिताः ॥ ३६५ ॥

कुन्तला—सुगमः

ज्योति—सू, मं, शु, बु, वृ, शु, चं, रा, ये आठोंग्रह अवर्गादि वर्गों के स्वामी अर्थात् कोटपाल होते हैं। जैसे अवर्ग का स्वामी सूर्य, क वर्ग का स्वामी मंगल; चवर्ग का स्वामी वृहस्पति प वर्ग का स्वामी शनैश्चर, थ वर्ग का स्वामी चन्द्रमा और श वर्ग का स्वामी राहु होता है ।

दुर्गचक्रफलम्—

कोटाधिपः कोट मध्ये कोटपालो वहि स्थितः ।
तदा कोटभयं नास्ति विपरीतास्तु हानिदाः ॥ ३६६ ॥

कुन्तला—सुगमः

ज्योति—यदि कोटाधिप कोट के मध्य में और कोटपाल वाहर हो तो कोटभय नहीं होता, और विपरीत अर्थात् कोट का स्वामी वाहर और कोटपाल भीतर हो तो विपरीत फल अर्थात् कोट का नाश होता है ।

अन्यच्च—

वाह्ये शत्रु प्रवेशर्क्षे संग्रामं यदिकारयेत् ।
तदा सिध्यति तद्दुर्गं नान्यथा रुद्रभाषितम् ॥ ३६७ ॥

कुन्तला—सुगमः

ज्योति—यदि शत्रु प्रवेश का नक्षत्र कोट के वाहर स्थित हो और उसी

समय राजा संग्राम करे तो वह रंग्राम उसको गुर्ग सिद्धि देता है । यह रुद्र का कथन अन्यथा नहीं हो सकता ।

अन्यच्च—

पुरमे निर्गमे वक्रा कथञ्चित् क्रूरखेचरा ।
दुर्गं त्यक्त्वा तदा काले दुर्गस्थः पलायते ॥ ३६८ ॥
क्रूरेषु स्तम्भसंस्थेषु वक्रितेषु पलायते ।
विहाय दुर्गेशः संन्देहो नात्र कारयेत् ॥ ३६९ ॥
दुर्गनाम्नः स्वरोयर्हि वालो वास्तु मृतोपि वा ।
तद्दिने प्रार मेद्युद्धं दुर्गः सिध्यति नान्यथा ॥ ३७० ॥

कुन्तला—सुगमः

ज्योति—गुर्ग नक्षत्र पर और पुर के निकलने के समय नक्षत्र पर पापग्रह वक्री हो कर स्थित हो तो दुर्ग स्थान वाला मनुष्य दुर्ग को त्याग कर भाग जाता है ।।

यदि पापग्रह वकी होकर स्तम्भ में स्थित हो तो गुर्ग को त्याग कर दुर्गपति भाग जाता है इसमें कुछ भी संशय नहीं है ।

जिस दुर्ग के नाम का स्वर वाल व अस्त हो तो उस दिन युद्ध प्रारम्भ करे तो दुर्ग सिद्ध होता है । अन्यथा नहीं सिद्ध हो पाता ।

अन्यच्च—

क्रूरागर्भे पुरं हन्ति प्रकारे खण्डकारकाः ।
वहिस्था वेष्ठके सैन्यै मंगदा नात्र संशयः ॥ ३७१ ॥
क्रूरा गर्भे शुभा वाह्ये निश्चितं गृह्येत पुरम् ।
सौम्ये मध्ये वहिः क्रूरा आसाध्यं दुर्गमुच्येत ॥ ३७२ ॥

कुन्तला—क्रूराः मध्ये स्युः तदा पुरस्य नाशम्, प्रकारे खण्डखण्डानि, वहिस्था वेष्टके च सैन्यनाशोभवति । क्रूरग्रहाः गर्भे; शुभाः वहिस्तदा शत्रुः दुर्गं जयति, एवं च यदि शुभग्रहाः गर्भे, पापाः बहिस्तदा दुर्गं जयं असाध्यं भवति इति फलं वाच्यम् ।

ज्योति—क्रूर ग्रह मध्य में हो तो पुर का नाश, प्रकार में हो तो टुकड़े-टुकड़ें करा दे, वाहर या कोट के घेरे में हो वो सेना का नाश करता है। यदि क्रूर ग्रह भीतर और शुभग्रह वाहर हो तो शत्रु किले को जीत लेता है और शुभग्रह भीतर हों और पापग्रह वाहर हो तो दुर्ग को जीतना कठिन होता है।

क्षेत्रपालचक्रविचारः—

लिखेत्पूर्वतो वामतश्चैत्रमुख्यां चतुर्दिक्षु सव्येन यामनथाष्टौ ।
दिगष्टभ्रमन्मासतः सव्यतश्च स्वपृष्ठेऽथदक्षे शुभः क्षेत्रपालः ।।३७३।।

कुन्तला—पूर्वदिशि प्रारभ्य चतुर्षु दिक्षु वामरीत्या चैत्रादिमासान्लिखेत्। एवं च सव्यरीत्या अष्टो दिशि अष्टयामान् = अष्टप्रहरान् च लिखेत्। दिगष्टभ्रमन् क्षेत्रापलः पृष्ठे दक्षिणे च शुभो भवति।

ज्योति—पूर्व दिशा से लेकर चारों दिशाओं को वामरीति से चैत्रादिक मासों को लिखें। और सव्य रीति से आठ दिशाओं में आठ प्रहर लिखें। मास के हिसाव से आठों दिशाओं में आठ प्रहर क्रम से क्षेत्रपाल भ्रमण करता है। अपने पीछे और दक्षिण में क्षेत्रपाल शुभ होता हैं।

क्षेत्रपालचक्र—

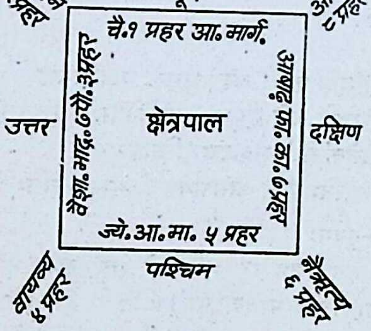
ईशान २ प्रहर
पूर्व
अग्नि ८ प्रहर
चै.१ प्रहर आ० मार्ग.
वैशा० भाद्र० पौ० ३ प्रहर
उत्तर
क्षेत्रपाल
आषाढ़ फा० का० ७ प्रहर
दक्षिण
ज्ये.आ.मा. ५ प्रहर
पश्चिम
वायव्य ४ प्रहर
नैऋत्य ६ प्रहर

सर्पाकारचक्र—

आर्द्रादिकं लिखेच्चक्रं मृगान्तं त्रिनाडिकम् ।
भुजंगसदृशाकारं मध्ये मूलं चतुष्टितम् ॥ ३७४ ॥
रवीन्दु नाम नक्षत्रमेकनाड्यां यदा भवेत् ।
तदा मृत्युर्न संदेहो रोगाद्वाऽपि रणेपि वा ॥ ३७५ ॥

कुन्तला—आर्द्रा नक्षत्रतः समारभ्य मृगशीर्षनक्षत्रं यावत् सर्पाकारं चक्रं लिखेत् । अस्य मध्ये मूलनक्षत्रं च लिखेत् । यदि सूर्यः, चन्द्रः, नामनक्षत्रं च एकस्मिन्नेनव नाड्यां भवेत् तदा युद्धात् रोगात् वा मृत्युः ज्ञेयम् ।

ज्योति—आर्द्रा नक्षत्र से लेकर सर्पाकार मृगशिरा नक्षत्र तक सर्पाकार चक्र लिखें । मूल नक्षत्र को मध्य में लिखें । यदि सूर्य, चन्द्र और नाम एक ही नाड़ी में हों तो युद्ध अथवा रोग से मृत्यु समझना चाहिए ।

सर्पाकारचक्र—

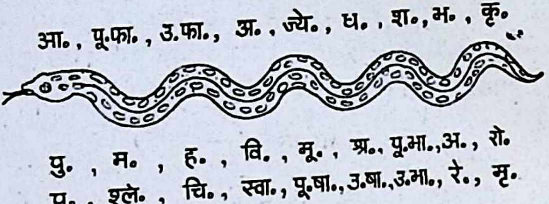
आ॰, पू.फा॰, उ.फा॰, अ॰, ज्ये॰, ध॰, श॰, भ॰, कृ॰
पु॰, म॰, ह॰, वि॰, मू॰, श्र॰, पू.भा॰, अ॰, रो॰
पु॰, श्ले॰, चि॰, स्वा॰, पू.षा॰, उ.षा॰, उ.भा॰, रे॰, मृ॰

शनिचक्रविचारः—

मुखे दक्षे पाणौ चरणयुगले वक्षसिगले
शिरोभागे नेत्रे गुह्य च गुदके नाम शनिभात् ।
लिखेदेकं वेदैरसशरचतुस्त्रिद्वियुगलं
रणे हानिः पूजा भ्रमधनमयं भूसुखभृतिः ॥ ३७६ ॥

कुन्तला—सुगमः

ज्योति—जिस नक्षत्र पर शनि हो उस नक्षत्र से नाम नक्षत्र पर्यन्त एक मनुष्य के आकार के मस्तक, नेत्र आदि पर इस क्रम से उन नक्षत्रों को रखें जैसा कि निम्नलिखित मनुष्य के अंगों पर रखे गये हैं ।

नराकारशनिचक्र—

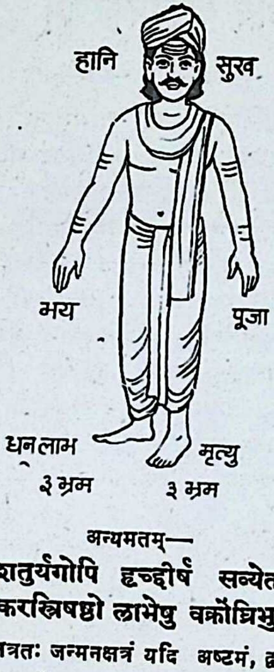

अन्यमतम्—

जन्माष्टकं द्वादशतुर्यगोपि हृच्छीर्ष सव्येतरबाहुनेत्रे ।
तदा सुखं विघ्न करस्त्रिषष्ठो लाभेषु वक्रौंघ्रिभुजगुदस्थे ॥ ३७७ ॥

कुन्तला—शनिक्षत्रतः जन्मनक्षत्रं यदि अष्टमं, द्वादशं, चतुर्थं च क्रमेण हृदि, शिरसि, दक्षिणे हस्ते तथा दक्षिणनेत्रे च भवेत् तदा सुखकारको भवति । यदि तृतीयं, षष्ठं तथा एकादशं नक्षत्रं मुखे, पादे; वामहस्ते तथा गुदे च भवेत् तदा विघ्नं ज्ञेयम् ।

ज्योति—शनि के नक्षत्र से जन्मनक्षत्र आठवाँ, वारहवाँ, तथा चौथा नक्षत्र यदि हृदय, शिर दक्षिण हस्त तथा नेत्र इन अंगों में पड़ जाय तो सुख कारक होता हे । एवं यदि तृतीय, षष्ठ तथा ग्यारहवाँ नक्षत्र मुख, वामहस्त तथा गुदा इन अङ्गों में पड़े तो विघ्न समझना चाहिए ।

* * *

अथ वास्तुप्रकरणम्

शुभाशुभग्रामविचार—

यद्भं द्व्यंकसुतेशादिङ्मितमसौ ग्रामः शुभो नामभात्
स्व वंर्गं द्विगुणं विधाय विधाय परवर्गाढ्यं गजैः शोषितम् ।
ककिण्यस्त्वनयोश्च तद्विवरतो यस्याधिका
सोऽर्थदोऽथद्वारं द्विजवैश्यशूद्रनृपराशीनां स्मृतं पूर्वतः ॥ ३७८ ॥

कुन्तला—प्रसिद्धनामराशितः ग्रामस्य राशिः यदि द्वितीयं, पञ्चमं, एकादशं दशमं वा भवेत्तदा ग्रामः शुभो भवति । तथा च स्ववर्गं द्विगुणीकृत्य ग्राम्यसंख्यायोज्य अष्टभि-भक्तेसते यच्छेषमुपलम्यते सैव पुरुषस्प काकिणी भवति । एवमेव ग्रामस्य वर्गसंख्यां द्विगुणीकृत्य नामादिवर्गसंख्यासंयोज्य अष्टमिः भक्ते यच्छेष ग्रामकाकियी भवति । पुरुषग्रामयोर्मध्ये यस्य काकिणीरधिका भवति सैव धनदाता भवति ।

द्विजवैश्यशूद्रनृपराशीनां द्वारं क्रमेण, पूर्वतः अर्थात् पूर्वंदक्षिण, पश्चिम एवं चोत्तरे ज्ञेयमिति ।

ज्योति—प्रसिद्ध नामराशि से ग्राम की राशि यदि द्वितीय, नवम, पञ्चम, एकादश अथवा दशम हो तो ग्राम अपने लिए शुभ है । अपना वर्ग जितनी संख्या पर हो उसे दूना कर ग्रामादि की वर्ग संख्या में जोड़कर आठ का भाग दें, जो शेष बचे पुरुष की काकिणी होती है । इसी प्रकार ग्रामादि की वर्ग संख्या को दूना कर नामादि की वर्ग संख्या जोड़कर आठ का भाग दे, जो शेष रहे वह ग्राम की काकिणी होती है । पुरुष और ग्राम की काकिणी के मध्य में जिसकी काकिणी अधिक हो वही दूसरे के लिए धनदायक होता है । ब्राह्मण, वैश्य, शूद्र एवं क्षत्रिय वर्ण की राशियों के लिए क्रमशः पूर्व, दक्षिण, पश्चिम और उत्तर तरफ द्वार रहना चाहिए यहाँ उदाहरण से स्पष्ट किया जाता है—

करुणापति को परमानन्द पुर में बसने का विचार करना हैं । कमलपति मिथुन राशि और परमानन्दपुर कन्या राशि है । पुरुष की राशि (मिथुन)

सेग्राम की राशि (कन्या) चौथी होने के कारण उनके लिए ग्राम शुभ नहीं हुआ ।

अब काकिणी विचार कीजिए—

कमलापति वर्ग मार्जार उसकी संख्या २ है और परमानन्द पुर का वर्ग मूषक उसकी संख्या ६ है । मूल श्लोक के अनुसार पुरुष के वर्ग को दूना किया तो ४ हुआ । उसमें ग्राम वर्ग ६ जोडकर १० में आठ का भाग देने से शेष २ पुरुष की काकिण हुई । ग्राम के वर्ग ६ को दूना कर १२ उसमें पुरुष वर्ग २ जोड़कर १४ में ८ का भाग देने से शेष ६ ग्राम की काकिणी हुई । यहाँ पुरुष की काक्रिण ग्राम की काकिणी अधिक है । अतः ग्राम ही धनी होगा । पुरुष ऋणी वनेगा । इसलिए उसे उस ग्राम में बसना ठीक नहीं है । इसी भांति हर एक की स्थिति में विचारना चाहिए ।

विशेष—काकिणी के विचार में "यस्याधिकाः सोऽर्थदः" इस वाक्य में मतान्र भी पाया जाता है । वहुत से टीकाकार इसका अर्थ जिसकी काकिणी अधिक हो वह ऋणी होता है, ऐसः लिखे हैं । स्वयं ग्रन्थ कर्त्ता भी अपनी टीका में ऐसा ही लिखे हैं, परन्तु यह युक्ति सिद्ध और मुनिमतानुकूल नहीं है अतः ग्राम की काकिणी अधिक होनी चाहिए । इसकी पुष्टि में—

स्ववर्गं द्विगुणं कृत्वा परवर्गेण योजयेत् ।
अष्टमिस्तु हरेद्भागं योऽधिकः स ऋणी भवेत् ॥

इसके अलावे गृह विचार प्रकार नाम की राशि से ही करना चाहिए ।

ग्रामवासे निषिद्धस्थानानि—

गोसिंहनक्रमिथुनं निवसेन्नमध्ये
ग्रामस्य पूर्वककुभोलिझषांगनाश्च ।
कर्कौ धनुस्तुलभमेषघटाश्च तद्व-
द्वर्गाः स्वपञ्चमपरा वलिनः स्युरैन्द्रया ॥ ३७९ ॥

कुन्तला—ग्रामस्य मध्ये वृषः, सिंहः, मकरः न निवसेत् । एव वृश्चिकः पूर्वे, मीनः अग्निकोणे, कन्या दक्षिणे, कर्कः नैर्ऋत्ये, धनुः पश्चिमे, तुला

वायव्ये, मेषः, उत्तरे, कुम्भश्च ऐशान्ये न निवसेदिति । तद्वत् स्वपञ्चमपराः अष्टौ-वर्गाः ऐन्द्रयाः (=पूर्वतः क्रमात् बलिनः स्युः)

राशितः निषिद्ध ग्रामवासादिक्

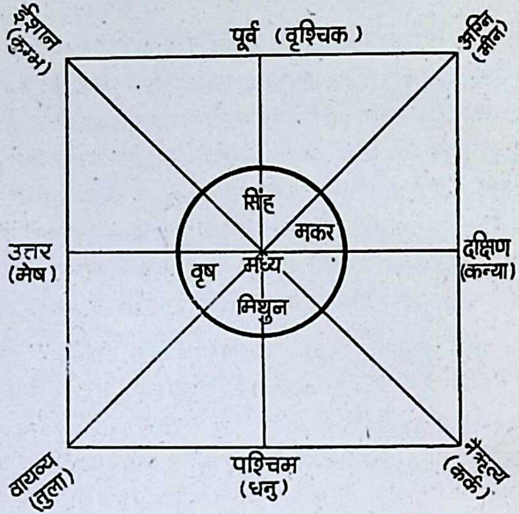
ईशान (कुम्भ)
पूर्व (वृश्चिक)
आग्नि (मीन)
सिंह
मकर
उत्तर (मेष)
वृष
मध्य
मिथुन
दक्षिण (कन्या)
वायव्य (तुला)
पश्चिम (धनु)
नैऋत्य (कर्क)

अवर्गादिग्रामवासचक्रम्—

अवर्ग	कवर्ग	चवर्ग	खवर्ग	तवर्ग	पवर्ग	यवर्ग	शवर्ग	षर्ग
पूर्व	आग्नेय	दक्षिण	नैऋत्य	पश्चिम	वायव्य	उत्तर	ईशान	बलीदिशा
पश्चिम	वायव्थ	उत्तर	पश्चिम	पूर्व	आग्नेय	दक्षिण	नैऋत्य	शत्रुदिशा

पिण्डसाधनं दैर्घ्यविस्तृतिज्ञानञ्च—

एकोनितेष्टर्क्षहताद्द्वितिथ्यो रूपोनितेष्टायहतेन्दुनागैः ।
युक्ताघनैश्चापि युता विभक्ताभूपाश्विभिः शेषमितौ हि पिण्ड ॥३८०॥
स्वेष्टायनक्षत्रभवोऽथ दैर्घ्यंहृत्स्याद्विस्तृति विंस्तृति हृच्च दीर्घता ।
आयध्वजो धूमहरिश्वगोखरेभध्वांक्षकाः पिण्ड इहाष्टशेषिते ॥३८१॥

कुन्तला—द्वितिथ्यः एकोनितेष्टर्क्षहताः, रूपोनितेष्टाय हतेन्दुनागैः युताः, धर्मैरपि युताः भूपाश्विभिः विभक्ता तदा शेषमितः हि स्वेष्टयनक्षत्र-भवः वास्तुभूभेः, पिण्डः (क्षेत्रफलम्) स्यात् ।

अथ स पिण्डः दैर्घ्यहृत् फलं विस्तृतिः स्यात्, विस्तृति हृत् तदा फलं दीर्घता स्यात् । तथा च इह पिण्डे अष्टशेषिते क्रमात् ध्वजः, धूमः, हरिः श्व, गो, खरेभ ध्वांक्षकाः एते अष्टौ आयाः स्युः ।

ज्योति—रहनेवाले पुरुष को चाहिए कि जिस नक्षत्र के साथ गणना अच्छी बनती हो उस नक्षत्र को गृह निर्माण में इष्टर्क्ष की कल्पना करें। उस इष्टर्क्ष की संख्यः में १ घटाकर शेष १५२ को गुणा करें और इष्ट आय की संख्या में १ घटाकर शेष से ८१ को गुणाकर गुणनफल को पूर्व के फल में जोड़े। फिर उसमें १७ जोड़कर २१६ से भाग दें। भाग देने से जो शेष हो वही इष्ट आय और इष्ट नक्षत्र से उपलब्ध उस वास्तु भूमि का पिण्ड क्षेत्रफल होता है। उस पिण्ड को अभीष्ट लम्बाई से भाग देने पर चौड़ाई और चौड़ाई से भाग देने पर लम्बाई होती है। उस पिण्ड में ८ से भाग देने पर एक आदि शेष में क्रम से १ ध्वज २ धूम, ३ सिंह, ४ श्वान, ५ वृष, ६ खर, ७ गज और ८ ध्वांक्ष ये आय होते हैं।

उदाहरण—

कमलपति (मृगशिरा नक्षत्र) का आर्द्रा नक्षत्र के साथ विवाह की गणना के अनुसार ३४ गुण मिलते हैं, इसलिए इष्ट नक्षत्र आर्द्रा ६ और इष्ट विषम आय सिंह ३ कल्पना करके पिण्ड बनाते हैं।

इष्ट नक्षत्र ६ में १ घटाने से ५ बचा। इसमें १५२ को गुणा किया तो ७६० हुआ। इष्ट आय ३ में से एक घटाकर शेष २ से ८१ को गुणाकर १६२ को ७६० में जोड़ दिया तो ९२२ हुआ। फिर इसमें १७ जोड़ने से ९३९ हुआ, इसमें २१६ से भाग देने पर शेष ७५ यहीं इष्ट नक्षत्र और इष्ट आय से उत्पन्न वास्तु भूमि कापिण्ड (क्षेत्रफल) हुआ। इसी तरह दूसरे इष्टर्क्ष और इष्ट आयों से अनेक प्रकार के पिण्ड बनेंगे। अब इस पिण्ड ७५ में दैर्घ्य १० रखना चाहे तो १० से भाग देने पर विस्तर ७½ होगा। यदि

दैर्घ्यं १५ रखे तो ७५ में १५ से भाग देने पर विस्तार ५ होगा। यों ही विस्तार की कल्पना करके उससे भाग देकर दैर्घ्यं निकलता है।

उक्त रीति से आए हुए पिण्ड में कर्त्ता अभीष्ट गृह की सिद्धि न हो अर्थात् वह उससे बड़ा घर बनाना चाहता है तो लब्ध पिण्ड में एक आदि गुणित २१६ जोड़कर पिण्ड बनावें। जैसे ७५ पिण्ड में २१६ जोड़ने से २९१, अथवा ४३२ जोड़ने से ५०७ या ६४८ जोड़ने से ७२३ इत्यादि पिण्ड बनेंगे।

क्षेत्रफलसाधनम्—

पिण्डं नवाष्टाग्निगजाष्टसंख्यैः क्रमेण गुण्यः खलु पञ्चधा च।
विभाजितेऽष्टार्कगजर्क्षखार्कैरायोधनर्णर्क्षगृहायुक्तम् ॥ ३८२ ॥

कुन्तला—पञ्चमस्थानेषु स्थापितं पिण्डं क्रमेण ९, ८, ३, ८, ८ संख्यै संगुण्य एवं क्रमेण ८, १२, ८, २७, १२० अङ्कैश्च भाजितम्। भाजिते सति एकादिशेषानुसारेण आयः, धनं; ऋणं, नक्षत्रं, आयुश्च समायाति।

ज्योति—कल्पितक्षेत्रफल को ५ जगह रखें। पहली जगह ९ से, दूसरी जगह ८ से, तीसरी जगह ३ से, चौथी जगह ८ से और पांचवीं जगह ८ से गुणाकर क्रमशः ८, १२, ८, २७, १२० से भाग देने पर आय, धन, ऋण, नक्षत्र और गृह की आयु संख्या शेष बचती है।

अष्टौ आयनामानि—

ध्वजो धूम्रोऽथसिंहोऽश्वसौरभेयः खरो गजः।
ध्वांक्षश्चेति क्रमेणैवमायाषट्कमुदाहृतम् ॥ ३८३ ॥

कुन्तला—सुगमः

ज्योति—ध्वज, धूम्र, सिंह, अश्व, वृष, खर, गज और ध्वांक्ष (काक) ये ८ आय माने गये हैं।

ध्वजादिकाः सर्वदिशि ध्वजे मुखं कार्यं हरौ पूर्वयमोत्तरे तथा।
प्राच्यां वृषे प्राग्यमयोर्गजेऽथवा पश्चादुदक्पूयमे द्विजादितः ॥३८४॥

कुन्तला—ध्वज आयश्चेत् तदा सर्वदिशि, सिंहाये पूर्वस्याम्, दक्षिणे

तथा चोत्तरे गृहद्वारं कार्यम् । वृषाये पूर्वदिशि गजाये पूर्वे दक्षिणे च, गृहद्वारं कार्यमिति । एवमेव ब्राह्मणस्य गृहद्वारं पश्चिमे, क्षत्रियस्य उत्तरे, वैश्यस्य पूर्वस्याम्, तथा शूद्रस्य दक्षिणाभिमुखं द्वारं शुभं ज्ञेयम् ।

ज्योति—यदि ध्वज आय आवे तो गृह में सब दिशाओं के द्वार बनाने चाहिए । सिंह आय में पूर्वदक्षिण, और उत्तर दिशा के द्वार बनावे । वृष आय आने पर पूर्व का द्वार तथा गज आय हो तो पूर्व और दक्षिण का द्वार बनावे । अथवा ब्राह्मण को पश्चिम, क्षत्रिय को उत्तर, वैश्य को पूर्व और शूद्र को दक्षिण दिशा में द्वार बनाना चाहिए ।

अंशानयनविधिः—

भनागतष्टं व्ययईरितोऽसौ ध्रुवादिनामक्षर युक्सपिण्डः ।
तुष्टो गुणैरिन्द्र कृतान्तभूपाह्यंशाभयेयुर्न शुभाऽन्तकोऽत्र ॥३८५॥

कुन्तला – भं = इष्टनक्षम्, नागनष्टं = अष्टभिः भक्तम् । असो व्यय ध्रुवादिमामक्षरयुक् सपिण्डः, गुणैः = त्रिभिः, तष्टः तदा शेषक्रमाद् इन्द्र कृतान्तभूपाः अंशाः भवेयुः । अत्र (गृहारम्भे) अन्तकः 'अंशः' न शुभः ।

ज्योति—गृह के कल्पित नक्षत्र की संख्या ८ से भाग देने पर शेष व्यय होता है । उसमें अर्थात् व्यय में गृह के ध्रुवादि नामक्षर जोड़कर फिर गृह का पिण्ड जोड़कर इसे भाग देने से यदि १ शेष हो तो इन्द्र, २ शेष हो तो कृतान्त (यम) और ३ शेष हो तो भूपनाम का अंश होता है । यहाँ गृहारम्भ में अन्तक (यम) अंश अशुभ होता है । और शेष इन्द्र तथा भूप अंश शुभ होते हैं । जैसे—इष्ट नक्षत्र आर्द्रा की संख्या ६ में ८ का भाग देने से शेष ६ बचा, अतः ६ व्यय हुआ । अब अंश साधन करते हैं । कर्त्ता को पूर्व-दक्षिण और पश्चिम मुखवाला घर बनाना हो तो आगे के ८ और ९ वें श्लोक के अनुसार गृह का ध्रुवादि ८ वाँ नाम ३ अक्षरवाला 'सुमुख' हुआ । इसलिए पूर्व साधित व्यय ६ में सुमुख के ३ अक्षर जोड़े गये तो ९ हुए । उसमें पूर्व का पिण्ड ७५ जोड़ने से ८४ हुए । फिर इसमें तीन का भाग देने से शेष में भूप अंश हुआ जो शुभ है ।

शालाध्रुवांकाः—

दिक्षु पूर्वादितः शाला ध्रुवा भूद्वौ कृता गजाः ।
शालाध्रुवांकसंयोगः सैंका वेश्म ध्रुवादिकम् ॥३८६॥

कुन्तला—पूर्वादिद्वारस्य भवने शालाध्रुवांकः एकः, दक्षिणदिशि, द्वौ पश्चिमदिशि, चत्वारः उत्तरदिशि च अष्टध्रुवाङ्का भवन्ति । अथ शालाध्रुवाङ्कसंयोगः संकः तदा तत्तुल्यं ध्रुवादिकं वेश्म स्यात् ।

ज्योति—घर के पूर्व के द्वार १, दक्षिण में २, पश्चिम में ४ और उत्तर में ८ शाला ध्रुवा (गृहों के ध्रुवाङ्क) हैं । जिस तरफ का द्वार बनाना हो, उसके यथा सम्भव ध्रुवाङ्कों का योग करके उसमें १ जोड़कर जो संख्या हो वही ध्रुव आदि नाम के घर होते हैं ।

जैसे किसी को अपने घर के पूर्व और उत्तर में द्वार वनाना हो तो श्लोक के अनुसार १ और ८ शालाध्रुवाङ्को के योग ९ में १ जोड़ने से १० संख्या हुई । अतः आगे के श्लोक से उसगृह का नाम 'क्रूर' होगा ।

ध्रुवादि गृहनामानि—

ध्रुवं च धान्यं च जयं नन्दः खरं च कान्तं च मनोरमं च ।
सुवक्त्रसंज्ञं खलु दुर्मुखाख्यं क्रूरं विपक्षं धनदं क्षयञ्च ।
आक्रन्दसंज्ञं विपुलाह्वयं च, स्यात्षोऽशैतद्विजयाभिधानम् ॥३८७॥

कुन्तला—(१) ध्रुवं (२) धान्यं (३) जयं (४) नन्दः (५) खरः (६) क्रान्तं (७) मनोरमं, (८) सुवक्त्रं (९) दुर्मुखं, (१०) क्रूरं, (११) विपक्षं, (१२) धनदं (१३) क्षरं (१४) आक्रन्दः (१५) विफलं (१६) विजयश्चेति षोऽश गृहनामानि सन्ति ।

ज्योति—(१) ध्रुव (२) धान्य (३) जय (४) नन्द (५) खर (६) कान्त (७) मनोरमा (८) सुमुख (९) दुर्मुख (१०) क्रूर (११) विपक्ष (१२) धनद (१३) नाश (क्षय) (१४) आक्रन्द (१५) विपुल (१६) विजय ये १६ धकार के गृहों के नाम हैं ।

विशेष—जिस गृह का जैसा नाम है । उसका फल भी वैसा ही समझना

चाहिए। इससे यह अर्थ निकलता है कि खर, दुर्मुख, उग्र, विपक्ष (रिपुद), नाश और आक्रन्द नाम के घर अच्छे नहीं होते।

गृहनिर्माणे नक्षत्राणि—

ध्रुवहरिभृदुपुष्यः स्वातिहस्तानुराधा-
ऽदितिवरुणधनिष्ठामूलभे सौम्यवारे।
उपचय गृहसंस्थे पापगे केन्द्रकोणे
बुध गुरुभृगुपुत्रे वेश्म कार्यं प्रशस्तम् ॥ ३८८ ॥

कुन्तला—उत्तरात्रयः, रोहिणीः, श्रवणः, मृगशीर्षः, रेवती, चित्रा, पुष्यः, स्वाती, हस्तः अनुराधा, पुनर्वसु, शतभिषा, धनिष्ठा मूलम् च नक्षत्रेषु पापग्रहाणां तृतीये, दशमे, षष्ठे, एकादशे स्थिते सति तथा बुधः, गुरुः, शुक्र ग्रहाणां, केन्द्रकोणे = १, ४, ७, १०, ९, ५ भावेषु विद्यमाने गृहं कार्यं शुभं भवति।

ज्योति—तीनों उत्तरा, रोहिणी, श्रवण, मृगशीर्ष, रेवती चित्रा, पुष्य, स्वाती, हस्त, अनुराधा, पुनर्वसु, शतभिषा, धनिष्ठा, और मूल इन नक्षत्रों में और शुभवारों में, पापग्रहों के तृतीय, दशम, षष्ठ, एकादश इन भावों में स्थिर रहने पर और बुध बृहस्पति, शुक्र इनके केन्द्र कोण (१, ४, ७, १०, ९, ५) भावों में स्थित रहने पर गृह कार्य शुभ होता है।

अन्यच्च—

तिथावरिक्ते शुभदे निशाकरे योगे लग्नगते स्थिरे भे।
द्व्यंगे च कर्त्तुः शुभदे विलग्ने पापग्रहे मृत्युविवर्जिते गृहे ॥३८९॥

कुन्तला—रिक्तावरिक्ते = रिक्ता (४, ९, १४) तिथिरहिते, शुभे चन्द्रे, शुभयोगे, शुभाफलप्रदायकस्थिर संज्ञक (२, ५, ८, ११) तथा च द्व्यंगे = ३, ६,९,१२ लग्नेषु अष्टमभाववर्जित पापास्युस्तदागृहकार्यं शुभं भवतीति बोध्यम्।

ज्योति—रिक्ता (४, ९, १२) तिथियों में और शुभदायक चन्द्रमा और शुभयोग में, शुभ दायक स्थिरसंज्ञक (२, ५, ८, ११) तथा द्व्यंग लग्नों में और अष्टम भाव वर्जित पापग्रहों के होने पर गृहकार्य करना शुभदायक होता है।

वैशाखे श्रावणे मार्गे फाल्गुने च विशेषतः।
पत्नीपुत्रार्थलाभः स्याद् गृहकर्त्तुर्न संशयः॥ ३९०॥

कुन्तला—वैशाखे, श्रावणे, मार्गशीर्षे फाल्गुने च मासे गृहनिर्माण—कार्यसम्पादनेन निश्चयेन गृहकर्त्तुः पुत्रकलत्रादि तथा धनस्य लाभं प्राप्नोति।

ज्योति—वैशाख, श्रावण, मार्गशीर्ष और फाल्गुन इन मासों में गृह बनवाने वाले को स्त्री, पुत्र और धन का निःसंदेह लाभ होता है।

कृष्णेपक्षेऽशुभं ज्ञेयं सर्वसिद्धदम्।
अष्टमी वास्तुकार्ये च निषिद्धापरिकीर्तिता॥ ३९१॥

कुन्तला—शुक्लपक्षे गृहारम्भो शुभो भवति। कृष्णपक्षे च अशुभं ज्ञेयम्। एवं अष्टमीतिथिः गृहकार्ये निषिद्धा भवति।

ज्योति—शुक्लपक्ष मे गृहारम्भ समस्त समृद्धि को देने वाला होता है। कृष्णपक्ष नेष्ट कहा गया है। गृह बनाने में अष्टमी तिथि निषिद्ध कही गई है।

सौरमासानुसारेण पूर्वादि दिक्द्वारविचारः—

कर्के नक्रहरि कुम्भगतेऽर्के पूर्वपश्चिममुखानि गृहाणि।
तौलिमेषवृश्चिकयाते दक्षिणोत्तरमुखानि च कुर्यात्॥ ३९२॥

कुन्तला—सुगमः

ज्योति—कर्क, मकर, सिंह, कुम्भ राशियों के सूर्य होने पर पूर्वपश्चिमें द्वारवाले घर बनाये जा सकते है। तुला, मेष, वृष, वृश्चिक इन राशियों के सूर्य होने पर दक्षिण और उत्तर द्वार वाले को घर बनाना चाहिए।

चन्द्रस्थितिवशात् गृहद्वारः—

पूर्वपश्चान्मुखं गेहं न लग्नान्त्यारिगे विधौ।
सौम्ये सौम्यमुखं गेहं कुर्यात्पातालखे गते॥ ३९३॥

कुन्तला—लग्नद्वादशषष्ठभावेषु विद्यम्मने चन्द्रे पूर्वाभिमुखं, पश्चिमाभिमुखं गृहं च शुभं न भवति। एवं चतुर्थे, दशमे विद्यमाने चद्रे उत्तराभिमुखं दक्षिणाभिमुखं च गृह शुभं भवति।

ज्योति—लग्न, द्वादश और षष्ठ इन भावों में चन्द्रमा के होने पर पूर्व, पश्चिम द्वार वाले गृह शुभ नहीं होते और चतुर्थ तथा दशम भावों में चन्द्रमा के होने पर उत्तर तथा दक्षिण द्वार वाला गृह शुभ होता है।

गृहारम्भे वास्तुचक्रम्—

सूर्यभाद्गणयेद् वास्तुचक्रं च दिनभावधि।
अश्वैरीशाम्बरः प्रोक्तमसत्फलदं वुधैः॥

कुन्तला—सूर्यनक्षत्राद् दिननक्षत्रावधि गणयेत्। यदि सूर्यनक्षत्रतः दिननक्षत्रस्य संख्यासप्तम्यान्तरे तदा अशुभम्। एकादशस्याम्यान्तरे तदा शुभम्। पुनः दशसंख्याम्यान्तरे तदा अशुभं ज्ञयेम्।

ज्योति—सूर्य के नक्षत्र से दिन नक्षत्र पर्यन्त गिनें। यदि सूर्य नक्षत्र से दिन नक्षत्र ७ संख्या के भीतर हो तो अशुभ फल होता है। फिर ११ के भीतर हो तो शुभ फल होता है। फिर १० के भीतर हो तो अशुभ फल होता है।

वृषवास्तुचक्र—

सूर्यर्क्ष से नक्षत्र	३	४	४	३	४	४	४	३
फल	दाह	शून्य	स्थिरता	श्रीः	लाभ	नाश	दरिद्रता	पीडा
फल	अशुभ ७		शुभ ११			अशुभ १०		

गृहे कूपनिर्माण फलम्—

कूपेवास्तोर्मध्यदेशे अर्थह्वानिस्त्वैशान्यादौ पुष्टिरैश्वर्ग वृद्धिः।
सूनोर्नाशः स्त्रीविनाशो मृतिश्च सम्पत्पीडाशत्रुतः स्याच्च सौख्यम्॥२९५॥

कुन्तला—वास्तोः मध्य देशे कूपस्तदा अर्थहानिः, ऐशान्यां पुष्टिः; पूर्वस्यां ऐश्वर्यवृद्धिः, आग्नेयां पुत्रनाशः, दक्षिणे, स्त्रीनाशः, नैर्ऋत्येमरणं पश्चिमे सम्पत्पीडा, वायव्ये शत्रुपीडा, उत्तरे च सौख्यं वोध्यम्।

ज्योति—गृह के मध्यभाग में कूप होने से स्वामी की अर्थ हानि होती है। इस प्रकार सभी दिशाओं का फल निम्नलिखित चक्र से मालूम हो जायगा।

दिशा	ईशान	पूर्व	अग्नि	दक्षिण	नैऋत्य	पश्चिम	वायव्य	उत्तर
फल	पुष्टि	ऐश्वर वृद्धि	पुत्र नाश	स्त्री नाश	मरण	सम्पत्	शत्रु पीडा	सौख्य

यदि कूप या कोई अन्य जलाशय पहले से बना हो तो उस जलाशय के प्रतिकूल (वायव्य, उत्तर, ईशान, आग्नेय) भाग में गृह नहीं बनाना चाहिए।

॥ कूपचक्रम् ॥

ब्रह्मादि गणयेत्तावद्यावत्तिष्ठति चन्द्रमाः।
पूर्वादिसृष्टिमार्गेण त्रिणि त्रीणि प्रदापयेत् ॥ ३९६ ॥

मध्ये शीघ्रजलं स्वादुः पूर्वे भूमिरखण्डिता।
आग्नेय्यां सज्जलं प्रोक्तं याम्ये निर्जला स्मृता ॥ ३९७ ॥

नैऋत्ये चाऽमृतं वारि पश्चिमे सजलं स्मृतम्।
वायव्यां च जलं हन्ति चोत्तरेऽप्यमृतं जलम् ॥ ३९८ ॥

ईशान्ये कटुकक्षारं कूपचक्रविनिर्णयः।
मार्गशीर्षे तथा माघे वैशाखे फाल्गुने तथा ॥ ३९९ ॥

एतेमासाः शुभाः प्रोक्ताः कूपारम्भे मनीषिभिः।
तृतीयापञ्चमी चैव सप्तमी दशमी तथा।
अष्टम्येकादशी चैव कूपारम्भे शुभा मता ॥ ४०० ॥

कुन्तला—सुगमः

ज्योति—रोहिणी नक्षत्र से प्रारम्भ कर चन्द्रमा के नक्षत्र (दिननक्षत्र) तक गिन कर मध्य में तीन नक्षत्र और पूर्वादि दिशाओं में तीननक्षत्र स्थापना

करना चाहिए। इसके अलावे निम्नलिखित चक्र से सम्पूर्ण विषय स्पष्ट है—

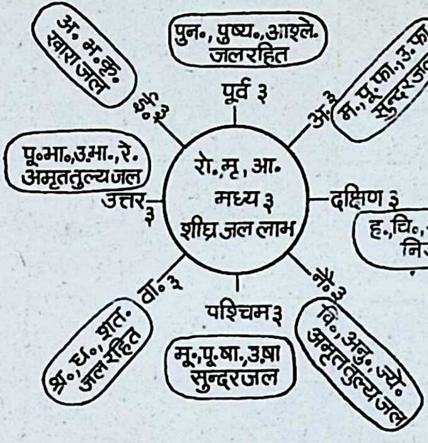
पुन०, पुष्य०, आश्ले.
जलरहित
पूर्व ३
अ० भ० कृ०
खारा जल
ई० ३
म०, पू० फा०, उ० फा०
सुन्दर जल
अ० ३
पू० भा०, उ० भा०, रे०
अमृततुल्य जल
उत्तर ३
रो०, मृ०, आ०
मध्य ३
शीघ्र जल लाभ
दक्षिण ३
ह०, चि०, स्वा०,
निर्जल
वा० ३
श्र०, ध०, शत०
जलरहित
पश्चिम ३
मू०, पू० षा०, उ० षा
सुन्दरजल
नै० ३
वि०, अनु०, ज्ये०
अमृततुल्य जल

गृहारम्भे राहुमुखविचारः—

देवालये गेह विधौ जलाशये राहोर्मुखं शम्भुदिशो विलोमतः।
मीनार्कसिंहार्कमृगार्कतस्त्रिभे खाते मुखात्पृष्ठ विदिक् शुभा भवेत् ॥

कुन्तला—देवालये, गेहविधौ, जलाशये क्रमेण मीनार्क-सिंहार्क-मृगार्कतः त्रिभे-त्रिभे शम्भुदिशः विलोमतः राहोः मुखं स्यात्। खाते मुखात् पृष्ठविदिक् शुभा भवेत्।

ज्योति—देवालय (मठमन्दिर) के आरम्भ में मीन से तीन-तीन राशि में, गृहरम्भ में सिंह से तीन-तीन राशि में और जलाशय (तलाब आदि) के आरम्भ में मकर से तीन-तीन राशि क्रम से ईशान कोण से विपरीत दिशाओं (ईशान, वायु, नैर्ऋत्य, आग्नेय) में राहु का मुख होता है और उसके विरुद्ध भाग में उसकी पीठ होती है। खात में (नीव डालने में) मुख से पीठ की दिशा शुभ होती है। अर्थात् यदि ईशान मुख हो तो आग्नेय कोण में, नींव डालें। वायव्य में राहु मुख हो तो ईशान में, नैऋत्य में मुख हो तो वायव्य में और आग्नेय में मुख हो तो नैऋत्य में नींव डालनी चाहिए।

स्पष्टार्थं चक्र देखें।

आरम्भ में	मुखपृष्ठभेद	ईशान में	वायव्य में	नैऋत्य में	आग्नेय में
देवालय में	राहुमुख राशयः	१८।१।२ के सूर्य में	३।४।५ के सूर्य में	६।७।८ के सूर्य में	९।१०।११ के सूर्य में
	नींव की दिशा	आग्नेय	ईशान	वायव्य	नैऋत्य
गृहारम्भ में	राहुमुख राशयः	५।६।७ के सूर्य में	८।९।१० के सूर्य में	११।१२।१ के सूर्य में	२।३।४ के सूर्य में
	नींव की दिशा	आ.	ई.	वा.	नै.
जलाशय में	राहुमुख राशयः	१०।११।१२ के सूर्य में	१।२।३ के सूर्य में	४।५।६ के सूर्य में	७।८।९ के सूर्य में
	नींव की दिशा	आ.	ई.	वा.	नै.

प्लवविचारः—

पूर्वप्लवो वृद्धि करो धनदश्चोत्तरे प्लवः।
याम्यां रोगप्रदो ज्ञेयो धनहा पश्चिमे प्लवः ॥ ४०२ ॥

कुन्तला—पूर्वदिशिप्लवश्चेत् वृद्धिकरः, उत्तरे धनदायकः, दक्षिणे रोगकरः, पश्चिमे धनहानिर्भवति।

ज्योति—यदि भूमि पूर्व दिशा में ढालुओं हो तो वृद्धि कारक, उत्तर दिशा में प्लव हो तो धनदायक, दक्षिण दिशा में प्लव हो तो रोगदायक और पश्चिम में प्लव हो तो धन नाश होता है।

द्वारनिर्णयः—

नवभागं गृहं कृत्वा पञ्चभागं तु दक्षिणे।
त्रिभागमुत्तरे कार्यं शेषं द्वारं प्रकीर्त्तितम् ॥ ४०३ ॥

कुन्तला—गृहस्य नवभागं विधाय पञ्चभागं दक्षिण, त्रिभागं उत्तरे शेष द्वारमिहोच्यते।

ज्योति—घर के नवभाग करके ५ भाग दक्षिण और तीन भाग उत्तर त्याग कर शेषभाग में द्वार करना चाहिए।

गृहप्रवेशमुहूर्त्तः—

अथ प्रवेशो नवसद्मनस्तु पुत्रार्थलाभः खलु फाल्गुने च।
चैत्रेऽर्थहानिर्धनधान्यलाभे वैशाखमासे सुखपुत्रलाभः।
ज्येष्ठे च माघे तु परेषुनूनं हानिप्रदः शत्रुभयप्रदश्च ॥४०४॥

कुन्तला—अथ फाल्गुने, नवसदने गृहप्रवेशो भवेत्तदा पुत्रार्थलाभो भवति। चैत्रे धनहानिः, वैशाखे धनधान्यलाभः, ज्येष्ठेमाघे च सुखपुत्रलाभश्च भवति। परेषु = अपरेषु मासेषु, नूनं = निश्चयेन, हानिप्रदः शत्रुभयञ्च बोध्यम्।

ज्योति—फाल्गुन मास में यदि नया गृहप्रवेश हो तो पुत्र तथा धन का लाभ होता है। चैत्र में धनहानि, वैशाख में धन धान्य का लाभ, ज्येष्ठ और माघ में सुख और पुत्र की प्राप्ति होती है। इस प्रकार अन्य महीनों में गृह प्रवेश हानिप्रद और शत्रुभय प्रदायक होता है।

जीर्णगृहप्रवेशमुहूर्त्तः—

जीर्णे गृहेऽग्न्यादिभयान्नवेपि मार्गोर्जयोः श्रावणकेऽपि सत्स्यात्।
वेशोऽम्बुपेज्यानिलवासवेषु नावश्यमस्तादिविचारणाऽत्र ॥४०५॥

कुन्तला—जीर्णगृहे तथा अग्न्यादिभयादअपि मार्गोर्जयोः तथा श्रावणिके अपि, अम्बुपेज्यानिलवासवेषु वेशः सन् स्यात्। अत्र अस्तादिविचारणा आवश्यं न भवति।

ज्योति—पुराने घर में (जो अधिक दिन का बना हो) तथा अग्नि के भय से, वृष्टिभय से, राजदण्ड के कारण या रोगादि के भय से नवीन घर में भी मार्गशीर्ष, कार्त्तिक और श्रावण मास में भी प्रवेश शुभ कहा गया है। उसमें शतभिषा, पुष्य स्वाती, धनिष्ठा-ये नक्षत्र भी प्रशस्त हैं। तथा ऐसी अवस्था में गुरु, शुक्र के अस्तादि का विचार करना भी आवश्यक नहीं है।

विशेष—जीर्ण गृह प्रवेश में अस्तादि काल की शुद्धि आवश्यक नहीं है।

परन्तु वास्तु पूजा आदि नवप्रवेश की तरह ही करनी चाहिए। ऐसा ही श्रीवसिष्ठ जो ने कहा भी है—

नवप्रवेशह्यथ कालशुद्धिर्नद्वन्द्वसी पूर्विकयोः कदाचिद् ।
प्रवेशपश्चाच्छ्रुदिने सुलग्ने वास्त्वर्चनं पूर्ववदेव कुर्यात् ॥

गृहप्रवेशनक्षाणित्र—

हस्तः पुष्यपुनर्वसु शतभिषा स्वाती तथा रेवती
रोहिण्युत्तराभं त्रयं हरिमृगो मूलं धनिष्ठा तथा ।
कन्या कुम्भ वृषालि सिंहमिथुनस्वर्क्षस्वराश्युद्भवा
वाराजीवशनिज्ञसोमभृगुजा वेश्मप्रवेशे शुभा ॥४०६॥

कुन्तला—हस्तः, पुष्यः, पुनर्वसु, शतभिषा, स्वाती, रेवती, रोहिणीः, उत्तरात्रयः, श्रवणः, मृगशीर्षः, मूलं, धनिष्ठा च एषु नक्षत्रेषु कन्या, कुम्भ, वृश्चिक, सिंह, मिथुन लग्नेषु तथा च जन्म राशिः अथवा जन्मलग्नोदये गृहप्रवेशो शुभः। एवं गुरुः, शनिः, बुधः, चन्द्रः, शुक्रश्च वाराः गृहप्रवेशे शुभाः सन्ति।

ज्योति—हस्त, पुष्य, पुनर्वसु, शतभिषा, स्वाती, रेवती, रोहिणी, तीनों उत्तरा श्रवण मृगशिरा, मूल, धनिष्ठा, इन नक्षत्रों में कन्या, कुम्भ, वृश्चिक, सिंह, मिथुन लग्नों में और जन्मराशि अथवा जन्मलग्न के उदय में गृह प्रवेश शुभ होता है। बृहस्पति शनैश्चर, बुध, सोम, और शुक्र वार गृह प्रवेश में शुभ होते है।

गृहप्रवेशे गुरुवचनम्—

नन्दा भद्रा जया चैव पूर्णा च तिथयः शुभाः ।
अमावस्या च रिक्ता च वर्जनीयाः प्रयत्नतः ॥ ४०७ ॥

कुन्तला—सुगमः

ज्योति—अमावस्या तथा रिक्तातिथि के अतिरिक्त नन्दा, भद्रा जया और पूर्णा तिथियाँ गृहप्रवेश में शुभ मानी गई हैं।

त्रिकोणकेन्द्रगैः शुभैरकण्टकाष्टमान्त्यगैः ।
असद्ग्रहैः स्थिरोदये गृहे विशेद् बले विधौ ॥ ४०८ ॥

कुन्तला—त्रिकोण = नवमपञ्चमे, केन्द्रगैः १, ४, १० स्थानेषु शुभग्रहाः विद्यमाने तथा च पापग्रहाः, कण्टक = केन्द्र (१, ४, ७, १०), अष्टम; द्वादश, स्थानातिरिक्तं अन्येषु स्थानेषु स्थिते सति स्थिर लग्ने चन्द्रस्य सबले गृहप्रवेशः शुभः ।

ज्योति—त्रिकोल (९, ५) केन्द्र (१, ४, ७, १०) इन स्थानों पर शुभग्रहों के रहने पर पापग्रहों के केन्द्र, अष्टम, द्वादश, इन स्थानों के सिवाय अन्य स्थानों में रहने पर और स्थिर लग्न में चन्द्रमा के वली होने पर गृहप्रवेश करना उत्तम है ।

गृहप्रवेशे कलशवास्तुचक्रम्—

वक्त्रे भूरविभात्प्रवेशसमये कुम्भेऽग्निदाहः कृता ।
प्राच्यामुद्वसनं कृतायमगता लाभः कृता पश्चिमे ॥
श्रीर्वेदाः कलिरुत्तरे युगमिता गर्भे विनाशो गुदे ।
रामः स्थैर्यमतः स्थिरत्वमनलाः कण्ठे भवेत्सर्वदा ॥ ४०९ ॥

कुन्तला—सुगमः

ज्योति—गृहप्रवेश के समय कलशाकार वास्तुचक्र निर्माण में सूर्य नक्षत्र से दिन नक्षत्र तक एक नक्षत्र मुख में रहता है । जिसमें अग्निदाह होगा । फिर चार नक्षत्र पूर्व दिशा में रहते हैं जिसका फल शून्य होता हैं । फिर चार नक्षत्र दक्षिण में जो कि गृहपति को लाभ प्रदान करते हैं । फिर ४ नक्षत्र पश्चिम में जिसमें गृहपति को श्री प्राप्ति होतो है । फिर ४ नक्षत्र उत्तर में जिसमें कलह होता है । फिर ४ नक्षत्र कलश के मध्य में होता है जो गर्भ का विनाश करता है । फिर तीन नक्षत्र गुदा में जिससे गृह पति की स्थिरता होती है । पुनः ३ नक्षत्र कण्ठ में होते हैं उसका भी फल गृहपति की स्थिरता करने वाला होता है ।

पाकगृह मुहूर्त्त—

पूर्वार्द्रारोहिणीपुष्ये उत्तरात्रितयेऽश्विने ।
स्थितिर्महानसस्येष्टा गेहोपकरणैः सह ॥ ४१० ॥

कुन्तला—पूर्वात्रये, रोहिणी, आर्द्रा, पुष्यः, उत्तरात्रयः, अश्विनी नक्षत्रेषु पाकगृहमुहूर्त्तो शुभः ।

ज्योति—तीनों पूर्वा, रोहिणी, आर्द्रा, पुष्य, तीनो उत्तरा, और अश्विनी इन नक्षत्रों में रसोई घर का मुहूर्त्त उत्तम कहा गया है ।

मार्जनीमुहूर्त्त—

गुणरामतर्का गुणतर्कतर्काः फलं दग्धधान्यं व्यथा सम्पदा च ।
अरिश्चार्थलाभो रविभाच्चज्ञेयं गृहे मार्जनीषु रवियामलानि ॥४११॥

कुन्तला—गृहे मार्जनीषु, रविभाच्च = सूर्यनक्षत्रात्, ज्ञेयं=बोध्यम् । यः गुण = त्रयः, राम = त्रयः, तर्का = षड् गुण = त्रयः, तर्क = षड्, पुनः, तर्क = षड नक्षत्राणि येषां फलं क्रमेण, दग्दः, धान्यः व्यथा, सम्पदा, शत्रु, अर्थ लाभश्च भवति । रवियामलोक्त इमानि नक्षत्राणि सन्ति ।

ज्योति—गृहविचार में मार्जनी मुहूर्त्त की आवश्यकता होती है । जो सूर्य नक्षत्र से, ३, ३, ६, ३, ६, ६ गणना कर जिसका फल, दग्ध, धान्य, व्यथा, सम्पदा, शत्रु और अर्थ लाभ होता है । यह गणना सूर्य नक्षत्र से करनी चाहिए । ये नक्षत्र रवि यामल में कही गई है ।

मार्जनीमुहूर्त्त—

३	३	६	३	६	६	नक्षत्राणि
दग्ध	धान्य	व्यथा	सम्पदा	शत्रु	अर्थलाभ	फल

चूल्हीचक्र—

सूर्यभाद्रसवेदाष्टरामशत्रुशुभाशुभम्
क्रमात्सूर्याभिधे चक्रे विज्ञेयं कोविदैः सदा ।
चुल्ही चक्रं क्रमाज्ज्ञेयं शुभाशुभ विचक्षणैः ॥ ४१२ ॥

कुन्तला—सुगमः

ज्योति—चुल्ही चक्र को सूर्यनक्षत्र से स्थापना करके निम्नलिखित चक्रानुसार फल समझें—

चूल्हीचक्र—

६	४	८	३	६	०	नक्षत्र
अशुभ	शुभ	अशुभ	शुभ	अशुभ	शुभ	फल

काष्ठस्थापनचक्रविचारः—

सूर्यभाद्रसतर्काब्धि नागवेदाभिजित्सदा ।
शुभाशुभं क्रमाज्ज्ञेयं काष्ठादिषु च संग्रहे ॥ ४१२ ॥

कुन्तला—सुगमः

ज्योति—यह चक्र सूर्य नक्षत्र से तीन दिन नक्षत्र तक गिनकर निम्नलिखित चक्रानुसार फल जानें।

काष्ठस्थापनचक्र—

६	६	४	८	४	नक्षत्र
शुभ	अशुभ	शुभ	अशुभ	शुभ	फल

* * *

अरिष्टप्रकरणम्

अरिष्टविचारः—

षष्ठाष्टमेऽपि चन्द्रः सद्यो मरणाय पापसंदृष्टः ।
अष्टाभिः शुभदृष्टो वर्षैः मिश्रैस्तदर्धेन ॥ ४१४ ॥

कुन्तला—षष्टष्टमेऽपि पापसंदृष्ट चन्द्रः सद्यो मरणाय भवति । शुभहष्टो अष्टमिः वर्षैः मृत्यु भवति । मिश्रैः = शुभग्रहा पापग्रहाश्च संदृष्टः तदा, तदर्धेन = चतुर्भिः वर्षैः मृत्युर्भवतीति वाच्यम् ।

ज्योति—छठे या अष्टम भाव में स्थित चन्द्र पापग्रहों से देखा जाता हो तो बालक की तत्काल मृत्यु होती है । यदि शुभग्रह देखते हो तो ८ वर्ष में मृत्यु को प्राप्त करता है । यदि शुभग्रह और पापग्रह दोनों देखते हों तो ४ वर्ष में बालक की मृत्यु हो जाती है ।

विशेष—यदि किसी भी ग्रह से न देखा जाता हो तो उक्तयोग नहीं होता है ।

सुतमदननवान्त्य लग्न रन्ध्रेष्वशुभयुतो भरणाय शीतरश्मिः ।
भृगुसुतशशिपुत्रदेव पूज्यैर्यदि बलभिर्न युतोऽवलोकितो वा ॥४१५॥

कुन्तला—शीतरश्मिः = चन्द्रः सुत = पञ्चमे, मदन = सप्तमे, नव = नवमे; अन्त्य = द्वादशे; रन्ध्रे = अष्टमे च एषु स्थानेषु विद्यमानत्वात्, अशुभयुती = पापग्रहयुक्तः सन् यदि बलिभिः = सबलाः भृगुसुतः = शुक्रः, शशिपुत्रः= बुधः, देवपूज्यैः = गुरुणा च युतो दृष्टो वा न भवेत् तदा मरणाय उत्पन्नो भवतीत्यर्थः ।

ज्योति—लग्न से पञ्चम, सप्तम; नवम, द्वादश, लग्न, तथा अष्टम स्थान में स्थित चन्द्रमा पापग्रहों से युक्त हो और बलवान् शुक्र, बुध, तथा बृहस्पति इनमें से किसी से न युक्त हो और न देखा जाता हो तो बालक मरने के लिए ही उत्पन्न होता है ।

एकोऽपि पापोऽष्टमगः शत्रुगृहे पापवीक्षितो वर्षात् ।
मारयति नरं जातं सुधारसो येन पीतोऽपि ॥ ४१६ ॥

कुन्तला—एकोऽपि पापग्रहः शत्रुराशौ अष्टमस्थो भवेत् तथा च पापग्रहावलोकितश्च स्यात् तदा सोमरसपीतोऽपि मृत्युर्भवति ।

ज्योति—यदि कोई अकेला पापग्रह भी शत्रु की राशि का होकर अष्टम भाव में स्थित हो और पापग्रह द्वारा देखा गया हो तो वर्ष के भीतर अमृतरस पीकर भी बालक मर जाता है ।

लग्नाधिपजन्मपती षष्ठाष्टमरिःफगो प्रशस्यकाले ।
अस्तमितौ मरणकरौ राशिप्रमिताब्दकैर्वापि ॥ ४१७ ॥

कुन्तला—जन्म लग्नाधिपतिः, जन्मराश्याधीशश्चअस्तः सन् षष्ठाष्टम; रिफगो = द्वादशे विद्यमाने स्वराशिसंख्यावर्षे च बालकस्य मृत्युर्भवति ।

ज्योति—जन्म लग्न का स्वामी अस्त होकर षष्ठ, अष्टम, तथा द्वादश में, स्थित हो तो अपनी राशि के समान वर्ष में बालक को मार डालता है ।

राहुर्भवेज्जन्मनि केन्द्रवर्ती क्रूरग्रहैश्चापि निरीक्षितश्चेत् ।
करोति वर्षैः दशभिः विनाशं वदन्ति वा षोडशभिश्च केचित् ॥४१८॥

कुन्तला—जन्मकाले केन्द्रे स्थिते राहुः क्रुरग्रहावलोकितो भवेत् तदा दशभिः वर्षैः तस्य बालकस्य विनाशो भवति । केचित् षोऽशभि; वर्षैरिति कथ्यते ।

ज्योति—यदि केवल राहु केन्द्र में स्थित हो और पापग्रहों से देखा जाता हो तो वह बालक दश वर्ष में या कुछ लोगों के मतानुसार सोलह वर्ष में मृत्यु को प्राप्त हो जाता है ।

अथ अरिष्टभङ्गयोगमाह—

पक्षे सिते भवति जन्म यदि क्षपायां
कृष्णे तथाऽहनि शुभाशुभदृश्यमानः ।
तं चन्द्रमा रिपु विनाश गतोऽपि यत्ना-
दापत्सु रक्षति पितेव शिशुं न हन्ति ॥ ४१९ ॥

कुन्तला—सिते = शुक्ले, पक्षे, क्षपायां = रात्रौ जन्मो भवेत् तथा च कृष्णे पक्षे अहनि = दिवायां बालकस्य उत्पत्तिर्भवति तदा षष्ठाष्टमस्थोऽपि चन्द्रः पापग्रहावलोकितः स्यात् तदापि पितेव आपत्सु शिशुं न हन्ति ।

ज्योति—शुक्लपक्ष की रात्रि में यदि बालक का जन्म हो अथवा कृष्णपक्ष के दिन में जन्म हो और चन्द्रमा को पापग्रह देखते हों तो षष्ठ तथा अष्टम स्थान में स्थित रहता हुआ भी चन्द्रमा आपत्ति से उस बालक की रक्षा करता है ।

एकोऽपि यदि केन्द्रस्थो भार्गवो ज्ञो गिरां पतिः ।
नवमे व सुतस्थाने सर्वारिष्टं निवारयेत् ॥ ४२० ॥

कुन्तला—शुक्रः बुध गुरु एषु एकोऽपि केन्द्रस्थ अर्थात् १, ४, ७, १० स्थानेषु अथवा ९, ५ स्थानेषु विद्यमाने सर्वारिष्टनिवारकः भवति ।

ज्योति—शुक्र, बुध तथा बृहस्पति इनमें से एक भी ग्रह यदि केन्द्र (१, ४, ७, १०) मे तथा नवम, पञ्चम भाव में स्थित हों तो सभी अरिष्टों को दूर कर देते हैं ।

लग्नाधिपो वा जीवो वा शुक्रो वा यदि केन्द्रगः ।
तस्य पुरुषस्य दीर्घायुः स भवेद्राजपूजितः ॥ ४२१ ॥

कुन्तला—लग्नाधीशः बृहस्पतिः शुक्रो वा केन्द्र विद्यमाने सः बालकः दीर्घायुः तथा च राजपूजितश्च भवति ।

ज्योति—लग्न का स्वामी बृहस्पति तथा शुक्र यदि केन्द्र में स्थित हों तो उस पुरुष की दीर्घायु होती है । और वह राजाओं से सम्मानित होते हैं ।

यदा वीक्षितो यामिनीशो दिनेशं बुधश्चापि शीतांशुमुद्वीक्षिते च ।
स जातो भवेदीश्वरो दीर्घजीवी ॥ ४२२ ॥

कुन्तला—यदा, यामिनीशो=चन्द्रः, दिनेशं=सूर्यं पश्यति तथा च बुधः, शीतांशुम्=चन्द्रं, उद्वीक्षिते=पश्यति तदा स ईश्वर=तुल्यः दीर्घजीवी भवति ।

ज्योति—चन्द्रमा सूर्य को देखता हो और बुध चन्द्रम को देखता हो तो वह जातक ईश्वर के तरह दीर्घजीवी होता है ।

अनफा, सुनफा, दुर्धरा, केमद्रुमयोगाः—

रविवर्ज्यद्विादशगैरनफा चन्द्रद्वितीयगैः सुनफा ।
उभयस्थितैर्दुरुधरा, केमद्रुमसंज्ञकस्त्वान्यैः ॥ ४२३ ॥

कुन्तला—चन्द्रात् रविवर्ज्यं = सूर्यं विहाय द्वादशे कोऽपि ग्रहः स्यात् तदा अनफा योगो भवति । द्वितीये भावे च सूर्यातिरिक्तः कोऽपि ग्रहः स्यात् सुनफा, तथा चन्द्रात् उभयतः द्वितीये द्वादशे च सूर्यरहितः ग्रहाः स्युः तदा दुरुधरा योगो भवति । एतद् भिन्नं चन्द्रात् द्वितीये द्वादशे वा कोऽपि ग्रहाः न स्युः तदा केमद्रुमनामक योगो भवति ।

ज्योति—चन्द्रमा से द्वादश भाव में सूर्य को छोड़कर कोई भी ग्रह हो तो अनफा, द्वितीय भाव में सूर्य रहित कोई ग्रह हो तो सुनफा; तथा चन्द्रमा से दोनों तरफ अर्थात् द्वितीय और द्वादश दोनों भावों में सूर्यरहित ग्रह हों तो दुर्धरा योग होता है । इससे भिन्न स्थिति में अर्थात् चन्द्र से द्वितीय और द्वादश में यदि कोई भी ग्रह न हो तो केमद्रुम नामक योग होता है ।

अनफादियोगानां फलम्—

सच्छीलं विषयसुखान्वितं प्रभु ख्यातियुक्तमनफायाम् ।
सुनफायां धीधनकीर्तियुक्तमात्मजितैश्वर्यम् ॥ ४२४ ॥
वहुभृत्यकुटुम्बारम्भचित्तमुद्विग्नमपि च दौर्धरिके ।
मृतकं दुःखितधनं जातं केमद्रुमे विद्यात् ॥ ४२५ ॥

कुन्तला—यस्य जन्म अनफायां भवति स शीलवान्, इन्द्रियसुखसम्पन्नः समर्थः, ख्यातिमानश्च भवति । एवं सुनफायामुत्पन्नः पुरुषः बुद्धिमान्, धनवान्, कीर्तिमान, तथा च स्वभुजवलेन अर्थोपार्जनकर्त्ता च भवति । दुर्धरायामुत्पन्न-जातकः वहुभृत्यवहुकुटुम्बयुक्तश्च उद्विग्नचित्तश्च भवति । केमद्रुमे उत्पन्नः भृत्यः, दुखितः, निर्धनश्च भवति ।

ज्योति—जिस बालक का जन्म अनफा योग में हुआ हो वह शीलवान्;

इन्द्रियसुखसम्पन्न, समर्थः, और कीर्तिमान होता है। सुनफा में जिसका जन्म हो वह बुद्धिमान धनवान्, कीर्तिमान तथा अपने भुजवल से ऐश्वर्य प्राप्त करने वाला होता है। यदि दुर्धरा योग में जन्म हो तो वह बहुत से नौकर और परिवार वाला, सदैव उद्विग्नचित्त रहता है। केमद्रुम में जन्म हो तो पराई सेवा करने वाला, दुखी, और दरिद्र होता है।

पुत्रोत्पत्तौ डिम्भाख्यचक्रफलम्—

डिम्भाख्य रविभाद्य भानां त्रयं न्यसेन्मूर्ध्नि मुखे त्रयं च।
द्वे स्कन्धयोर्द्वयं च पाणिद्वये वक्षसि पञ्चभानि।
नाभौ च लिंगे च तथैकमेकं जान्वोर्द्वयं पादयुगे भषटकम् ।।४२६।।
अल्पायुश्चरणस्थितैश्च गमनं देशान्तरे जानु-
मैर्गुह्यये स्यात्परदारलम्पुटर्नाभौ च सन्तुष्टये।
ऐश्वार्यं हृदि चौरकर्म करयोर्बाह्वोर्बलं स्कन्धयो-
र्द्रव्यं वक्त्रगतैरभीष्टमशनं राज्यं शिरस्थोडुभिः ।।४२७।।

कुन्तला—सुगमः

ज्योति—यह ब्रह्म कथित डिम्भाख्य चक्र सूर्य नक्षत्र से वर्णित है जिसका अर्थ निम्नलिखित चक्र से स्पष्ट है। यह चक्र सूर्य नक्षत्र से स्थापना करना चाहिए।

पुणजन्म में डिम्भाख्यचक्र—

शिर	मुख	दोनों कन्ध	दोनों बाहु	दोनों हाथ	हृदय	नाभि	लिङ्ग	जानु	दोनों पैर	स्थान
३	३	२	२	२	५	१	१	६	२	नक्षत्र संख्या
राज्य प्राप्ति	मिष्टान्न भोजन	द्रव्य लाभ	वल	चौर	ऐश्वर्यं	संतोष	व्यभिचार	विदेश गमन	अल्पायु	फल

कन्योत्पत्तौ डिम्भाख्यचक्रम्—

मस्तके त्रीणि ऋक्षाणि सप्तभानिमुखे न्यसेत् ।
स्तनद्वयेष्ट ऋक्षाणि हृदये त्रीणि भानि च ॥ ४२८ ॥

नाभौ त्रीणि तथा गुह्ये त्रीणि सूर्यर्क्षतो न्यसेत् ।
कन्या जन्मनि डिम्भाख्यं चक्रमुक्तं स्वयं भुवा ॥ ४२९ ॥

शीर्षे संताप युक्तं स्यान्मुखे धान्यधनान्विताः ।
स्तनद्वये स्वामी प्रेम वृद्धकामा तथा पुनः ॥ ४३० ॥

हृदि सौख्ययुतागुह्ये नारी स्याद् व्यभिचारिणी ।
असंतुष्ट स्वामिरता नाभौ स्याज्जन्मकालके ॥ ४३१ ॥

कुन्तला—सुगमः

ज्योति—यह ब्रह्म कथित कन्या जन्म डिम्भाख्यकक्र सूर्य नक्षत्र से स्थापना कर फलाफल निम्नलिखित चक्रानुसार समझना चाहिए ।

कन्याजन्म में डिम्भाख्यचक्र

मस्तक	मुख	स्तन	हृदय	नाभि	भग	स्थान
३	७	८	३	३	३	नत्र
सन्ताप	धन धान्य	स्वामी का प्रेम	सुख	निज पतिकी भक्ति	व्यभिचारिणी	फल

अष्टोत्तरीदशचक्रविचारः—

त्रिःचतुस्त्रिचतुश्चैव त्रिःचतुस्त्रिचतुःक्रमात् ।
रं चं मं बु श गु राशूनां कृत्तिकादिदशां लिखेत् ॥ ४३२ ॥

आदित्ये षट् च वर्षाणि सोमे पंचदशानि च ।
भौमेषु चाष्टवर्षाणि बुधे सप्तदशानि च ॥ ४३३ ॥

शनौ च दश वर्षाणि शुक्रस्याप्येकविंशतिः ।
राहोर्द्वादशवर्षाणि शुक्रस्याप्येकविंशतिः ॥ ४३४ ॥

कुन्तला—कृत्तिकानक्षत्रतः समारम्य त्रिः, चतु, त्रिः चतुः नक्षत्राणि च सूर्य चन्द्र भौम बुध शनि गुरु राहु शुक्र ग्रहाणां दशा भवन्ति । एवमेव सूर्यस्य दशा वर्षाणि षट्, चन्द्रस्य पञ्चदश, भौमस्याष्ट वर्षाणि, बुधस्य सप्तदश गुरोः उनविंशतिवर्षाणि राहोर्द्वादशवर्षाणि शुक्रस्य एकविंशति वर्षाणि च दशामानं भवति ।

ज्योति—कृत्तिका नक्षत्र से आरम्भ कर ३ नक्षत्र पुनः ४ नक्षत्र, ३ नक्षत्र, पुनः ४ नक्षत्र इस क्रम से सू–च मं बु, श, बृ, रा, शु ग्रहों की दशा होती । इस प्रकार सूर्य का दशा वर्ष ६ वर्ष, चन्द्र का १५ वर्ष, मंगल का ८ वर्ष, बुध का १७ वर्ष, शनि का १९ बर्ष, राहु का १२ वर्ष, शुक्र का २१ वर्ष होता है ।

अष्टोत्तरी दशाचक्र

सू.	चं.	मं.	बु.	श.	गु	रा.	शु.	ग्रहा
३	४	३	४	३	४	३	४	नक्षत्र तक
६	१५	८	१७	१०	१९	१२	२१	दशा वर्ष

अष्टोत्तरी दशा के विषय में भिन्न-भिन्न आचार्यों का भिन्न-भिन्न मत है । कुछ लोग आर्द्रा से भी गणना कर अष्टोत्तरी दशा का आनयन करते हैं । जैसाकि मानसागरी में लिखा है—

चतुष्कं त्रितयं तस्माच्चतुष्कं त्रितयं पुनः ।
यावत्स्वजन्मभं तावद्गणयेद्रौद्रभादितः ॥

आर्द्रा नक्षत्र से आरम्भ कर आर्द्रा, पुनर्वसु, पुष्य, आश्लेषा इन चार नक्षत्रों में सूर्य की, मघा, पूर्वा फा गुनी, उ. फा इन तीन नक्षत्रों में चन्द्रमा की, हस्त, चित्रा, स्वाती, विशाखा इन चार नक्षत्रों में मंगल की, अनुराधा,

ज्येष्ठा, मूल इन तीन नक्षत्रों में बुध की, पू. षा, उ० षा, अभिजित श्रवण इन चारो नक्षत्रों में शनि की, धनिष्ठा, शतभिषा; पूर्वा भा०, इन तीन नक्षत्रों में बृहस्पति की, उ० भा रेवतो, अश्विनी, भरणी, इन चार नक्षत्रों में राहु की तथा कृत्तिका, रोहिणी, मृगशिरा इन तीन नक्षत्रों में शुक्र की अष्टोत्तरी दशा होती है। इस प्रकार चं, बु, गु और शुक्र शुभग्रहों के ३-३ नक्षत्र तथा र० मं, श और राहु इन पापग्रहों को ४-४ नक्षत्र प्राप्त होते हैं। आर्द्रा से अपने जन्म नक्षत्र पर्यन्त गणना कर दशा का ज्ञान करना चाहिए।

अष्ठोत्तरी दशा में केवल आठ ग्रहों की ही दशा होती है। राहु और केतु दोनों पापग्रहों का समावेश एकही राहु ग्रह में कर लिया गया है। अतः इस क्रम में केतु का स्थान नहीं है।

लग्नात् केन्द्र कोणस्थे राहौ लग्न विना स्थिते।
अष्टोन्तरी दशाविप्र विज्ञेया रौद्रभादितः॥

बृहत्पाराशर होरा में कहा है—

लग्नात् कोणस्थे राहौ लग्नविना स्थिते।
अष्टोत्तरी दशा विप्र! विज्ञेया रौद्रभादितः॥
चतुष्कं त्रितयं तस्मात् चतुष्कं त्रितयं पुनः।
एवं स्वजन्मभं यावत् विगण्य यथाक्रमम्॥
सूर्यचन्द्र कुजः सौम्य शनिजीवः तमो भृगुः।
एते दशाधिपा विप्र! ज्ञेया केतुं विना ग्रहाः॥
रसाः पञ्चेन्दवो नागा सप्तचन्द्राश्च रवेन्दवः।
गोऽब्जा सूर्या कुनेत्राश्च स्यादीनां दशासमाः॥

अर्थात् आर्द्रा से ४ नक्षत्र सूर्य उसके बाद ३ नक्षत्र चन्द्र, उसके बाद ४ मङ्गल, उसके बाद ३ बुध उसके बाद ४ शनि, उसके बाद ३ गुरु पुनः ४ राहु पुनः ३ नक्षत्र शुक्र इस प्रकार जन्म नक्षत्र तक गिनकर जिस ग्रह की दशा प्राप्त हो उससे आरम्भ कर जानना चाहिए। रवि के दशा वर्ष ६, चन्द्र के १५, मंगल के ८, बुध के १७, शनि के १०, गुरु के १९, राहु के १२ और शुक्र के २१ वर्ष होते हैं।

स्पष्टार्थं चक्र

सू.	चं.	मं.	बु.	श.	गु.	रा.	शु.	दशाधीश
६	१५	८	१७	१०	१९	१२	२१	दशावर्ष
आ. पुन. पु. श्ले.	म. पू. फा. उ. फा.	ह. चि. स्वा. वि.	अनु. ज्ये. मू.	पू. षा. उ. षा. अभि. श्र.	ध. श. पू. भा.	उ. भा. रे. अश्वि. भर.	कृ. रो. मृ.	नक्षत्र

ऊपर जो ग्रहों के दशामान कहे गये हैं उनमें पापग्रहों के दशामान के चतुर्थांश एक-एक नक्षत्र में दशामान होता है। एवं शुभग्रह के मान का तृतीयांश एक-एक नक्षत्र में दशामान होता है। इस प्रकार जन्म नक्षत्र का जो अष्टोत्तरी मान सिद्ध हो उसके भयात् और भभोग के द्वारा विंशोत्तरीवत् भुक्त वर्षादि सिद्ध होता है।

अष्टोत्तरी अन्तर्दशा साधनम्—

दशादशाहताकार्या नवभिर्भागमाहरेत्।
यल्लब्धं सो भवेन्मासस्त्रिंशन्निघ्नं दिनं भवेत् ॥ ४३१ ॥

अष्टोत्तरी महादशा में अन्तर्दशा जानने के लिये महादशा में अभीष्ट ग्रह की महादशा से गुणा या ९ का भाग देने पर लब्धि मास शेष को ३० से गुणा कर ९ का भाग देने पर दिन होता हैं।

उदाहरण—सूर्य की महादशा में सूर्य और चन्द्र का अन्तर ज्ञात करता है। सूर्य दशा वर्ष ६, चन्द्र दशा वर्ष १५,

$$\frac{६ \times ६}{९} = \frac{३६}{९} = ४ \text{ मास सूर्यान्तर}$$

$$\frac{६ \times १५}{९} = \frac{९०}{९} = १० \text{ मास चन्द्रान्तर}$$

इसी प्रकार सभी ग्रहों की अन्तर्दशा ज्ञात हो सकती है।

अष्टोत्तरी दशान्तंशा बोधक चक्र

सूर्य ६ वर्ष
(आ., पु. पुष्य. आश्ले.

ग्र.	व.	मा.	दि.	घ.
सू.	०	४	०	०
च.	०	१०	०	०
मं.	०	५	१०	०
बु.	०	११	१०	०
श.	०	६	२०	०
गु.	१	०	२०	०
रा.	०	८	०	०
शु.	१	२	०	०

चन्द्र १५ वर्ष
[(म., पू. फा., उ. भा.)

ग्र.	व.	मा.	दि.	घ.
च.	२	१	०	०
मं.	१	१	१०	०
बु.	२	४	१०	०
श.	१	४	२०	०
गु.	२	७	२०	०
रा.	१	८	०	०
शु.	२	११	०	०
सू.	०	१०	०	०

भौम ८ वर्ष
(ह., चि., स्वा. विशा.)

ग्र.	व.	मा.	दि.	घ.
मं.	०	७	३	२०
बु.	१	३	३	२०
श.	०	८	२६	४०
गु.	१	४	२६	४०
रा.	०	१०	२०	०
शु.	१	६	२०	०
सू.	०	५	१०	०
चं.	१	१	१०	०

बुध १७ वर्ष
(अनु., ज्ये., मू.)

ग्र.	व.	मा.	दि.	घ.
बु.	२	८	३	२०
श.	१	६	२६	४०
गु.	२	११	२६	४०
रा.	१	१०	२०	०
शु.	३	३	२०	०
सू.	०	११	१०	०
चं.	२	४	१०	०
मं.	१	३	३	२०

शनि १० वर्ष
(पू. षा, उ. षा., अभि., श्रव.)

ग्र.	घ.	मा.	दि.	घ.
श.	०	११	३	२०
गु.	१	९	३	२०
रा.	१	१	१०	०
शु.	१	११	१०	०
सू.	०	६	२०	०
चं.	१	४	२०	०
मं.	०	८	२६	४०
बु.	१	६	२६	४०

गुरु १९ वर्ष
(ध०, शत. पू. भा.)

ग्र.	व.	मा.	दि.	घ.
गु.	३	४	३	२०
रा.	२	१	१०	०
शु.	३	८	१०	०
सू.	१	०	२०	०
चं.	२	७	२०	०
मं.	१	४	२६	४०
बु.	२	११	२६	४०
श.	१	९	३	२०

राहु १२ वर्ष
(उ. भा., रे. अ. भर.)

ग्र.	व.	मा.	दि.	घ.
रा.	१	४	०	०
शु.	२	४	०	०
सू.	०	८	०	०
च.	१	८	०	०
मं.	०	१०	२०	०
बु.	१	१०	२०	०
श.	१	१	१०	०
गु.	२	१	१०	०

शुक्र २१ वर्ष
(कृ., रो., मृ.)

ग्र.	व.	मा.	दि.	घ.
शु.	४	१	०	०
र.	१	२	०	०
चं.	२	११	०	०
मं.	१	६	२०	०
बु.	३	३	२०	०
श.	१	११	१०	०
गु.	३	८	१०	०
रा.	२	४	०	०

अष्टोत्तरी उपदशा (प्रत्यन्तर) साधनम्—

अन्तर्दशाऽहर्गण एव गुण्यः स्वमूलवर्षैर्वसुखैकभक्तः ।
पुनः पुनः षष्टिगुणावशेषे दिनादयश्चोपदशाक्रमोऽयन् ॥४३६॥

ग्रहों की अन्तर्दशा को दिनात्मक बनाकर प्रत्येक ग्रह के महादशा मान से पृथक् गुणाकर गुणनफल में १०८ का भाग देने से लब्धि दिनात्मक तथा शेष को ६० से गुणाकर पुनः १०८ का भाग देने से लब्धि घट्यादि उपदशा होती है।

उदाहरण—सूर्य महादशा के चन्द्रान्तर में भौम की उपदशा अभीष्ट है। चन्द्रान्तर ०।१०।० भौम महादशा वर्ष ८ चन्द्रान्तर दिनात्मक १० × ३०=३००।

$$\frac{३०० \times ८}{१०८} = \frac{२४००}{१०८}$$

१०८) २४०० (२२
२१६
२४०
२१६
२४ × ६०

लब्धि २२।१३।२० दिनादि सूर्य महादशा में चन्द्रान्तर में भौम की उपदशा (प्रत्यन्तर) हुई

१०८) १४४० (१३
१०८
३६०
३२४
३६ × ६०
२१६० (२०
२१६
×०

अष्टोत्तरी सूर्य महादशा वर्ष ६

सूर्यान्तर (०।४।०) में उपदशा

ग्र.	सू.	चं.	मं.	बु.	श.	गु.	रा.	शु.
मा.	०	०	०	०	०	०	०	०
दि.	६	१६	८	१८	११	२१	१३	२३
घ.	४०	४०	५३	५३	६	६	२०	२०
पं.	०	०	२०	२०	४०	४०	०	०

चन्द्रान्तर (०।१०।०) में उपदशा

ग्र.	चं.	मं.	बु.	श.	गु.	रा.	शु.	सू.
मा.	१	०	१	०	१	१	१	०
दि.	११	२२	१७	२७	२२	३	२८	१६
घ.	४०	१३	१३	४६	४६	२०	२०	४०
प.	०	२०	२०	४०	४०	०	०	०

भौमान्तर (०।५।१०) मे उपदशा

ग्र.	मं.	बु.	श.	गु.	रा.	शु.	सू.	चं.
मा.	०	०	०	०	०	१	०	०
दि.	११	२५	१४	२८	१७	१	८	२२
घ.	५१	११	४८	८	४६	६	५३	१३
प.	६	६	५३	५३	४०	४०	२०	२०
वि.	४०	४०	२०	२०	०	०	०	०

बुधान्तर (०।११।१०) मे उपदशा

ग्र.	बु.	श.	गु.	रा.	शु.	सू.	चं.	मं.
मा.	१	१	१	१	२	०	१	०
दि.	२३	१	२९	७	६	१८	१७	२५
घ.	३१	२८	४८	४३	६	५३	१३	११
प.	६	५३	५३	४०	४०	२०	२०	६
वि.	४०	२०	२०	०	०	०	०	४०

शन्यन्तर (०।६।२०) में उपदशा

ग्र.	श.	गु.	रा.	शु.	सू.	चं.	मं.	बु.
मा.	०	१	०	१	०	०	०	१
दि.	१८	५	२२	८	११	२७	१४	१
घ.	३१	११	१३	५३	६	४६	४८	२८
प.	६	६	२०	२०	४०	४०	५३	५३
वि	४०	४०	०	०	०	०	२०	२०

गुर्वन्तर (१।०।२०) मे उपदशा

ग्र.	गु.	रा.	शु.	सू	चं.	मं	बु.	श.
मा.	२	१	२	०	१	०	१	१
दि.	६	१२	१३	२१	२२	२८	२९	५
घ.	५१	१३	५३	६	४६	८	४०	११
प.	६	२०	२०	४०	४०	५३	५३	६
वि	४०	०	०	०	०	२०	२०	४०

राह्वन्तर (०।८।०) मे उपदशा

ग्र.	रा.	शु.	सू.	चं.	मं.	बु.	श.	गु.
मा.	०	१	०	१	०	१	०	१
दि.	२६	१६	१३	३	१७	७	२२	१२
घ.	४०	४०	२०	२०	४६	४६	१३	१३
प.	०	०	०	०	४०	४०	२०	२०

शुक्रान्तर (१।२।०) में उपदशा

ग्र.	शु.	सू.	चं.	मं.	बु.	श.	गु.	रा.
मा.	२	०	१	१	२	१	२	१
दि.	२१	२३	२८	१	६	८	१३	१६
घ.	४०	२०	२०	६	६	५३	५३	४०
प.	०	०	०	४०	४०	२०	२०	२०

अष्टोत्तरी चन्द्र महादशा वर्ष १५

चन्द्रान्तर (२।१।०) में उपदशा

ग्र.	चं.	मं.	बु.	श.	गु.	रा.	शु	सू.
मा.	३	१	३	२	४	२	४	१
दि.	१४	२५	२८	९	११	२३	२५	११
घ.	१०	३३	३	२६	५६	२०	५०	४०
प.	०	२०	२०	४०	४०	०	०	०
वि.	०	०	०	०	०	०	०	०

भौमान्तर (१।१।१०) में उपदशा

ग्र.	मं.	बु.	श.	गु.	रा.	शु.	सू.	चं.
मा.	०	२	१	२	१	२	०	१
दि.	२९	२	७	१०	१४	१७	२२	२५
घ.	३७	५७	२	२२	२६	४६	१३	३३
प.	४६	४६	१३	१३	४०	४०	२०	२०
वि.	४०	४०	२०	२०	०	०	०	०

बुधान्तर (२।४।१०) में उपदशा

ग्र.	बु.	श.	गु.	रा.	शु.	सू.	चं.	मं.
मा.	४	२	४	३	५	१	३	२
दि.	१३	१८	२९	४	१५	१७	२८	२
घ.	४७	४२	३२	२६	१६	१३	३	५७
प.	४६	१३	१३	४०	४०	२०	२०	४६
वि.	४०	२०	२०	०	०	०	०	४०

शन्यन्तर (१।४।२०) में उपदशा

ग्र.	श.	गु.	रा.	शु.	सू.	चं.	मं.	बु.
मा.	१	२	१	३	०	२	१	२
दि.	१६	२७	२५	७	२७	९	७	१८
घ.	१७	५७	३३	१३	४६	२६	२	४२
प.	४६	४६	२०	२०	४०	४०	१३	१३
वि.	४०	४०	०	०	०	०	२०	२०

गुर्वन्तर (२।७।२०) में उपदशा

ग्र.	गु.	रा.	शु.	सू.	चं.	मं.	बु.	श.
मा.	५	३	६	१	४	२	४	२
दि.	१७	१५	४	२२	११	१०	२९	२७
घ.	७	३३	४३	४६	५६	२२	३२	५७
प.	४६	२०	२०	४०	४०	१३	१३	४६
वि.	४०	०	०	०	०	२०	२०	४०

राह्वन्तर (१।८।०) में उपदशा

ग्र.	रा.	शु.	सू.	चं.	मं.	बु.	श.	गु.
मा.	२	३	१	२	१	३	१	३
दि.	६	२६	३	२३	१४	४	२५	१५
घ.	४०	४०	२०	२०	२६	२६	३३	३३
प.	०	०	०	०	४०	४०	२०	२०
वि.	०	०	०	०	०	०	०	०

शुक्रान्तर (२।११।०) में उपदशा

ग्र	शु.	सू.	च.	मं.	बु.	श.	गु.	रा.
मा.	६	१	४	२	५	३	६	३
दि.	२४	२८	२५	१७	१५	७	४	२६
घ.	१०	२०	५०	४६	१६	१३	४३	४०
प.	०	०	०	४०	४०	२०	२०	०
वि.	०	०	०	०	०	०	०	०

सूर्यन्तर (०।१०।०) में उपदशा

ग्र.	सू.	चं.	मं.	बु.	श.	गु.	रा.	शु.
मा.	०	१	०	१	०	१	१	१
दि.	१६	११	२२	१७	२७	२२	३	२८
घ.	४०	४०	१३	१३	४६	४६	२०	२०
प.	०	०	२०	२०	४०	४०	०	०
वि.	०	०	०	०	०	०	०	०

अष्टोत्तरी भौम महादशा वर्ष ८

भौमान्तर (०।७।३।२०) में उपदशा

ग्र.	मं.	बु.	श.	गु.	रा.	शु	सू.	च.
मा.	०	१	०	१	१	१	०	०
दि.	१५	३	१९	७	२३	११	११	२९
घ.	४८	३४	४५	३१	४२	२८	५१	३७
प.	८	४८	११	५१	१३	५३	६	४६
वि	५३	५३	७	७	२०	२०	४०	४०

बुधान्तर (१।३।३।२०) में उपदशा

ग्र.	बु.	श.	गु.	रा.	शु	सू.	च.	मं.
मा.	२	१	२	१	२	०	२	१
दि.	११	११	१९	२०	२८	२५	२	३
घ.	२१	५८	४५	२२	८	११	५७	३४
प.	५८	३१	१२	१३	५३	६	४६	४८
वि.	५३	७	७	२०	२०	४०	४०	५३

शन्यन्तर (०।८।२६।४०) मे उपदशा

ग्र.	श.	गु.	रा.	शु.	सू.	चं.	मं.	बु.
मा.	०	१	०	१	०	१	०	१
दि.	२४	१६	२९	२१	१४	७	१९	११
घ.	४१	५४	३७	५१	४८	२	४५	५८
प.	२८	४८	४६	६	५३	१३	११	३१
वि	५३	५३	४०	४०	२०	२०	७	७

गुर्वन्तर (१।४।२६।४०) मे उपदशा

ग्र.	गु.	रा.	शु.	सू.	चं.	मं.	बु.	श.
मा	२	१	३	०	२	१	२	१
दि.	२९	२६	८	२८	१०	७	१९	१६
घ.	८	१७	३१	८	२२	३१	४५	५४
प	८	४६	६	५३	१३	५१	११	४८
वि.	५३	४०	४०	२०	२०	७	७	५३

राह्वन्तर (०।१०।२०) में उपदशा

ग्र.	रा	शु.	सू.	च.	मं.	बु.	श.	गु.
मा.	१	२	०	१	०	१	०	१
दि.	५	२	१७	१४	२३	२०	२९	२६
घ.	३३	१३	४६	२६	४२	२२	३७	१७
पं.	२०	२०	४०	४०	१३	१३	४६	४६
वि.	०	०	०	०	२०	२०	४०	४०

शुक्रान्तर (१।६।२०) में उपदशा

ग्र.	शु.	सू.	चं.	मं.	बु.	श.	गु.	रा.
मा.	३	१	२	१	२	१	३	२
दि	१८	१	१७	११	२८	२१	८	२
घ.	५३	६	४६	२८	८	५१	३१	१३
प.	२०	४०	४०	५३	५३	६	६	२०
वि	०	०	०	२०	२०	४०	४०	०

सूर्यान्तर (०।५।१०) में उपदशा

ग्र.	सू.	चं.	मं.	बु.	श.	गु.	रा.	शु.
मा.	०	०	०	०	०	०	०	१
दि.	८	२२	११	२५	१४	२८	१७	१
घ.	५३	१३	५१	११	४८	८	४६	६
प.	२०	२०	६	६	५३	५३	४०	४०
वि	०	०	४०	४०	२०	२०	०	०

चन्द्रान्तर (१।१।१०) में उपदशा

ग्र.	चं.	मं.	बु.	श.	गु.	रा.	शु.	र.
मा.	१	०	२	१	२	१	०	०
दि.	२५	२९	३	७	१०	१४	१७	२२
घ.	३३	३७	५७	२	२२	२६	४६	१३
प.	२०	४६	४६	१३	१३	४०	४०	२०
वि.	०	४०	४०	२०	२०	०	०	०

अष्टोत्तरी बुध महादशा वर्षं १७

बुधान्तर (२।८।३।२०) में उपदशा

प्र.	बु.	श.	गु.	रा.	शु.	सू.	चं.	मं.
मा.	५	२	५	३	६	१	४	२
दि.	१	२९	१९	१७	७	२३	१३	११
घ.	३८	११	२८	२	१८	३१	४७	२१
प.	८	५१	३१	१३	५३	६	४६	२८
वि.	५३	७	८	२०	२०	४०	४०	५३

शन्यन्तर (१।६।२६।४०।) में उपदशा

ग्र.	श.	गु.	रा.	शु.	सू.	च	म	बु.
मा.	१	३	२	३	१	२	१	२
दि.	२२	९	२	२०	१	१८	११	२९
घ.	२८	४१	५७	११	२८	४२	५८	११
प.	८	२८	४६	६	५३	१३	३१	५१
वि.	५३	५३	४०	४०	२०	२०	७	७

गुर्वन्तर (२।११।२६।४०) मे उपदशा

प्र.	गु.	रा.	शु.	सू.	चं.	मं.	बु.	श.
मा.	६	३	६	१	४	२	५	३
दि.	९	२९	२९	२९	२९	१९	१९	९
घ.	२४	३७	२१	४८	३२	४५	२८	४१
प.	४८	४६	६	५३	१३	११	३१	२८
वि.	५३	४०	४०	२०	२०	७	७	५३

राह्वन्तर (१।१०।२०) में उपदशा

प्र.	रा	शु.	सू.	चं.	मं	बु.	श.	गु.
मा.	२	४	१	३	१	३	२	३
दि	१५	१२	७	४	२०	१७	२	२९
घ	३३	१३	४६	२६	२२	२	५७	३७
प	२०	२०	४०	४०	१३	१३	४६	४६
वि	०	०	०	०	२०	२०	४०	४०

शुक्रान्तर (३।३।२०) मे उपदशा

प्र.	शु.	सू.	चं.	मं.	बु.	श.	गु.	रा
मा.	७	२	५	२	६	३	६	४
दि.	२१	६	१५	२८	७	२०	२९	१२
घ.	२३	६	१६	८	१८	११	२१	१३
प.	२०	४०	४३	५३	५३	६	६	२०
वि	०	०	०	२०	२०	४०	४०	०

सूर्यन्तिर (०।११।१०) मे उपदशा

ग्र	सू	चं	मं	बु.	श	गु.	रा	शु.
मा	०	१	०	१	१	१	१	२
दि	१८	१७	२५	२३	१	२९	७	६
घ	५३	१३	११	३१	२८	४८	४६	६
प	२०	२०	६	६	५३	५३	४०	४०
वि	०	०	४०	४०	२०	२०	०	०

चन्द्रान्तर (२।४।१०) मे उपदशा

प्र.	च.	मं.	बु.	श.	गु.	रा	शु.	सू.
मा.	३	२	४	२	४	३	५	१
दि.	२८	२	१३	२८	२९	४	१५	१७
घ.	३	५७	१७	४२	३२	२६	१६	१३
प.	२०	४६	४६	१३	१३	४०	४०	२०
वि.	०	४०	४०	२०	२०	०	०	०

भौमान्तर (१।३।३।२०) मे उपदशा

प्र.	मं	बु	श	गु	रा	शु	सू	चं.
मा	१	२	१	२	१	२	०	२
दि	३	११	११	१९	२०	२८	२५	२
घ	३४	२१	५८	४५	२२	८	११	५७
प	३८	२८	३१	११	१३	५३	६	६
वि	५३	५३	७	७	२०	२०	४०	४०

अष्टोंत्तरी शनि महादशा वर्षं १०

शन्यन्तर (०।११।३।२०) में उपदशा

ग्र.	श.	गु.	रा.	शु.	सू.	चं.	मं.	बु.
मा.	१	१	१	२	०	१	०	१
दि.	०	२८	७	४	१८	१६	२४	२२
घ.	५१	३८	२	४८	३१	१७	४१	२८
प.	५१	३१	१३	५३	६	४६	२८	८
वि.	७	७	२०	२०	४०	४०	५३	५३

गुर्वन्तर (१।९।३।२०) मे उपदशा

ग्र.	गु.	रा.	शु.	सू.	चं.	मं.	बु.	श.
मा.	३	२	४	१	२	१	३	१
दि.	२१	१०	३	५	२७	१६	९	२८
घ.	२५	२२	८	११	५७	५४	४१	३८
प.	११	१३	५३	६	४६	४८	२८	३१
वि.	७	२०	२०	४०	४०	५३	५३	७

राह्वन्तर (१।१।१०) में उपदशा

ग्र.	रा.	शु.	सू.	चं.	मं.	बु.	श.	गु.
मा.	१	२	०	१	०	२	१	२
दि.	१४	१७	२२	२५	२९	२	७	१०
घ.	२६	४६	१३	३३	३७	५७	२	२२
प.	४०	४०	२०	२०	४६	४६	१३	१३
वि.	०	०	०	०	४०	४०	२०	२०

शुक्रान्तर (०।११।१०) में उपदशा

ग्र.	शु.	सू.	चं.	मं.	बु.	श.	गु.	रा.
मा.	०	१	३	१	३	२	४	२
दि.	४	८	७	२१	२०	४	३	१७
घ.	१६	५३	१३	५०	११	४८	८	४६
प.	६	२०	२०	६	६	५३	५३	४०
वि.	४०	०	०	४०	४०	२०	२०	०

सूर्यन्तिर (०।६।२०) में उपदशा

ग्र.	सू.	चं.	मं.	बु.	श.	गु.	रा.	शु.
मा.	०	०	०	१	०	१	०	१
दि.	११	२७	१४	१	२८	५	२२	८
घ.	६	४६	४८	२८	३१	११	१३	५३
प.	४०	४०	५३	५३	६	६	२०	२०
वि.	०	०	२०	२०	४०	४०	०	०

चन्द्रान्तर (१।४।२०) में उपदशा

ग्र.	चं.	मं.	बु.	श.	गु.	रा.	शु.	सू.
मा.	२	१	२	१	२	१	३	०
दि.	९	७	१८	१६	२७	२५	७	२७
घ.	२६	२	४२	१७	५७	३३	१३	४६
प.	४०	१३	१३	४६	४६	२०	२०	४०
वि.	०	२०	२०	४०	४०	०	०	०

भौमान्तर (०।८।२६।४०) में उपदशा

ग्र.	मं.	बु.	श.	गु.	रा.	शु.	सू.	च.
मा.	०	१	०	१	०	१	०	१
दि.	१९	११	२४	१६	२९	२१	१४	७
घ.	४५	५८	४१	५४	३७	५१	४८	२
प.	११	३१	२८	४८	४६	६	५३	१३
वि.	७	७	५३	५६	४०	४०	२०	२०

बुधान्तरं (१।६।२६।४०) में उपदशा

ग्र.	बु.	श.	गु.	रा.	शु.	सू.	चं.	मं.
मा.	२	१	३	२	३	१	२	१
दि.	२९	२२	९	२	२०	१	१८	११
घ.	११	२८	४१	५७	११	२८	४२	५८
प.	५१	८	२८	४६	६	५३	१३	३१
वि.	७	५३	५३	४०	४०	२०	२०	७

अष्टोत्तरी गुरु महादशा वर्ष १९

गुर्वन्तर (३।४।३।२०) में उपदशा

ग्र.	गु.	रा.	शु.	सू.	चं.	मं.	बु.	श.
मा.	७	४	७	२	५	२	६	३
दि.	१	१३	२३	६	१७	२९	९	२१
घ.	४१	४२	५८	५१	७	८	२४	२५
प.	५१	१३	५३	६	४६	८	४८	११
वि.	७	२०	२०	४०	४०	५३	५३	७

राह्वन्तर (२।१।१०) में उपदशा।

ग्र.	रा.	शु.	सू.	चं.	मं.	बु.	श.	गु.
मा	२	४	१	३	१	३	२	४
दि	२४	२७	१२	१५	२६	२९	१०	१३
घ	२६	४६	१३	३३	१७	३७	२२	४२
प.	४०	४०	२०	२०	४६	४६	१३	१३
वि	०	०	०	०	४०	४०	२०	२०

शुक्रान्तर (३।८।१०) में उपदशा

ग्र.	शु.	सू.	चं.	मं.	बु.	श.	गु.	रा
मा.	८	२	६	३	६	४	७	४
दि.	१८	१३	४	८	२९	३	२३	२७
घ.	३६	५३	४३	३१	२१	८	५३	४६
प.	४०	२०	२०	६	६	५३	५८	४०
वि	०	०	०	४०	४०	२०	२०	०

सूर्यान्तर (१।०।२०) में उपदशा।

ग्र.	सू.	चं	मं	बु.	श.	गु.	रा	शु.
मा	०	१	०	१	१	२	१	२
दि	२१	२२	२८	२९	५	६	१२	१३
घ	६	४६	८	४८	११	५१	१३	५३
प	४०	४०	५३	५३	६	६	२०	२०
वि	०	०	२०	२०	४०	४०	०	०

चन्द्रान्तर (२।७।२०) मे उपदशा

ग्र.	चं.	मं.	बु.	श	गु.	रा.	शु.	सू.
मा	४	२	४	२	५	३	६	१
दि.	११	१०	२९	२७	१७	१५	४	२२
घ.	५६	२२	३२	५७	७	३३	४३	४६
प.	४०	१३	१३	४६	४६	२०	२०	४०
वि.	०	२०	२०	४०	४०	०	०	०

भौमान्तर (१।४।२६।४०) मे उपदशा।

ग्र.	मं.	बु.	श	गु	रा	शु	सू	चं.
मा.	१	२	१	२	१	३	०	२
दि	७	१९	१६	२९	२६	८	२८	१०
घ	३१	४५	५४	८	१७	३१	८	२२
प.	५३	११	४८	८	४६	६	५३	१३
वि	७	७	५३	५३	४०	४०	२०	२०

बुधान्तर (२।११।२६।४०) में उपदशा

ग्र.	बु.	श.	गु.	रा	शु.	सू.	चं.	मं.
मा.	५	३	६	३	६	१	४	२
दि	१९	९	९	२९	२९	२९	२९	१९
घ.	२८	४१	२४	३७	२१	४८	३२	४५
प.	३१	२८	४८	४६	६	५३	१३	११
वि	७	५३	५३	४०	४०	२०	२०	७

शन्यन्तर (१।९।३।२०) में उपदशा

ग्र.	श.	गु	रा	शु.	सू.	चं.	मं	बु.
मा	१	३	२	४	१	२	१	३
दि	२८	२१	१०	३	५	२७	१६	९
घ.	३८	२५	२२	८	११	५७	५४	४१
प.	३१	११	१३	५३	६	४६	४८	२८
वि	७	७	२०	२०	४०	४०	५३	५३

अष्टोत्तरी राहु महादशा वर्ष १२

राह्वन्तर (१।४।०) में उपदशा

ग्र.	रा.	शु.	सू.	चं.	मं.	बु.	श.	गु.
मा.	१	३	०	२	१	२	१	२
दि.	२३	३	२६	६	५	१५	१४	२४
घ.	२०	२०	४०	४०	३३	३३	२६	२६
प.	०	०	०	०	२०	२०	४०	४०
वि.	०	०	०	०	०	०	०	०

शुक्रान्तर (२।४।०) में उपदशा

ग्र.	शु.	सू.	चं.	मं.	बु.	श.	गु.	श.
मा.	५	१	३	२	४	२	४	३
दि.	१३	१६	२६	२	१२	१७	२७	३
घ.	२०	४०	४०	१३	१३	४६	४६	२०
प.	०	०	०	२०	२०	४०	४०	०
वि.	०	०	०	०	०	०	०	०

सूर्यान्तर (०।८।०) में उपदशा

ग्र.	सू.	चं.	मं.	बु.	श.	गु.	रा.	शु.
मा.	०	१	०	१	२	१	०	१
दि.	१३	३	१७	७	२२	१२	२६	१६
घ.	१०	२०	४६	४६	१३	१३	४०	४०
प.	०	०	४०	४०	२०	२०	०	०
वि.	०	०	०	०	०	०	०	०

चन्द्रान्तर (१।८।०) में उपदशा

ग्र.	चं.	मं.	बु.	श.	गु.	रा.	शु.	सू.
मा.	२	१	३	१	३	२	३	१
दि.	२३	१४	४	१५	१५	६	२६	३
घ.	२०	२६	२६	३३	३३	४०	४०	२०
प.	०	४०	४०	२०	२०	०	०	०
वि.	०	०	०	०	०	०	०	०

भौमान्तर (०।१०।२०) में उपदशा

ग्र.	मं.	बु.	श.	गु.	रा.	शु.	सू.	चं.
मा.	०	१	०	१	१	२	०	१
दि.	२३	२०	२९	२६	५	२	१७	१४
घ.	४२	२२	३७	१७	३३	१३	४६	२६
प.	१३	१३	४६	४६	२०	२०	४०	४०
वि.	२०	२०	४०	४०	०	०	०	०

बुधान्तर (१।१०।२०) में उपदशा

ग्र.	बु.	श.	गु.	रा.	शु.	सू.	चं.	मं.
मा.	३	२	३	२	४	१	३	१
दि.	१७	२	२९	१५	१२	७	४	२०
घ.	२	५७	३७	३३	१३	४६	२६	२२
प.	१३	४६	४६	२०	२०	४०	४०	१३
वि.	२०	४०	४०	०	०	०	०	२०

शन्यन्तर (१।१।१०) में उपदशा

ग्र.	श.	गु.	रा.	शु.	सू.	चं.	मं.	बु.
मा.	१	२	१	२	०	१	०	२
दि.	७	१०	१४	१७	२२	२५	२९	२
घ.	२	२२	२६	४६	१३	३३	३७	५७
प.	१३	१३	४०	४०	२०	२०	४६	४६
वि.	२०	२०	०	०	०	०	४०	४०

गुर्वन्तर (२।१।१०) में उपदशा

ग्र.	गु.	रा.	शु.	सू.	चं.	मं.	बु.	श.
मा.	४	२	४	१	३	१	३	२
दि.	१३	२४	२७	१२	१५	२६	२९	१०
घ.	४२	२६	४६	१३	३३	१७	३७	२२
प.	१३	४०	४०	२०	२०	४६	४६	१३
वि.	२०	०	०	०	०	४०	४०	२०

अष्टोत्तरी शुक्र महादशा वर्ष १८

शुक्रान्तर (४।१।०) में उपदशा

ग्र.	शु.	सू.	चं.	मं.	बु.	श.	गु.	रा.
मा.	९	२	६	३	७	४	८	५
दि.	१५	२१	२४	१८	२१	१६	१६	१३
घ.	५०	४०	१०	५३	२३	६	३८	२०
प.	०	०	०	२०	२०	४०	४०	०
वि.	०	०	०	०	०	०	०	०

सूर्यान्तर (१।२।०) में उपदशा

ग्र.	सू.	चं.	मं	बु.	श	गु.	रा	शु
मा.	०	१	१	२	१	२	१	२
दि.	२३	२८	१	६	८	१३	१६	२१
घ.	२०	२०	६	६	५३	५३	४०	४०
प.	०	०	४०	४०	२०	२०	०	०
वि.	०	०	०	०	०	०	०	०

चन्द्रान्तर (२।११।०) में उपदशा

ग्र.	चं.	मं.	बु.	श	गु.	रा.	शु.	सू.
मा.	४	२	५	३	६	३	६	१
दि.	२५	१७	१५	७	४	२६	२४	२८
घ.	५०	४६	१६	१३	४३	४०	१०	२०
प.	०	४०	४०	२०	२०	०	०	०
वि.	०	०	०	०	०	०	०	०

भौमान्तर (१।६।२०) में उपदशा

ग्र.	मं.	बु.	श	गु	रा	शु.	सू	चं.
मा.	१	२	१	३	२	३	१	२
दि.	११	२८	२१	८	२	१८	१	१७
घ	२८	८	५१	३१	१३	५३	६	४६
प.	५३	५३	६	६	२०	२०	४०	४०
वि.	२०	२०	४०	४०	०	०	०	०

बुधान्तर (३।३।२०) में उपदशा

ग्र.	बु.	श.	गु.	रा.	शु.	सू.	चं.	मं.
मा.	६	३	६	३	७	२	५	२
दि.	१७	२०	२९	१२	२१	६	१५	२८
घ.	१८	११	२१	१३	२३	६	१६	८
प.	५३	६	६	२०	२०	४०	४०	५३
वि.	२०	४०	४०	०	०	०	०	२०

शन्यन्तर (१।११।१०) मे उपदशा

ग्र.	श.	गु	रा	शु	सू.	चं	मं.	बु.
मा.	२	४	२	४	१	३	१	३
दि.	४	३	१७	१६	८	७	२१	२०
घ.	४८	८	४६	६	५३	५३	५१	११
प.	५३	५३	४०	४०	२०	२०	६	६
वि	२०	२०	०	०	०	०	४०	४०

गुर्वन्तर (३।८।१०) में उपदशा

ग्र.	गु.	रा.	शु.	सू.	चं.	मं.	बु.	श.
मा.	७	४	८	२	६	३	६	४
दि.	२३	२७	१८	१३	४	८	२९	३
घ.	५८	४६	३६	५३	४३	४१	२१	८
प.	५३	४०	४०	२०	२०	६	६	५३
वि.	२०	०	०	०	०	४०	४०	२०

राह्वन्तर (२।४।०) मे उपदशा

ग्र.	रा	शु.	सू	च.	मं.	बु.	श.	गु.
मा.	३	५	१	३	२	४	२	४
दि.	३	१३	१६	२६	२	१२	१७	२७
घ	२०	२०	४०	४०	१३	१३	४६	४६
प.	०	०	०	०	२०	२०	४०	४०
वि	०	०	०	०	०	०	०	०

विंशोत्तरीदशाचक्रम्—

नयनोनजनुर्भतोऽर्कहृत् क्रमशोऽर्केन्दुकुजागुसूरयः।
शनिचन्द्रजकेतुभार्गवाः परिशेषात्तुदशाधिपाः ॥ ४३७ ॥

कुन्तला—अश्विन्यादि गणनया जन्मनक्षत्रस्य संख्यायां द्वाभ्यां संशोध्य नवभिः भक्तेसति एकादिशेषक्रमेण सू, च, मं, रा, गु, श, बु, के, शु, ग्रहाणां दशा भवति। एवमेव दशाधिपापि विज्ञेयम्। भुक्तभोग्यएवं अन्तर्दशायोगिनीदशावदेव बोध्यम्।

ज्योति—अश्विनी से जन्म नक्षत्र की जो संख्या हो उसमें २ घटा कर नव का भाग देने पर एकादि शेष क्रम से सू, च, मं, रा, श, बु, के, शु, ग्रहों की दशा होगी। इसी प्रकार दशाधिप भो जानना चाहिए। भुक्त भोग्य और अन्तर्दशा योगिनी दशा के तरह ही जानना चाहिए।

विंशोत्तरीदशाचक्र

सू.	च.	म.	रा.	गु.	श.	बु.	के.	शु.	ग्रह
कृ. उ. फा. उ. षा.	रो. ह. श्र.	मृ. चि. ध.	आ. स्वा. शत.	पुन. विशा. पू. भा.	पुष्य. अनु. उ. भा.	श्ले. ज्ये. रे.	म. मू. अ.	पू. फा. पू. षा. भर.	नक्षत्र
६	१०	७	१८	१६	१९	१७	७	२०	वर्ष

अन्तर्दशासाधनन्—

दशा दशाहता कार्या दशभि भागमाहरेत्।
यल्लब्धं सो भवेन्मासस्त्रिशन्निघ्नं दिनं भवेत् ॥ ४३८ ॥

जिस ग्रह की महादशा से जिस ग्रह की अन्तर्दशा अभीष्ट हो उस दोनों ग्रहों के महादशा वर्ष का परस्पर गुणा कर १० का भाग देने पर लब्धि मास तथा शेष को ३० से गुणाकर पुनः १० का भाग देने पर दिन होता है।

उदाहरण—सूर्य की महादशा में सूर्यादि ग्रहों का अन्तर ज्ञात करना है।

अतः $\frac{६×६}{१०} = \frac{३६}{१०} =$ = १८०(१८ दिन
१०)३६(३ $\frac{१०}{८०}$
$\frac{३०}{६×६०} =$ ८०

अतः सूर्य का अन्तर ३ मास १८ दिन हुआ।

इसी प्रकार सभी ग्रहों की अन्तर दशा निकल आयेगी।

सूर्यान्तर्दशा

सू.	चं.	म	रा.	बृ.	श.	बु.	के.	शु.	दशा
०	०	०	०	०	०	०	०	१	वर्ष
३	६	४	१०	९	११	१०	४	०	मास
१८	०	६	२४	१८	१२	६	६	०	दिन

चन्द्रान्तर्दशा

च.	म.	रा.	बृ.	श.	बु.	के	शु.	सू.	दशा
०	०	१	१	१	१	०	१	०	वर्ष
१०	७	६	४	७	५	७	८	६	मास
०	०	०	०	०	०	०	०	०	दिन

भौमान्तर्दशा

मं.	रा.	बृ.	श.	बु	के.	शु.	सू	चं.	दशा
०	१	०	१	०	०	१	०	०	वर्ष
४	०	११	१	११	४	२	४	७	मास
२७	१८	६	९	२७	२७	०	६	०	दिन

राह्वन्तर्दशा

रा.	बृ.	श.	बु.	के.	शु.	सू.	चं.	मं.	दथा
२	२	२	५	१	३	०	१	१	वर्ष
८	४	१०	६	०	०	१०	६	०	मास
१२	२४	६	१८	१८	०	२४	०	१८	दिन

गुर्व्वन्तर्दशा

बृ.	श.	बू.	के.	शु	मू.	चं.	मं.	रा.	दशा
२	२	२	०	२	०	१	०	२	वर्ष
१	६	३	११	८	९	४	११	४	मास
१८	१२	६	६	०	१८	०	६	२४	दिन

शन्यन्तर्दशा

श.	बु.	के.	शु	सू.	चं	मं.	रा.	बृ.	दशा
३	२	१	३	०	१	१	२	२	वर्ष
०	८	१	२	११	७	१	१०	६	मास
३	९	९	०	१२	०	९	६	१२	दिन

बुधान्तर्दशा

बु.	के.	शु.	सू.	च.	मं	रा.	बृ.	श.	दशा
०	०	२	०	१	०	२	२	२	वर्ष
४	११	१०	१०	५	११	६	३	८	मास
२७	२७	०	६	०	२७	१८	६	९	दिन

केत्वन्तर्दशा

के.	शु.	सू.	चं.	मं.	रा.	बृ.	श.	बु.	दशा
०	१	०	०	०	१	०	१	०	वर्ष
४	२	४	७	४	०	११	१	११	मास
२७	०	६	०	२७	१८	६	९	२७	दिन

शुक्रान्तर्दशा

शु.	सू.	च.	मं.	रा.	बृ.	शु.	बु.	के.	दशा
३	१	१	१	३	२	३	२	१	वर्ष
४	०	८	२	०	८	२	१०	२	मास
०	०	०	०	०	०	०	०	०	दिन

उपदशा (प्रत्यन्तर) साधनम्—

स्वान्तर्दशाद्युवृन्दं च हन्यात् स्वस्वब्दैर्ग्रहस्य च ।
विंशोत्तरशतेनाप्तं घस्राघट्योऽवशेषकम् ॥ ४३९ ॥

कुन्तला—सुगमः

ज्योति—अन्तरदशा को दिनात्मक बनाकर जिस ग्रह की उपदशा (प्रत्यन्तर्दशा) ज्ञात करनी हो उसमें महादशा वर्ष से गुणा कर १२० वर्ष से भाग देने पर दिन, घटी, पल में उपदश (प्रत्यन्तर्दशा) का मान होता है।

उदाहरण—सूर्य की महादशा एवं सूर्य और चन्द्रमा की अन्तर्दशा में दोनों की उपदशा (प्रत्यन्तर) ज्ञात करनी है।

सूर्य ३ मास १८ दिन।

दिनात्मक $३ \times ३० + १८ = १०८$

$\frac{१०८ \times ६}{१२०}$ = लब्धि ५ दिन २४ घटी सूर्यान्तर में सूर्य की उपदशा (प्रत्यन्तर्दशा) हुई।

चन्द्रान्त = ६ मास। $६ \times ३० = १८०$ दिनात्मक

$\frac{१८० \times १०}{१२०} = \frac{१८०}{१२} =$ १२) १८० (१५
१२
६०
६०
×

अतः चन्द्रान्तर में चन्द्र की उपदशा (प्रत्यन्तर्दशा) १५ दिन होती है।

इस प्रकार सूर्यादि सभी ग्रहों में उपदशा (प्रत्यन्तर्दशा) चक्र दिए जा रहे हैं।

विंशोत्तरी सूर्यं महादशा वर्षं ६

सूर्यान्तर (०।३।१८) में				चन्द्रान्तर (०।६।०) में				भौमान्तर (०।४।६) में			
उपदशा				उपदशा				उपदशा			
ग्र.	मा०	दि०	घ०	ग्र.	मा०	दि०	घ०	ग्र.	मा०	दि०	घ०
सू.	०	५	२४	चं.	०	१५	०	मं.	०	७	२१
चं.	०	९	०	मं.	०	१०	३०	रा.	०	१८	५४
मं.	०	६	१८	रा.	०	२७	०	गु.	०	१६	४८
रा.	०	१६	१२	गु.	०	२४	०	श.	०	१९	५७
गु.	०	१४	२४	श.	०	२८	३०	बु.	०	१७	५१
श.	०	१७	६	बु.	०	२५	३०	के.	०	७	२१
बु.	०	१५	१८	के.	०	१०	३०	शु.	०	२१	०
के.	०	६	१८	शु.	१	०	०	सू.	०	६	१८
शु.	०	१८	०	सू.	०	९	०	चं.	०	१०	३०

राह्वन्तर (०।१०।२४) में				गुर्वन्तर (०।९।१८) म				शन्यन्तर (०।११।१२) में			
उपदशा				उपदशा				उपदशा			
ग्र.	मा०	दि०	घ०	ग्र.	मा०	दि०	घ०	ग्र.	मा०	दि०	घ०
रा.	१	१८	३६	गु.	१	८	२४	श.	१	२४	९
गु.	१	१३	१२	श.	१	१५	३६	बु.	१	१८	२७
श.	१	२१	१८	बु.	१	१०	४८	के.	०	१९	५७
बु.	१	१५	५४	के.	०	१६	४८	शु.	१	२७	०
के.	०	१८	५४	शु.	१	१८	०	सू.	०	१७	६
शु.	१	२४	०	सू.	०	१४	२४	च.	०	२८	३०
सू.	०	१६	१२	चं.	०	२४	०	मं.	०	१९	५७
चं.	०	२७	०	मं.	०	१६	४८	रा.	१	२१	१८
मं.	०	१८	५४	रा.	१	१३	१२	गु.	१	१५	३६

बुधान्तर (०।१०।६) में				केत्वन्तर (०।४।६) में				शुक्रान्तर (१।०।०) में			
उपदशा				उपदशा				उपदशा			
ग्र.	मा०	दि०	घ०	ग्र.	मा०	दि०	घ०	ग्र.	मा०	दि०	घ०
बु.	१	१३	२१	के.	०	७	२१	शु.	२	०	०
के.	०	१७	५१	शु.	०	२१	०	सू.	०	१८	०
शु.	१	२१	०	सू.	०	६	१८	चं.	१	०	०
सू.	०	१५	१८	चं.	०	१०	३०	मं.	०	२१	०
चं.	०	२५	३०	मं.	०	७	२१	रा.	१	२४	०
मं.	०	१७	५१	रा.	०	१८	५४	गु.	१	१८	०
रा.	१	१५	५४	गु.	०	१६	४८	श.	१	२७	०
गु.	१	१०	४८	श.	०	१९	५७	बु.	१	२१	०
श.	१	१८	२७	बु.	०	१७	५१	के.	०	२१	०

विंशोत्तरो चन्द्र महादशा वर्षं १०

चन्द्रान्तग (०।१०।०) में उपदशा				भौमान्तर (०।७।०) में उपदशा				राह्वन्तर (१।६।०) में उपदशा			
ग्र.	मा०	दि०	घ०	ग्र.	मा०	दि०	घ०	ग्र.	मा०	दि०	घ०
चं.	०	२५	०	मं.	०	१२	१५	रा.	२	२१	०
मं.	०	१७	३०	रा.	१	१	३०	गु.	२	१२	०
रा.	१	१५	०	गु.	०	२८	०	श.	२	२५	३०
गु.	१	१०	०	श.	१	३	१५	बु.	२	१६	३०
श.	१	१७	३०	बु.	०	२९	४५	के.	१	१	३०
बु.	१	१२	३०	के.	०	१२	१५	शु.	३	०	०
के.	०	१७	३०	शु.	१	५	०	सू.	०	२७	०
शु.	१	२०	०	सू.	०	१०	३०	चं.	१	१५	०
र.	०	१५	०	चं.	०	१७	३०	मं.	१	१	३०

गुर्वन्तर (१।४।०) में उपदशा				शन्यन्तर (१।७।०) में उपदशा				वुधान्तर (१।५।०) में उपदशा			
ग्र.	मा०	दि०	घ०	ग्र.	मा०	दि०	घ०	ग्र.	मा०	दि०	घ०
गु.	२	४	०	श.	३	०	१५	बु.	२	१२	१५
श.	२	१६	०	बु.	२	२०	४५	के.	०	२९	४५
बु.	२	८	०	के.	१	३	१५	शु.	२	२५	०
के.	०	२८	०	शु.	३	५	०	सू.	०	२५	३०
शु.	२	२०	०	सू.	०	२८	३०	चं.	१	१२	३०
सू.	०	२४	०	चं.	१	१७	३०	मं.	०	२९	४५
चं.	१	१०	०	मं.	१	३	१५	रा.	२	१६	३०
मं.	०	२८	०	रा.	२	२५	३०	गु.	२	८	०
रा.	२	१२	०	गु.	२	१६	०	श.	२	२०	४५

केत्वन्तर (०।७।०) में उपदशा				शुक्रान्तर (१।८।०) में उपदशा				सूर्यान्तर (०।६।०) मे उपदशा			
ग्र.	मा०	दि०	घ०	ग्र.	मा०	दि०	घ०	ग्र.	मा०	दि०	घ०
के.	०	१२	१५	शु.	३	१०	०	सू.	०	९	०
शु.	१	५	०	सू.	१	०	०	चं	०	१५	०
सू.	०	१०	३०	चं.	१	२०	०	मं.	०	१०	३०
चं.	०	१७	३०	मं.	१	५	०	रा.	०	२७	०
मं.	०	१२	१५	रा.	३	०	०	गु.	०	२४	०
रा.	१	१	३०	गु.	२	२०	०	श.	०	२८	३०
गु.	०	२८	०	श.	३	५	०	बु.	०	२५	३०
श.	१	३	१५	बु.	२	२५	०	के.	०	१०	३०
बु.	०	२९	४५	के.	१	५	०	शु.	१	०	०

विंशोत्तरी भौम महादशा वर्ष ७

भौमान्तर (०।४।२७) में उपदशा

ग्र.	मा.	दि.	घ.
मं.	०	८	३५
रा.	०	२२	३
गु.	०	१९	३६
श.	०	२३	१६
बु.	०	२०	५०
के.	०	८	३४
शु.	०	२४	३०
सू.	०	७	२१
चं.	०	१२	१५

राह्वन्तर (१।०।१८) में उपदशा

ग्र.	मा.	दि.	घ.
रा.	१	२६	४२
गु.	१	२०	२४
श.	१	२८	५१
बु.	१	२३	३३
के.	०	२२	३
शु.	२	३	०
सू.	०	१८	५४
चं.	१	१	३०
मं.	०	२२	३

गुर्वन्तर (०।११।६) में उपदशा

ग्र.	मा.	दि.	घ.
गु.	१	१४	४८
श.	१	२३	१२
बु.	१	१७	३६
के.	०	१९	३६
शु.	१	२६	०
सू.	०	१६	४८
चं.	०	२८	०
मं.	०	१९	३६
रा.	१	२०	२४

शन्यन्तर (१।१।९) में उपदशा

ग्र.	मा.	दि.	घ.	प.
श.	२	३	१०	३०
बु.	१	२६	३१	३०
के.	०	२३	१६	३०
शु.	२	६	३०	०
सू.	०	१९	५७	०
चं.	१	३	१५	०
मं.	०	२३	१६	३०
रा	१	२८	५१	०
गु.	१	२३	१२	०

बुधान्तर (०।११।२७) मे उपदशा

ग्र.	मा.	दि.	घ.	प.
बु.	१	२०	३४	३०
के.	०	२०	४९	३०
शु.	१	२९	३०	०
सू.	०	१७	५१	०
च.	०	२९	४५	०
मं.	०	२०	४९	३०
रा.	१	२३	३३	०
गु.	१	१७	३६	०
श.	१	२६	३१	३०

केत्वन्तर (०।४।२७) में उपदशा

ग्र.	मा.	दि.	घ.	प.
के.	०	८	३४	३०
शु.	०	२४	३०	०
सू.	०	७	२१	०
च.	०	१२	१५	०
मं.	०	८	३४	३०
रा.	०	२२	३	०
गु.	०	१९	३६	०
श.	०	२३	१६	३०
बु.	०	२०	४९	३०

शुक्रान्तर (१।२।०) में उपदशा

ग्र.	मा.	दि.	घ.
शु.	२	१०	०
सू.	०	२१	०
चं.	१	५	०
मं.	०	२४	३०
रा.	२	३	०
गु.	१	२६	०
श.	२	६	३०
बु.	१	२९	३०
के.	०	२४	३०

सूर्यान्तर (०।४।६) मे उपदशा

ग्र.	मा.	दि.	घ.
सू.	०	६	१८
चं.	०	१०	३०
मं.	०	७	२१
रा.	०	१८	५४
गु.	०	१६	४८
श.	०	१९	५७
बु.	०	१७	५१
के.	०	७	२१
शु.	०	२१	०

चन्द्रान्तर (०।७।०) में उपदशा

ग्र.	मा.	दि.	घ.
च.	०	१७	३०
मं.	०	१२	१५
रा.	१	१	३०
गु.	०	२८	०
श.	१	३	१५
बु.	०	२९	४५
के.	०	१२	१५
शु.	१	५	०
सू.	०	१०	३०

विंशोत्तरी राहु महादशा वर्ष १८

राह्वन्तर (२।८।१२) में उपदशा

ग्र.	मा.	दि.	घ.
रा.	४	२५	४८
गु.	४	९	३६
श.	५	३	५४
बु.	४	१७	४२
के.	१	२६	४२
शु.	५	१२	०
सू.	१	१८	३६
चं.	२	२१	०
मं.	१	२६	४२

गुर्वन्तर (२।४।२४) में उपदशा

ग्र.	मा.	दि.	घ.
गु.	३	२१	१२
श.	४	१६	४८
बु.	४	२	२४
के.	१	२०	२४
शु.	४	२४	०
सू.	१	१३	१२
चं.	२	१२	०
मं.	१	२०	२४
रा.	४	९	३६

शन्यन्तर (३।१०।६) में उपदशा

ग्र.	मा.	दि.	घ.
श.	५	१२	२७
बु.	४	२५	२१
के.	१	२९	५१
शु.	५	२१	०
सू.	१	२१	१८
चं.	२	२५	३०
मं.	१	२९	५१
रा.	५	३	५४
गु.	४	१६	४८

बुधान्घतर (२।६।१८) में उपदशा

ग्र.	मा.	दि.	घ.
बु.	४	१०	३
के.	१	२३	३३
शु.	५	३	०
सू.	१	१५	५४
चं.	२	१६	३०
मं.	१	२३	३३
रा.	४	१७	४२
गु.	४	२	२४
श.	४	२५	२१

केत्वन्तर (१।०।१८) में उपदशा

ग्र.	मा.	दि.	घ.
के.	०	२२	३
शु.	२	३	०
सू.	०	१८	५४
चं.	१	१	३०
मं.	०	२२	३
रा.	१	२६	४२
गु.	१	२०	२४
श.	१	२९	५१
बु.	१	२३	३३

शुक्रान्तर (३।०।०) में उपदशा

ग्र.	मा.	दि.	घ.
शु.	६	०	०
सू.	१	२४	०
चं.	३	०	०
मं.	२	३	०
रा.	५	१२	०
गु.	४	२४	०
श.	५	२१	०
बु.	५	३	०
के.	२	३	०

सूर्यन्तिर (०।१०।२५) में उपदशा

ग्र.	मा.	दि.	घ.
सू.	०	१६	१२
चं.	०	२७	०
मं.	०	१८	५४
रा.	१	१८	३६
गु.	१	११	१२
श.	१	२१	१८
बु.	१	१५	५४
के.	०	१८	५४
शु.	१	२४	०

चन्द्रान्तर (१।६।०) में उपदशा

ग्र.	मा.	दि.	घ.
चं.	१	१५	०
मं.	१	१	३०
रा.	२	२१	०
गु.	२	१२	०
श.	२	२५	३०
बु.	२	१६	३०
के.	१	१	३०
शु.	३	०	०
सू.	०	२७	०

भौमान्तर (१।०।१८) में उपदशा

ग्र.	मा	दि.	घ.
मं.	०	२२	३
रा.	१	२६	४२
गु.	१	२०	२४
श.	१	२९	५१
बु.	१	२३	३३
के.	०	२२	३
शु.	२	३	०
सू.	०	१८	५४
चं.	१	१	३०

विंशोत्तरी गुरुमहादशा वर्ष १६

गुर्वन्तर (२।१।१८) में उपदशा				शन्यन्तर (२।६।१२) में उपदशा				बुधान्तर (२।३।६) में उपदशा			
ग्र.	मा०	दि०	घ०	ग्र.	मा०	दि०	घ०	ग्र.	मा०	दि०	घ०
गु.	३	१२	२४	शु.	४	२४	२४	बु.	३	२५	३६
श.	४	१	३६	बु.	४	९	१२	के.	१	१७	३६
बु.	३	१८	४८	के.	१	२३	१२	शु.	४	१६	०
के.	१	१४	४८	शु.	५	२	०	सू.	१	१०	४८
शु.	४	८	०	सू.	१	१५	३६	चं.	२	८	०
सू.	१	८	२४	च.	२	१६	०	मं.	१	१७	३६
चं.	२	४	०	मं.	१	२३	१२	रा.	४	२	२४
मं.	१	१४	४८	रा.	४	१६	४८	गु.	३	१८	४८
रा.	३	२५	१२	शु.	४	१	३६	श.	४	९	१२

केत्वन्तर (०।११।६) में उपदशा				शुक्रान्तर (२।८।०) में उपदशा				सूर्यन्तिर (०।९।१८) मे उपदशा			
ग्र.	मा०	दि०	घ०	ग्र.	मा०	दि०	घ०	ग्र.	मा०	दि०	घ०
के.	०	१९	३६	शु.	५	१०	०	सू.	०	१४	२४
शु.	१	२६	०	सू.	१	१८	०	चं.	०	२४	०
सू.	०	१६	४८	चं.	२	२०	०	मं.	०	१६	४८
चं.	०	२८	०	मं.	१	२६	०	रा.	१	१३	१२
मं.	०	१९	३६	रा.	४	२४	०	गु.	१	८	२४
रा.	१	२०	२४	गु.	४	८	०	श.	१	१५	३६
गु.	१	१४	४८	श.	५	२	०	बु.	१	१०	४८
श.	१	२३	१२	बु.	४	१६	०	के.	०	१६	४८
बु.	१	१७	३६	के.	१	२६	०	शु.	१	१८	०

चन्द्रान्तर (१।४।०) मे उपदंशा				भौमान्तर (०।११।६) में उपदशा				राह्वान्तर (२।४।२४) मे उपदशा			
ग्र.	मा०	दि०	घ०	ग्र.	मा०	दि०	घ०	ग्र.	मा०	दि०	घ०
चं.	१	१०	०	मं.	०	१९	३६	रा.	४	९	३६
मं.	०	२८	०	रा.	१	२०	२४	गु.	३	२५	१२
रा.	२	१२	०	गु.	१	१४	४८	श.	४	१६	४८
गु.	२	४	०	श.	१	२३	१२	बु.	४	२	२४
श.	२	१६	०	बु.	१	१७	३६	के.	१	२०	२४
बु.	२	८	०	के.	०	१९	३६	शु.	४	२४	०
के.	०	२८	०	शु.	१	२६	०	सू.	१	१३	१२
शु.	२	२०	०	सू.	०	१६	४८	चं.	२	१२	०
सू.	०	२४	०	चं.	०	२८	०	मं.	१	२०	२४

विशोत्तरी शनिमहादशा वर्ष १७

शन्यन्तर (३।०।३) में उपदशा

ग्र.	मा.	दि.	घ.	प.
श.	५	२१	२८	३०
बु.	५	३	२५	३०
के.	२	३	१०	३०
शु.	६	०	३०	०
सू.	१	२४	९	०
च.	३	०	१५	०
मं.	२	३	१०	३०
रा.	५	१२	२७	०
गु.	४	२४	२४	०

बुधान्तर (२।८।९) में उपदशा

ग्र.	मा.	दि.	घ.	प.
बु.	४	१७	३६	३०
के.	१	२६	३१	३०
शु.	५	११	३०	०
सू.	१	१८	२७	०
चं.	२	२०	४५	०
मं.	१	२६	३१	३०
रा.	४	२५	३१	०
गु.	४	९	१२	०
श.	५	३	२५	३०

केत्वन्तर (१।१।९) में उपदशा

ग्र.	मा.	दि.	घ.	प.
के.	०	२३	१६	३०
शु.	२	६	३०	०
सू.	०	१९	५७	०
चं.	१	३	१५	०
मं.	०	२३	१६	३०
रा.	१	२९	५१	०
गु.	१	२३	१२	०
श.	२	३	१०	३०
बु.	१	२६	३१	३०

शुक्रान्तर (३।२।०) मे उपदशा

ग्र.	मा०	दि०	घ०
शु.	६	१०	०
सू.	१	२७	०
चं.	३	५	०
मं.	२	६	३०
रा.	५	२१	०
गु.	५	२	०
श.	६	०	३०
बु.	५	११	३०
के.	२	६	३०

सूर्यान्तर (०।११।१२) मे उपदशा

ग्र	मा.	दि.	घ.
सू.	०	१७	६
च	०	२८	३०
मं.	०	१९	५७
रा.	१	२१	१८
गु.	१	१५	३६
श.	१	२४	९
बु.	१	१८	२७
के	०	१९	५७
शु.	१	२७	०

चन्द्रान्तर (१।७।०) मे उपदशा

ग्र.	मा.	दि.	घ.
चं.	१	१७	३०
मं.	१	३	१५
रा.	२	२५	३०
गु.	२	१६	०
श.	३	०	१५
बु.	२	२०	४५
के.	१	३	१५
शु.	३	५	०
सू.	०	२८	३०

भौमान्तर (१।१।९) म उदशा

ग्र.	मा.	दि.	घ.	प
मं.	०	२३	१६	३०
रा.	१	२९	५१	०
गु.	१	२३	१२	०
श.	२	३	१०	०
बु.	२	२६	३१	३०
के.	०	२३	१६	३०
शु.	२	६	३०	०
सू.	०	१९	५७	०
चं.	१	३	१५	०

राह्वन्तर (२।१०।६) में उपदशा

ग्र.	मा.	दि.	घ.
रा.	५	३	५४
गु.	४	१६	४८
श.	५	१२	२७
बु.	४	२५	२१
के.	१	२९	५१
शु.	५	२१	०
सू.	१	२१	१८
च.	२	२५	३०
मं.	१	२९	५१

गुर्वन्तर (२।६।१२) में उपदशा

ग्र.	मा	दि.	घ.
गु.	४	१	३६
श.	४	२४	२४
बु.	४	९	१२
के.	१	२३	१२
शु.	५	२	०
सू.	१	१५	३६
चं.	२	१६	०
मं.	१	२३	१२
रा.	४	१६	४८

विंशोत्तरी बुध महादशा वर्ष १७

बुधान्तर (२।४।२७) में उफदशा

ग्र.	मा.	दि.	घ.	प.
बु.	४	२	४९	३०
के.	१	२०	३४	३०
शु.	४	२४	३०	०
सू.	१	१३	२१	०
चं.	२	१२	१५	०
मं.	१	२०	३४	३०
रा.	४	१०	३	०
गु.	३	२५	३६	०
श.	४	१७	१६	३०

केत्वन्तर (०।११।२७) में उपदशा

ग्र.	मा.	दि.	घ.	प.
के.	०	२०	४९	३०
शु.	१	२९	३०	०
सू.	०	१७	५१	०
चं.	०	२९	४५	०
मं.	०	२०	४९	३०
रा.	१	२३	३३	०
गु.	१	१७	३६	०
शु.	१	२६	३१	३०
बु.	१	२०	३४	३०

शुक्रान्तर (२।१०।०) में उपदशा

ग्र.	मा.	दि.	घ.
शु.	५	२०	०
सू.	१	२१	०
चं.	२	२५	०
मं.	१	२९	३०
रा.	५	३	०
गु.	४	१६	०
श.	५	११	३०
बु.	४	२४	३०
के.	१	२९	३०

सूर्यान्तर (०।१०।६) में उपदशा

ग्र.	मा.	दि.	घ.
सू.	०	१५	१८
चं.	०	२५	३०
मं.	०	१७	५१
रा.	१	१५	५४
गु.	१	१०	४८
श.	१	१८	२७
बु.	१	१३	२१
के.	०	१७	५१
शु.	१	२१	०

चन्द्रान्तर (१।५।०) में उपदशा

ग्र.	मा.	दि.	घ.
चं.	१	१२	३०
मं.	०	२९	४५
रा.	२	१६	३०
गु.	२	८	०
श.	२	२०	४५
बु.	२	१२	१५
के.	०	२९	४५
शु.	२	२५	०
सू.	०	२५	३०

भौमान्तर (०।११।२७) में उपदशा

ग्र.	मा.	दि.	घ.	प.
मं.	०	२०	४९	३०
रा.	१	२३	३३	०
गु.	१	१७	३६	०
श.	१	२६	३१	३०
बु.	१	२०	३४	३०
के.	०	२०	४९	३०
शु.	१	२९	३०	०
सू.	०	१७	५१	०
चं.	०	२९	४५	०

राह्वन्तर (२।६।१८) में उपदशा

ग्र.	मा.	दि.	घ.
रा.	४	१७	४२
गु.	४	२	२४
श.	४	२५	२१
बु.	४	१०	३
के.	१	२३	३३
शु.	५	३	०
सू.	१	१५	५४
चं.	२	१६	३०
मं.	१	२३	३३

गुर्वन्तर (२।३।६) में उपदशा

ग्र.	मा.	दि.	घ.
गु.	३	१८	४८
श.	४	९	१२
बु.	३	२५	३६
के.	१	१७	३६
शु.	४	१६	०
सू.	१	१०	४८
चं.	२	८	०
मं.	१	१७	३६
रा.	४	२	२४

शन्यन्तर (२।८।९) में उपदशा

ग्र.	मा.	दि.	घ.	प.
श.	५	३	२५	३०
बु.	४	१७	१६	३०
के.	१	२६	३१	३०
शु.	५	११	३०	०
सू.	१	१८	२७	०
चं.	२	२०	४५	०
मं.	१	२६	३१	३०
रा.	४	२५	२१	०
गु.	४	९	१२	०

विशोत्तरी केतु महादशा वर्ष--७

केत्वन्तर (०।४।२७) में उपदशा

ग्र.	मा.	दि.	घ.	प.
के.	०	८	३४	३०
शु.	०	२४	३०	०
सू.	०	७	२१	०
चं.	०	१२	१५	०
मं.	०	८	३४	३०
रा.	०	२२	३	०
गु.	०	१९	३६	०
श.	०	२३	१६	३०
बु.	०	२०	४९	३०

शुक्रान्तर (१।२।०) मे उपदशा

ग्र.	मा.	दि	घ०
शु.	२	१०	०
सू.	०	२१	०
चं.	१	५	०
मं.	०	२४	३०
रा.	२	३	०
गु.	१	२६	०
श.	२	६	३०
बु.	१	२९	०
के.	०	२४	३०

सूर्यान्तर (०।४।६) मे उपदशा

ग्र.	मा.	दि.	घ.
सू.	०	६	१८
चं.	०	१०	३०
मं.	०	७	२१
रा.	०	१८	५४
गु.	०	१६	४८
श.	०	१९	५७
बु.	०	१७	५१
के.	०	७	२१
शु.	०	२१	०

चन्द्रान्तर (०।७।०) में उपदशा

ग्र.	मा.	दि.	घ.
चं.	०	१७	३०
मं.	०	१२	१५
रा.	१	१	३०
गु.	०	२८	०
श.	१	३	१५
बु.	०	२९	४५
के.	०	१२	१५
शु.	१	५	०
सू.	०	१०	३०

भौमान्तर (०।४।२७) में उपदशा

ग्र.	मा.	दि.	घ.	प.
मं.	०	८	३४	३०
रा.	०	२२	३	०
गु.	०	१९	३६	०
श.	०	२३	१६	३०
बु.	०	२०	४९	३०
के.	०	८	३४	३०
शु.	०	२४	३०	०
सू.	०	७	२१	०
चं.	०	१२	१५	०

राह्वन्तर (१।०।१८) में उपदशा

ग्र.	मा.	दि	घ
रा.	१	२६	४२
गु.	१	२०	२४
श.	१	२९	५१
बु.	१	२३	३३
के.	०	२२	३
शु.	२	३	०
सू.	०	१८	५४
चं.	१	१	३०
मं.	०	२२	३

गुर्वन्तर (०।११।६) में उपदशा

ग्र.	मा.	दि.	घ.
गु.	१	१४	४८
श.	१	२३	१२
बु.	१	१७	३६
के.	०	१९	३६
शु.	१	२६	०
सू.	०	१६	४८
चं.	०	२८	०
मं.	०	१९	३६
रा.	१	२०	२४

शन्यन्तर (१।१।९) मे उपदशा

ग्र.	मा.	दि.	घ.	प.
श.	२	३	१०	३०
बु.	१	२६	३१	३०
के.	०	२३	१६	३०
शु.	२	६	३०	०
सू.	०	१९	५७	०
चं.	१	३	१५	०
मं.	०	२३	१६	३०
रा.	१	२९	५१	०
गु.	१	२३	१२	०

बुधान्तर (०।११।२७) में उपदशा

ग्र.	मा.	दि.	घ.	प.
बु.	१	२०	३४	३०
के.	०	२०	४९	३०
शु.	१	२९	३०	०
सू.	०	१७	५१	०
चं.	०	२९	४५	०
मं.	०	२०	४९	३०
रा.	१	२३	३३	०
गु.	१	१७	३६	०
श.	१	२६	३१	३०

विंशोत्तरी शुक्र महादशा वर्ष २०

शुक्रान्तर (३।४।०)
में उपदशा

ग्र.	मा.	दि.	घ.
शु.	६	२०	०
सू.	२	०	०
चं.	३	१०	०
मं.	२	१०	०
रा.	६	०	०
गु.	५	१०	०
श.	६	१०	०
बु.	५	२०	०
के.	२	१०	०

सूर्यान्तर (१।०।०)
में उपदशा

ग्र.	मा.	दि.	घ.
सू.	०	१८	०
चं.	१	०	०
मं.	०	२१	०
रा.	१	२४	०
गु.	१	१८	०
श.	१	२७	०
बु.	१	२१	०
के.	०	२१	०
शु.	२	०	०

चन्द्रान्तर (१।८।०)
में उपदशा

ग्र.	मा.	दि.	घ.
चं.	१	२०	०
मं.	१	५	०
रा.	३	०	०
गु.	२	२०	०
श.	३	५	०
बु.	२	२५	०
के.	१	५	०
शु.	३	१०	०
सू.	१	०	०

भौमान्तर (१।२।०)
में उपदशा

ग्र.	मा.	दि.	घ.
मं.	०	२४	३०
रा.	२	३	०
गु.	१	२६	०
श.	२	६	३०
बु.	१	२९	३०
के.	०	२४	३०
शु.	२	१०	०
सू.	०	२१	०
चं.	१	५	०

राह्वन्तर (३।०।०)
में उपदशा

ग्र.	मा	दि.	घ.
रा.	५	१२	०
गु.	४	२४	०
श.	५	२१	०
बु.	५	३	०
के.	२	३	०
शु.	६	०	०
सू.	१	२४	०
चं.	३	०	०
मं.	२	३	०

गुर्वन्तर (२।८।०)
में उपदशा

ग्र.	मा.	दि.	घ.
गु.	४	८	०
श.	५	२	०
बु.	४	१६	०
के.	१	२६	०
शु.	५	१०	०
सू.	१	१८	०
चं.	२	२०	०
मं.	१	२६	०
रा.	४	२४	०

शन्यन्तर (३।२।०)
में उपदशा

ग्र.	मा.	दि.	घ०
श.	६	०	३०
बु.	५	११	३०
के.	२	६	३०
शु.	६	१०	०
सू.	१	२७	०
चं.	३	५	०
मं.	२	६	३०
रा.	५	२१	०
गु.	५	२	०

बुधान्तर (२।१०।०)
में उपदशा

प्र.	मा.	दि.	घ.
बु.	४	२४	३०
के.	१	२९	३०
शु.	५	२०	०
सू.	१	२१	०
चं.	२	२५	०
मं.	१	२९	३०
रा.	५	३	०
गु.	४	१६	०
श.	५	११	३०

केत्वन्तर (१।२।०)
में उपदशा

प्र.	मा.	दि.	घ.
के.	०	२४	३०
शु.	२	१०	०
सू.	०	२१	०
चं.	१	५	०
मं.	०	२४	३०
रा.	२	३	०
गु.	१	२६	०
श.	२	६	३०
बु.	१	२९	३०

अथ योगिनीदशाज्ञानम्—

स्वकीयं च भं रुद्रनेत्रैर्युतं तद्विजायाष्टभिर्भागमाहृत्यशेषात् ।
दशा मंगलादियदा शून्यशेषो दशा संकटाप्राणसन्देहकर्त्री ॥४३५॥

कुन्तला—जन्मनक्षत्रस्य संख्यायां त्रिभिः संयोज्य अष्टभिः भक्तेसति शेषक्रमेण मङ्गलादि दशा भवति। यदि शून्य शेषः स्याद् तदा संकटादि एकादशा ज्ञेयम् । सा दशा कष्टदात्रीदशा भवति ।

ज्योति—जन्म नक्षत्र में तीन युक्त करके आठ का भाग देने से मङ्गलादि की दशा होती है। यदि शून्य शेष बचे तो संकटादि की दशा होती है। जो कष्ट देने वाली होती है। जैसे किसी का जन्म उ० भा० में हो तो जन्म नक्षत्र संख्या $\frac{२६+३}{८}$=शेष ५। अर्थात् भद्रिका महादशा में जन्म हुआ।

अथ मङ्गलादिदशा क्रमः—

मंगला, पिंगला धान्या भ्रामरी भद्रिका तथा ।
उल्का सिद्धा संकटा च योगिन्याष्टदशाः स्मृता ॥ ४३६ ॥

'कुन्तला' एवं 'ज्योति' टीका मूलेनेव स्पष्टं भवति ।

अथ दशास्वामीज्ञानम्—

अथासामधीशाः क्रमान्मंगलायाः शशीतीक्ष्णभानुर्गुरुर्भूमिसूनुः ।
बुधसूर्यसूनुर्भृगुः सिंहिकायाः सुतः संकटायास्यदंतं च केतुः ॥४३७॥

कुन्तला—मङ्गलादि क्रमेण च, सू, बृ, मं, बु, श, शु, तथा संकटायाः राहुकेतु च उभौ स्वामिनो भवतः ।

ज्योति—निम्नलिखित चक्र से स्पष्ट है—

मं.	पि.	धा.	भ्रा.	भ.	उ.	सि.	सं.	योगिनी
चं.	सू.	बृ.	मं.	बु.	श.	शु.	रा. के.	स्वामी
१	२	३	४	५	६	७	८	वर्ष
आ. चि. श्र.	पुन. स्ती ध.	पु. वि. श.	श्ले. अनु. पू. भा.	मघा ज्ये. उ. भा. भरणी	पू. फा. मू. रे. कृ.	उ. फा. पू. षा. रो.	ह. उ. षा मृ.	नक्षत्र

योगिनी अन्तरदशा

षट्त्रिंशोर्विभजेद्दीनीकृतमथैकं द्वित्रिवेदेषु षट्।
सप्ताष्टघ्नदशा भवेयुरिति ता एवं दशान्तर्दशा ॥ ४३८ ॥

कुन्तला—सुगमः

ज्योति—योगिनी के महादशा को दिन वनाकर ३६ से भाग देने पर लब्धि अन्तरदशा होती है। जैसे मंगला में मंगला की अन्तरदशा ज्ञात करना हो तो मंगल १ वर्ष इसका १२ महीना को ३० से गुणा करने पर ३६० दिन ÷ ३६ = १० दिन अर्थात् मंगला में मंगला की अन्तरदशा १० दिन की होती है। दूसरा उदाहरण जैसे उल्का में उल्का का अन्तरदशा। उल्का का वर्ष ६ × १२=७२ माह × ३०=२१६० ÷ ३६=६० दिन अर्थात् ३ मास हुआ।

मङ्गलान्तर्दशाचक्र

मं.	पि.	धा.	भ्रा.	भ.	उ.	सि.	स.	दशा
०	०	०	०	०	०	०	०	वर्ष
०	०	१	१	१	२	२	२	मास
१०	२०	०	१०	१०	१०	१०	२०	दिन

पिङ्गलान्तर्दशाचक्र

पिं.	धा.	भ्रा.	भ.	उ.	सि.	सं.	मं.	दशा
०	०	०	०	०	०	०	०	वर्ष
१	२	२	३	४	४	५	०	मास
१०	०	१०	१०	०	२०	०	२०	दिन

धान्यान्तर्दशाचक्र

धा.	भ्रा.	भ.	उ.	सि.	सं.	मं.	पि	दशा
०	०	०	०	०	०	०	०	वर्ष
३	४	५	६	७	८	१	२	मास
२	०	०	०	०	०	०	०	दिन

भ्रामरीअन्तर्दशाचक्र

भ्रा.	भ.	उ.	सि.	स.	मं.	पि.	धा.	दशा
०	०	०	०	०	०	०	०	वर्ष
५	६	८	९	१०	१	२	४	मास
१०	२०	०	१०	२०	१०	२०	०	दिन

भद्रिकान्तर्दशाचक्र

भ.	उ.	सि.	सं	मं	पि.	भ.	भ्रा.	दशा
०	०	०	१	०	०	०	०	वर्ष
८	१०	११	१	१	३	५	६	मास
१०	०	२०	१०	२०	१०	०	२०	दिन

उल्कान्तर्दशाचक्र

उ.	सि.	सं.	मं.	यि.	धा.	भ्रा.	भ.	दशा
१	१	१	०	०	०	०	०	वर्ष
०	२	४	२	४	६	८	१०	मास
०	०	०	०	२	०	०	०	दिन

सिद्धान्तर्दशाचक्र

सि.	सं.	मं.	पि.	धा.	भ्रा.	भ.	उ.	दशा
१	१	०	०	०	०	०	१	वर्ष
४	६	२	४	७	९	१०	२	मास
१०	२०	१०	२०	०	१०	२०	१०	दिन

सङ्कटान्तर्दशाचक्र

सं.	म.	पि.	धा.	भ्रा.	भ.	उ.	सि.	दशा
१	०	०	०	०	१	१	१	वर्ष
९	२	५	८	१०	१	४	६	मास
१०	२०	०	०	१०	१०	०	२०	दिन

क्रूरग्रहदशायां च वहुशो जायते क्षतिः।
शुभग्रहदशायां नराणां सुखमादिशेत् ॥ ४४० ॥

कुन्तला—शुभग्रहस्य दशायां सुखम् तथा पापग्रहस्य दशायां अनेकानेक क्षतिः भवतीति बोध्यम्।

ज्योति—पापग्रह की दशा होने पर अनेक प्रकार की हानियाँ होती हैं। और शुभ ग्रह की दशा में पुरुषों को वहुत प्रकार के सुख प्राप्त होते हैं।

मातृकष्टविचारः—

लग्नाच्चतुर्थगः पापो यदि स्याद् वलवत्तरः।
तदामातृवधं कुर्यात् केन्द्रे चापरो यदि॥ ४४१ ॥
द्वादशे रिपुभावे च यदा पापग्रहो भवेत्।
तदा भातृवधं कुर्यादरिराशौ स्थितो यदि॥ ४४२ ॥

कुन्तला—यदि लग्नतः चतुर्थभावे वलवान् पापग्रहो भवेत् अथवा केन्द्रे अपरः पापग्रहः स्याद् तदापि मातुः मृत्युर्भवति।

ज्योति—पापग्रह वलवान् होकर यदि लग्न से चतुर्थभाव में स्थित हो अथवा केन्द्र में दूसरा पापग्रह हो तो माता की मृत्यु होती है।

द्वादशे रिपुभावे वा यदा पापग्रहो भवेत्।
तदा मातृवधं कुर्यादरिराशौ स्थितो यदि॥ ४४२ ॥

कुन्तला—लग्नात् द्वादशे षष्ठे वा पापग्रहः शत्रुराशौ भवेत्तदा मातुर्मृत्युर्भवति।

ज्योति—यदि लग्न से द्वादश या छठे भाव में पागग्रह शत्रु की राशि पर स्थित हो तो माता की मृत्यु होती हैं।

* * *

प्रश्नप्रकरणः

वृषसिंह वृश्चिकघटैर्विद्धिस्थानं गमागमौ न स्तः।
न मृतं न चापि नष्टं न रोगशान्तिर्न चाभिभवः ॥४४४॥

कुन्तला—वृष, सिंह, वृश्चिक, कुम्भ लग्नेषु प्रश्नो भवेत्तदा एकस्मिन् स्थाने प्रश्नकर्त्ता स्थितः स्यात्। गमना-गमन प्रश्नेऽपि न गमिष्यति, नागमिष्यातीति वाच्यम्। एवं मृत्यु, नष्टवस्तु, रोगशान्ति, पराजय इत्यादि प्रश्नेऽपि नैव स्यादिति वक्तव्यम्।

ज्योति—यदि प्रश्न के समय वृष, सिंह, वृश्चिक कुम्भ लग्न हो तो एक स्थान पर स्थित समझना चाहिए। गमनागमन विषय में प्रश्न हो तो गमन तथा आगमन नहीं हुआ है ऐसा कहना चाहिए। इसी प्रकार मरण प्रश्न में, किसी नष्ट वस्तु के प्रश्न में, रोग शान्ति के प्रश्न में, तथा पराजय प्रश्न में भी नकारात्मक ही उत्तर देना चाहिए।

तद्विपरीतं तु चरैर्द्विशरीरैर्मिश्रितं फलं वाच्यम्।
लग्नेन्द्वोर्वक्तव्यं शुभदृष्ट्या शोभनमतोऽन्यत् ॥ ४४५ ॥

कुन्तला—प्रश्न लग्ने चरैः = मेष, कर्क, तुला, मकर लग्नेषु प्रश्नो भवेत्तदा पूर्वोक्त फलस्य विपरीतं फलं बोध्यम्। यदि द्विशरीरैः = मिथुन, कन्या, धनु, मीन लग्नेषु प्रश्नो भवेत्तदा मिश्रितं फलं वाच्यम्। एवं तारकालिक चन्द्रोपरि यदि शुभग्रहस्य दृष्टिः स्यात् तदा फलं शुभं तथा शुभग्रहाः पापग्रहापि पश्यन्ति तदा मिश्रितं फलं भवति।

ज्योति—यदि प्रश्न के समय यदि चर अर्थात् मेष, कर्क, तुला तथा मकर लग्न हो तो पूर्वोक्त फल के विपरीत फल होता है। प्रश्न के समय यदि द्विशरीर अर्थात् मिथुन, कन्या, धनु, मीन राशि हो तो मिश्रित फल होता है तात्कालिक चन्द्रमा पर शुभ ग्रह की दृष्टि हो तो शुभ फल और दोनों को शुभग्रह देखते हो तो मध्यम फल होता है।

लाभ प्रश्न विचारः—

त्रिपञ्चलाभास्तभयेषु सौम्ये लाभप्रदा नेष्टफलाश्च पापाः।
तुलाथ कन्या मिथुनं घटश्च नृराशयस्तेषु शुभं वदन्ति ॥४४६॥

कुन्तला—प्रश्नलग्नात् ३, ५, ११, ७ स्थानेषु कोऽपि शुभग्रहः भवेत्तदा प्रश्नकर्त्तुः लाभं प्राप्नोति। एवञ्च यदि एषु स्थानेषु पापाः स्युस्तदा शुभदायको न भवति। तुला, कन्या, मिथुन, कुम्भ एषु नरराशीषु कोऽपि शुभग्रहो भवेत्तदा प्रष्टुः कल्याणं भवतीति वाच्यम्।

ज्योति—प्रश्नलग्न से तृतीय, पञ्चम, एकादश तथा सप्तम स्थान में कोई शुभग्रह हों तो प्रश्नकर्त्ता को लाभ होता है। इन्ही स्थानों में यदि पापग्रह हों तो शुभदायक नहीं होता है। तुला, कन्या, मिथुन तथा कुम्भ इन नरराशियों पर यदि कोई शुभग्रह हो तो पूछने वाले का कल्याण होता है।

इन्दु द्विसप्तदशमायरिपुत्रिसंस्थं
पश्येद् गुरुः शुभफलं प्रमदाकृतं स्यात्।
लग्नार्थ धर्मसुतनैधनगाश्च पापाः
कार्यार्थनाशभयदाः शुभदाः शुभाश्च ॥ ४४७ ॥

कुन्तला—द्वि = द्वितीये, सप्तमे, दशमे, एकादशे, षष्ठे, तृतीये च एषु स्थानेषु स्थितचन्द्रं यदि गुरुः पश्यति तदा प्रष्टुः, प्रमदाकृतं = स्त्रीसम्बन्धी शुभफलं भवति। एवञ्च लग्ने द्वितीये, नवमे पञ्चमे तथाष्टमे एषु स्थानेषु पापाः स्युस्तदा प्रश्नकर्त्तुः कार्यस्य अर्थस्य च नाशं कुर्वन्तिः, तथा च भयप्रदा अपि भवन्ति। एषु शुभाः स्युस्तदा शुभफलप्रदाः भवन्ति।

ज्योति—द्वितीय, सप्तम, दशम, एकादश, षष्ठ तथा तृतीय स्थानों में स्थित चन्द्रमा को गुरु देखता हो तो प्रश्नकर्त्ता को स्त्रीकृत शुभ फल मिलता है और लग्न, द्वितीय नवम, पञ्चम तथा अष्टम स्थानों पर पापग्रह हों तो प्रश्नकर्त्ता के कार्य और अर्थ का नाश करके भय प्रदान करते हैं। यदि इन स्थानों में शुभग्रह हों तो शुभ फल दायक होते हैं।

पापैर्लग्नोपगतैः शरीरपीडां विनिर्दिशेत्कलहम्।
सुखस्थैः सुखनाशं गृहभेदं बन्धु विग्रहं च वदेत् ॥ ४४८॥

कुन्तला—प्रश्नकाले प्रश्नलग्ने पापास्युस्तदा शरीर पीड़ा, कलहं च भवति। यदि चतुर्थ भावे पापास्युस्तदा प्रश्नकर्त्तुः सुखनाशं गृहभेदं, बन्धुविग्रहं च भवति।

ज्योति—प्रश्न के समय यदि प्रश्नलग्न में पापग्रह हों तो प्रश्नकर्त्ता को शरीर पीड़ा होती है और आपस में कलह होता है। चतुर्थ भाव में पापग्रह हो तो प्रश्नकर्त्ता का सुखनाश तथा गृहभेद और बन्धुओं से विगाड़ होता है।

अस्ते गमनविरोधः कर्मस्थैः प्रवासनाशश्च।
शुभदृष्टि संयोगात् प्रश्नकृच्छ्राद्वदेत् सिद्धिम् ॥ ४४९ ॥

कुन्तला—सप्तमस्थः पापग्रहः गमने बाधामुत्पादयति। यदि पापग्रहः दशमस्थो भवेत्तदा प्रवासवाधाकरोति। यदि शुभग्रहाणां दृष्टि संयोगाद् वा प्रष्टुः कार्यस्य कष्टेन सिद्धिर्भवतीति वाच्यम्।

ज्योति—यदि कोई पापग्रह सप्तम भाव में स्थित हो तो वह गमन में विरोध डालता है। पापग्रह यदि दशम भाव में स्थित हो तो प्रवास का नाश करता है। पूर्वोक्त स्थानों पर यदि शुभ ग्रहों की दृष्टि हो तो अथवा संयोग हो तो कठिनता से कार्य की सिद्धि होती है।

प्रवासचिन्ताविचारः—

दूरगतस्यागमनं सुतधनसहजस्थितैर्ग्रहैर्लग्नात्।
सौम्यैर्नष्टप्राप्ति लघ्वागमनं गुरुसिताभ्याम् ॥ ४५० ॥

कुन्तला—प्रश्नलग्नात् पञ्चमे, द्वितीये तृतीये भावेषु स्थिताः सूर्यादि ग्रहाः भवेयुः तदा दूरदेशागतस्यागमनं भवति। उक्तःस्थानेषु शुभग्रहाः स्युस्तदा नष्टस्यप्राप्तिः यदि गुरुशुक्रौ भवतः तदा प्रवासीशीघ्रमागच्छति।

ज्योति—प्रश्नलग्न से यदि पञ्चम तथा द्वितीय तृतीय स्थानों पर सूर्यादि ग्रह हों तो दूरदेश गए हुए प्रवासी का आगमन होता है। इन स्थानों पर यदि शुभग्रह हों तो नष्ट वस्तु यथा बिछुरे पुरुष की प्राप्ति होती है। इन स्थानों पर बृहस्पति तथा शुक्र हों तो प्रवासी का शीघ्र ही आगमन होता है।

द्वितीयकेन्द्रतोऽभ्येति यदा खेटस्तदागमः।
अपि योऽस्त गृहं दृष्ट्वा वूयादिति प्रशंकितम् ॥ ४५१ ॥

कुन्तला—केन्द्रात् द्वितीयस्थाने यदि कोऽपि ग्रहः समायाति तदा प्रवासी आगच्छतीति वाच्यम्। परन्तु सप्तभावस्थग्रहं पश्यति तदा आगने संदेहो भवति।

ज्योति—केन्द्र से चल कर जब द्वितीय स्थान में कोई ग्रह आवे तो भी विदेशी का आगमन होता है। परन्तु सप्तम भाव में स्थित किसी ग्रह को देखे तो आगमन में संदेह कहना चाहिए।

पञ्चमेशोऽथ लग्नेशो विषमर्क्षगतो यदा।
पुत्रजन्म प्रदो ज्ञेयो कन्यकानां समराशिगः ॥ ४५२ ॥

कुन्तला—यदि पञ्चमेशः लग्नेशश्च विषमराशौ विद्यमाने पुत्रजन्म भवतीति कथनीयम्। यदि समराशौ भवेतां तदा कन्योत्पत्तिर्भवति।

ज्योति—यदि पञ्चम भाव का स्वामी और लग्नेश दोनो विषम राशियों पर स्थित हो तो पुत्रजन्म होता है। पञ्चम-भाव का स्वामी और लग्नपति दोनों समराशियों में हों तो कन्या की उत्पत्ति होती है।

सुताधिपो नुराशिस्थः पुंराशिस्थो विलग्नपः :
विशितः पुत्रदौ प्रोक्तौ युग्मराशौ च कन्यकाः ॥ ४५३ ॥

कुन्तला—यदि पञ्चमेशः विषमराशौ विद्यमाने तथा लग्नेशः विषमराशौ स्थित्वा स्वस्थानं पश्यति तदा पुत्रोत्पत्तिर्वाच्यम्। यदि पञ्चमेशः तथा लग्नपतिः समराशौ विद्यमाने स्व-स्व स्थानं पश्यतः तदा कन्योत्पत्तिः भवति।

ज्योति—यदि पञ्चम भावपति विषमराशि में स्थित हो और लग्नेश विषमराशि में स्थित होकर अपने-अपने स्थान को देखते हो तो पुत्र होता है। और पञ्चमभाव पति तथा लग्नपति समराशि में स्थित होकर अपने-जपने स्थानों को देखते हो तो कन्या उत्पन्न होती है।

लग्नाद्विषमोपगतः शनैश्चरः पुत्रजन्मदो भवति।
जीवरविलग्न चन्द्रमसो विषमोपरगता नरं कुर्युः ॥४५४॥

कुन्तला—शनैश्चरः लग्नात् विषमोपगतः—विषमभावस्थितः सन् पुत्रोत्पत्तिर्भवति। गुरुः, सूर्यः, लग्नस्थचन्द्रश्च विषमराशौ विद्यमानेऽपि पुजन्म भवतीति वाच्यम्।

ज्योति—यदि शनीश्चर लग्न से विषमभाव में स्थित हो तो पुत्र का जन्म होता है। वृहस्पति, सुर्यं, और लग्नस्थ चन्द्र विषयराशि में स्थित हो तो पुत्र का जन्म होता है।

गर्भिणीनामशुक्लादितिथिभिर्मुनिभिर्युतम्।
रामैर्भागः सुता द्वाभ्यां सुतश्चैकेन खेन वा ॥ ४५५ ॥

कुन्तला—गर्भिणीनामाक्षरं शुक्लपक्षस्य तिथिसंख्या संयोज्य पुनः सप्त युक्तम्। यत्फलं तन्मध्ये त्रिभिः भक्ते सति शेषद्वय मुपलभ्यते तदा कन्या जन्म तथा एक, शुन्यशेषे च पुत्रोत्पत्तिर्भवति।

ज्योति—गर्भिणी के नामक्षर को शुक्ल पक्ष की तिथि संख्या से युक्त करें। पुनः उसमें ७ और मिलावें। फिर तीन का भाग भाग दें। यदि दो शेष बचे तो कन्या तथा एक या शून्य शेष रहे तो पुत्र का जन्म होता है।

नक्षत्राणामन्धत्वादिज्ञानम्—

अन्धकं तदनु मन्दलोचनं मध्यलोचनमतः सुलोचनम्।
रोहिणी प्रभृतिभं चतुर्विधं नूनमत्र गणयेत्पुनः ॥ ४५६ ॥
विनष्टार्थस्य लाभोऽन्धे शीघ्रं मन्दे प्रयत्नतः।
स्याद्दूरे श्रवणं मध्ये श्रुत्वाप्तिर्नसुलोचने ॥ ४५७ ॥

कुन्तला—सुगमः

ज्योति—रोहिणी नक्षत्र से लेकर क्रमशः एक-एक नक्षत्र अन्धलोचन, मध्यलोचन तथा सुलोचन संज्ञक होते हैं। इस प्रकार चार तरह के नक्षत्रों की कल्पना है। अन्ध नक्षत्र में खोई हुई वस्तु अथवा धन का शीघ्र लाभ होता है। मन्दलोचन नक्षत्र में खोए धन का यत्न करने से लाभ होता है। मध्यलोचन नक्षत्र में खोया हुआ धन कुछ दूर पर सुनाई दे और सुलोचन में खोए धन की प्राति नहीं होती है।

नक्षत्राणामन्धत्वादिबोधकचक्र—

अन्धलोचन	रो.	पुष्य.	उ. फा.	विशा.	पू. षा.	ध.	रे.
मन्दलोचन	मृ.	आश्ले.	ह.	अनु.	उ. षा.	शत.	अश्वि.
मध्यलोचन	आ.	म.	चि.	ज्ये.	अभि.	पू. भा.	भर.
सुलोचन	पुन.	पू. फा.	स्वा.	मू.	श्रव.	उ. भा.	कृ.

* * *

व्रतनिर्णय प्रकरणम्

गण गौरीव्रतनिण:—

मध्याह्नगा चैत्रसिता चतुर्थी यस्यां व्रतं स्याद्गणगौरिकायाः।
पूज्यौ नगाधीशसुतागणेशौ पक्वान्नमिष्टान्नविमिश्रपुष्पैः॥ ४५८॥

कुन्तला—मध्याह्नव्यापिनी चैत्रशुक्लचतुर्थ्यां गणगौरीव्रतं भवति व्रतेस्मिन् पक्वान्न, मिष्टान्नादिभिः युक्तैः पुष्पैः गणेशपार्वत्योः पूजनं भवति।

ज्योति—चैत्र शुक्ल चतुर्थी को गणगौरीव्रत होता है। यह व्रत मध्याह्नव्यापिनी ग्राह्य है। इस व्रत में पक्वान्न, मिष्ठान्न से युक्त पुष्पों से पार्वती तथा गणेश की पूजा होती है।

वटसावित्रीव्रतनिणय:—

ज्येष्ठे अमायांसततं विदध्यात्वटार्चने दर्शतिथौप्रयत्नात्।
तस्यार्चने पूर्वयुता भवेयुः भूतानयाष्टौ दशनाडिकश्चेत्॥४५९॥

कुन्तला—ज्येष्ठमासस्य कृष्णमावस्यातिथो वटसावित्री व्रतं भवति। पूर्वविद्धाग्राह्यमस्ति; परन्तु अष्टादशघटिकाभिः न्यूनं चेत् पूर्वदिनम् अन्यथा परदिनम्।

ज्योति—ज्येष्ठ मास के शुक्लपक्ष की अमावस्या को वटसावित्री व्रत होवा है। यह पूर्वविद्धा ग्राह्य है। परन्तु यदि चतुर्दशी १८ घटी से कम हो तो पूर्व दिन अन्यथा पर दिन ही ग्रहण करना चाहिए।

नागपञ्चमीव्रतनिर्णय:—

पञ्चमी नाग पूजायां कार्या षष्ठी समन्विता।
तस्यां तु तुषिता नागा इतरासचतुर्थिका॥ ४६०॥

कुन्तला—श्रवण शुक्ल पञ्चम्यां नागपञ्चमीवतं भवति। व्रतोऽगं षष्ठी विद्धा। सूर्योदय व्यापिन्य एव ग्राह्या। नागपूजातिरिक्तं अन्येषु चतुर्थीयुक्ता पञ्चमी ग्राह्ययोग्यो भवति।

ज्योति—श्रावण शुक्ल पक्ष की पञ्चमीतिथि को नाग पञ्चमी कहते हैं। यह षष्ठी विद्धा करनी चाहिए। यह पञ्चमी सूर्योदय व्यापिनी ही मानी जाती है। नागपूजा के सिवाय अन्यकार्यों में चतुर्थी युक्त पञ्चमी ग्रहण करने योग्य होती है।

रक्षाबन्धन एवं श्रावणी निर्णयश्च—

नभः सितायामपराह्नगा सा सद्बन्धनं पञ्चदशीतिथौ स्यात् ।
रक्षाभिधायाः शमितश्च विष्टेः पुरं नृपं हन्ति विनिश्चयेन ॥४६१॥

कुन्तला—श्रावणमासस्य पूर्णिमायां अपराह्णकाले विष्टेः परं रक्षाबन्धनं कार्यम् । भद्रायां (विष्ट्यां) ग्रामं, नृपं च अवश्यमेव विनश्यति ।

ज्योति—श्रावण शुक्ल पूर्णिमा को अपराह्ण काल के समय भद्रा बीत जाय तब रक्षाबन्धन करना चाहिए। भद्रा में रक्षाबन्धन करने से ग्राम और राजा दोनों का अवश्य ही नाश हो जाता है।

जन्माष्टमीव्रतनिर्णयः—

नभस्य मासे त्वसिताष्टमी या जन्माष्टमी ता समुदापरन्ति ।
सा चार्द्धरात्र्या भिगता विधेया निशीथ योगादुभयोः परैव ॥४६२॥

कुन्तला—भाद्रकृष्णाष्टमीतिथौ श्रीकृणजन्माष्टमी व्रतं भवति । निशीथ व्यापिनी व्रतोऽयम् । यदि निशीथे दिनद्वयं स्यात् तदा परदिने कार्या ।

ज्योति—भाद्र कृष्ण अष्टमी को श्रीकृष्ण जन्माष्टमी कहते हैं। यह निशीथ (अर्द्धरात्रि) व्यापिनी मानी जाती है। यदि दो दिन आधीरात को अष्टमी मिले तो पर दिन ही माननी चाहिए।

हरितालिका व्रतनिर्णयः—

शुक्लस्यपक्षस्य च या तृतीया भाद्रस्य गौरी व्रतमाहुरार्याः ।
मुहूर्त्तमात्रापि पराविधेया विनिश्चयोऽयं विदुषामभीष्टः ॥४६३॥

कुन्तला—भाद्र शुक्ल तृतीयायां हरितालिका व्रतं भवति । परदिने मुहूर्त्तमात्रमपि तस्मिन्नेव दिने कार्या ।

ज्योति—भाद्र यद शुक्ल तृतीया को हरितालिका व्रत होता है। यदि पर दिन मुहूर्तमात्र भी तीज मिले तो उसी दिन ही करना चाहिए।

ऋषिपञ्चमी व्रतनिर्णयः—

भाद्रस्यशुक्ला किल पञ्चमी या ऋषिव्रतं तत्र जगुः मुनीन्द्राः।
मध्याह्नगा सापि च मोक्षदात्री हस्तोद्भवान्नाशन वर्जितानाम् ॥४६४॥

कुन्तला—भाद्रशुक्ल पञ्चम्यां ऋषिपञ्चमी व्रतं भवति। मध्याह्नव्यापिनी व्रतमिदम्। स्वोत्पादितान्न भक्षणं वर्ज्यमस्ति। मुनीद्राः कथयन्ति इति।

ज्योति—मुनियों का मत है कि भाद्र शुक्ल पञ्चमी को ऋषिपञ्चमी व्रत होता है। यह मध्याह्नव्यापिनी पञ्चमी माननी चाहिए। अपने द्वारा उत्पादित अन्न इस ऋषि पञ्चमी में खाना वर्जित है।

अनन्तचतुर्दशी, नृसिंहचतुर्दशी, तथा शिवरात्रिव्रतनिर्णयः—

समस्तमासेषुचतुर्दशी या कृष्णाद्युपोष्या तु निशीथगा सा।
भाद्रस्य शुक्ला पि मुहूर्त्तमात्रा परैव सायाह्नगता तु राधे ॥४६५॥

कुन्तला—फाल्गुन कृष्णा चतुर्दश्यां शिवरात्रिव्रतं भवति। समस्तमासेष कृष्णाचतुर्दशी अर्द्धरात्रिव्यापिनी वोध्या। भाद्रशुक्ल चतुर्दश्यां 'अनन्त चतुर्दशीव्रतं' भवति। मुहूर्त्तमात्रोऽपि चतुर्दशी भवेत् तदा परदिने एव ग्राह्या। वैशाख शुक्ल चतुर्दयां नृसिंहव्रतं भवति। सायाह्नव्यापिणी व्रतोऽयम्।

ज्योति—फाल्गुन मास के कृष्ण पक्ष की चतुर्दशी को शिवरात्रि व्रत होता है। यह अर्द्धरात्रि व्यापिनी हो तभी ग्राह्य है। भाद्रपद मास की शुक्ल पक्ष की चतुर्दशी को अनन्त व्रत होता है। एक मुहूर्त्त भी दिन में चतुर्दशी मिलने पर दूसरे दिन ही करना चाहिए। वैशाख के शुक्लपक्ष की चतुर्दशी को नृसिंह व्रत होता है। यह सायाह्नव्यापिनी ग्राह्य है।

विशेष—अनन्त चतुर्दशी विशेषतया विद्वान् लोग मध्याह्नव्यापिनी ही मानते हैं। परन्तु प्रकृत ग्रन्थ में उदयव्यापिनी माधवाचार्य का मत है। जो एकदेशीय है।

महालक्ष्मीव्रतनिर्णयः—

ईषस्य कृष्णे खलु चाष्टमी या महारमायां मुनिभिः प्रदिष्टा ।
त्रिभिः मुहूर्त्तैः प्रमिता विदध्याच्चन्द्रोदयादेव धनाभिलाषा ॥ ४६६ ॥

कुन्तला—आश्विनमासस्य कृष्णाष्टम्यां महालक्ष्मीव्रतं भवति । दिवा त्रिमुहूर्त्तंप्राप्ते परदिने एव ग्राह्या । परन्तु धनाभिलाषिनः जनाः चन्द्रोदय व्यापिनी एवं गृह्णन्ति ।

ज्योति—आश्विन मास के कृष्णपक्ष की अष्टमी को महालक्ष्मी का व्रत होता है । यह तीन मुहूर्त्त भी दिन में मिले तो दूसरे ही दिन करना चाहिए । परन्तु धनाभिलाषी लोग चन्द्रोदय व्यापिनी ही मानते हैं ।

विजयादशमीव्रतनिर्णयः—

ईष्यां दशम्यां विजया विधेया पूर्वान्वितायामपराह्णकाले ।
पूजा विदध्यान्नृपतिः प्रशस्तां पूर्वापराह्ण श्रुति योगजश्च ॥४६७॥

कुन्तला—आश्विनमासस्य शुक्लपक्षस्य दशम्यां विजयादशमी इति भवति । पूर्वयुक्ता अपराह्णे एव ग्राह्या । श्रवणनक्षत्र प्राप्ते पूर्वापरं दिनद्वयं च भवति ।

ज्योति—आश्विन मास के शुक्लपक्ष की दशमी को विजयादशमी कहते हैं । यह पूर्वयुक्ता अपराह्ण काल में ही ग्रहण करना चाहिए । यदि श्रवण नक्षत्र मिलता है तो पूर्वापर दोनों दिन ही ग्रहण करना चाहिए ।

करवाचौथनिर्णयः—

ऊर्जस्य कृष्णा खलु या चतुर्थी चन्द्रोदयासन्नगताविधेया ।
गौरीव्रतं चेदमिदं प्रदिष्टं वैधव्यनाशस्य विधौ समर्थः ॥४६८॥

कुन्तला—कार्तिकमासस्य कृष्णाचतुर्थी तिथिः वैधव्यदोषविनाशिनी तिथिर्भवति । तावां तिथौकारवां चौथव्रतमाचरन्ति जनाः । व्रतोऽयं चन्द्रोदयव्यापिनी ग्राह्या ।

ज्योति—कार्तिक मास के कृष्णपक्ष की चौथ को वैधव्य दोष नाशक

कर्कचतुर्थी (कारवाचौथ) का व्रत होता है । इस व्रत को चन्द्रोदयव्यापिनी ही ग्रहण करनी चाहिए ।

दीपमालिका व्रतनिर्णयः—

या कार्तिकेऽमास्यासिते तिथिर्या प्रदोषगादर्शतिथौ मनुष्यः ।
यस्या प्रकुर्यात् खलु दीपदानं पूर्णे निशीथेऽर्चनमम्बिकायाः ॥४६९॥

कुन्तला—कार्तिकमासस्यकृष्णपक्षस्य अमायां पीपदानं कर्त्तव्यमिति । सायं काले यदा अमाभवेत तदा एव व्रतमाचरणीयम् । अर्द्धरात्रौ महालक्ष्मी पूजनेऽपि कार्यः ।

ज्योति—कार्तिक मास के कृष्णपक्ष की अमावस्या को यदि सायं काल में अमावस्या मिल जाय तो दीपदान करना चाहिए । उसी दिन अर्द्धरात्रि के समय विधिवत् महालक्ष्मी का पूजन भी करना चाहिए ।

यमद्वितीयानिर्णयः—

उर्जे शुक्लद्वितीया यामपराह्णेऽर्चयेद्यमम् ।
स्नानं कृत्वा भानुजायां यमलोकं न पश्यति ॥ ४७० ॥

कुन्तला—कार्तिक मासस्य शुक्लद्वितीयायां अपराह्णे यमद्वितीया व्रतमाचरणीया । तासां तिथौ यमस्यपूजा तथा यमुनायां स्नानं च कर्त्तव्यमिति ।

ज्योति—कार्तिका मास शुक्लपक्ष की द्वितीया यदि अपराह्ण समय में मिले तो यमद्वितीया व्रत और वमराज की पूजा तथा यमुना में स्नान करना चाहिए ।

संकष्टचतुर्थीव्रतनिर्णयः—

माघस्य कृष्णे खलु या च चतुर्थी तस्या व्रतं याति सुखं समग्रम् ।
निशीथिनी सोदयगा प्रशस्ता महर्षिभिर्नूनमुदाहृता सा ॥ ४७१ ॥

कुन्तला—माघमासस्या कृष्णा चतुर्थी तिथिः संकष्टचतुर्थी इति कथ्यते । व्रतोऽयं चन्द्रोदयव्यापिनीचतुर्थी ग्राह्या ।

ज्योति—माघमास के कृष्णपक्ष की चतुर्थी को संकष्ट चतुर्थी व्रत होता है । इसमें चन्द्रोदय व्यापिनी चतुर्थी ग्रहण करना चाहिए ।

होलिकादाहनिर्णयः—

तपस्यमासेतिपञ्चदश्यां पूर्वान्वितायां निशिहोलिका सा।
भद्रावसाने च बुधैः प्रकुर्याद्दाहं पुराणार्थविदो वदन्ति ॥४७२॥

कुन्तला—अर्थज्ञाः फाल्गुनमासस्य शुक्लपूर्णिमातिथौ विष्टेः परं (भद्रोत्तरं) होलिकादाहः कुर्वन्ति।

ज्योति—अर्थ को जानने वाले लोग फाल्गुन मास के शुक्लपक्ष की पूर्णिमा को भद्रा वीत जाने के बाद होलिकादाह करना शुभ मानते हैं।

विशेष—सूर्यारुण का त्याग कर होलिकादाह करते हैं। यदि सम्पूर्ण रात्रि भद्रा हो तो भद्रापुच्छ में होलिका दाह होता है। यदि उस दिन चन्द्र ग्रहण हो तो भद्रा को छोड़कर भी चन्द्र ग्रहण में होलिकादाह रात्रि में होना चाहिए।

एकादशी व्रतनिर्णयः—

एकादशी यदा नष्टा द्वादशी सकला भवेत्।
उपोष्या द्वादशी शुद्धा त्रयोदश्यां तु पारणा ॥ ४७३ ॥
उदयैकादशी स्वल्पा अन्तश्चैव त्रयोदशी।
मध्ये तु द्वादशीपूर्णा त्रिस्पृशा च हरिप्रिया ॥ ४७४ ॥
यथामुपोष्य सद्यस्तु द्वादशी विष्णु वल्लभाम्।
एकामुपोष्यतां यः स्यात् सहस्रव्रततः फलम् ॥ ४७५ ॥
सहस्रगुणितं पुण्यं त्रयोदश्यांतु पारणम्।
दशमीवेध संयुक्ता हन्ति पुण्यं पुराकृतम् ॥ ४७६ ॥

कुन्तला—यदि एकादशीनष्टाभवेदर्थात् तस्या हानिः स्यात् तथा सम्पूर्णदिनं द्वादशीतिथिः मिलति तदा द्वादश्यां व्रतं त्रयोदश्यां च पारण कार्या।

यदि उदयकाले एकादशी स्वल्पा, अन्ते त्रयोदशी तथा उभलोर्मध्ये द्वादशी स्यात्तदास्या नाम "त्रिस्पृहा" एकादशीव्रतमित्युच्यते। अस्यव्रता-

चरणे न सहस्रएकादशीव्रतस्य फलम् प्राप्नोति इत्यर्थः। अस्यां त्रयोदश्यामेव पारणायथोचितम् भवतीति। यदि दशमीविद्धाएकादशी भवेत् तदा व्रताचरणेन पुण्यस्य हानिर्भवतीति।

ज्योति—यदि एकादशी की हानि हो और पूर्ण द्वादशी हो तो द्वादशी में व्रत तथा त्रयोदशी में पारणा करे। यदि उदयकाल में एकादशी थोड़ी हो किन्तु अन्त में त्रयोदशी तथा मध्य में द्वादशी हो तो इसको त्रिस्पृहा एकादशी व्रत कहते हैं। इस एकादशी का व्रत करने से हजार एकादशी व्रत का फल मिलता है। इसमें त्रयोदशी को ही पारणा करना उचित है। दशमीवेधयुक्ता एकादशी सभी पुण्यों को नष्ट करने वाली होती है।

सामान्यतिथिनिर्णयः—

एकादश्यष्टमी षष्ठी पूर्णमासी चतुर्दशी।
अमावास्या तृतीया च ता उपोष्या परान्विता॥ ४७७॥

एकादशी अनन्तश्च तृतीया या च पञ्चमी।
पूर्वविद्धा च कर्त्तव्या परविद्धा शुभावहा॥ ४७८॥

जन्माष्टमी जयन्ती च शिवरात्रि चतुर्दशी।
पूर्वविद्धाकर्त्तव्या तिथ्यन्ते चैव पारणा॥ ४७९॥

तृतीयायां पञ्चमी दुर्गा एकादश्यष्टमी तथा।
कर्त्तव्यं च परायुक्ता शेषं पूर्वं तु संयुता॥ ४८०॥

कुन्तला—एकादशी, अष्टमी, षष्ठी, पूर्णिमा, चतुर्दशी, अमवस्या च आसां तिथीनां व्रतसुदयव्यापिनी एव ग्राह्या। एकादशी, अनन्त चतुर्दशी, तीज एवं पञ्चमी व्रतेषु परविद्धातिथि ग्राह्या भवति। जन्माष्टमी, जयन्ती, शिवरात्रि तथा चतुर्दशी व्रतेषु पूर्वविद्धा एव गाह्या तथा तिथ्यन्ते च पारणा कार्या। परन्तु जन्माष्टमी निशीथव्यापिनी ग्राह्या। तीज, पञ्चमी, दुर्गावतं एकादशी, अष्टमी तिथीनां व्रतं परविद्धा एव ग्राह्या।

ज्योति—एकादशी, अष्टमी, छठ, पूर्णिमा, चतुर्दशी, तथा अमावस्या इन तिथियों का व्रत उदयव्यापिनी में ही करना चाहिए। एकादशी, अनन्त

चतुर्दशी, तीज एवं पञ्चमी के व्रतों में परविद्धा तिथि ग्राह्य है। जन्माष्टमी, जयन्ती, शिवरात्रि तथा चतुर्दशी के व्रतों में पूर्वयुक्ता में व्रत करके तिथ्यन्त में पारणा करना चाहिए। लेकिन जन्माष्टमी अर्द्धरात्रि व्यापिनी ग्रहण की जाती है। तीज, पञ्चमी, दुर्गाव्रत, एकादशी, अष्टमी; इन तिथियों के व्रत परविद्धा में ही करना चाहिए।

◆

सामान्यतिथिनिर्णयचक्र

सं०	व्रतपर्व	निर्णय
१	गणगोरी	मध्यानव्यापिनी
२	वटसावित्री	परविद्धा, पूर्वविद्धा च
३	नागपञ्चमी	परयुता
४	श्रावणी	भद्रात्यज्या पूर्णिमा
५.	वहुला (चौथ)	चन्द्रोदय व्यापिनी
६	हलषष्ठी	परयुता
७	जन्माष्टमी	निशीथव्यापिनी
८	हरितालिका	परयुता
९	ऋषिपञ्चमी	मध्याह्नव्यापिनी
१०	अनन्तचतुर्दशी	पराग्राह्या
११	महालक्ष्मी	चन्द्रोदयव्यापिनी
१२	दुर्गाप्रतिपदा	परयुता
१३	विजयादशमी	श्रवण नक्षणयुता
१४	कारवा चौथ	चन्द्रोदय व्यापिनी
१५	दीपमालिका	सायाह्नव्यापिनी

सं०	व्रतपर्व	निर्णय
१६	यमद्वितीया	अपराह्ण व्यापिनी
१७	संकष्ट चौथ	चन्द्रोदय व्यापिनी
१८	शिवरात्रि	निथीथव्यव्यापिनी
१९	होली	भद्रात्याज्य
२०	एकादशी	दशमोविद्धात्याज्य

॥ इति लघुसंग्रहः समाप्तः ॥

इति शुभम्

ज्योतिष-ग्रन्थाः

१. सिद्धान्तशिरोमणिः । भास्कराचार्य कृत । स्वकृत 'वासनाभाष्य' सं० बापूदेव शास्त्री १००-००

२. सूर्यसिद्धान्तः । पं० कपिलेश्वर चौधरी कृत 'तत्वामृत' संस्कृत टीका नोट्स आदि सहित ७५-००

३. नारदसंहिता । विमला भाषा टीका एवं विविध टिप्पणियों से युक्त हिन्दी व्याख्याकार-पं० रामजन्म मिश्र ७५-००

४. बृहत्पाराशर-होराशास्त्र । श्री पराशर मुनिविरचित । सविमर्श 'सुधा' व्याख्यासहित । सम्पादक तथा व्याख्याकार-दैवज्ञ श्री पंडित देवचन्द्र झा १२५-००

५. नरपतिजयचर्यास्वरोदयः । श्री नरपति कवि कृत । पं० गणेशदत्त पाठक कृत 'सुबोधिनी' संस्कृत हिन्दी टीका सहित ७५-००

६. प्रश्नभूषण । दैवज्ञ श्री जीवनाथ झा कृत। 'ज्योति' 'उत्तरा' संस्कृत-हिन्दी टीका सहित । पं० रामचन्द्र पाठक । २५-००

७. सिद्धान्तशिरोमणिः । भास्कराचार्य कृत । स्वकृत 'वासना भाष्य' सहित । मुरलीधर ठाकुर कृत 'प्रभावासना' टीका, नोट्स, प्रमाण आदि युक्त । प्रथम भाग २०-००

८. मुहूर्तमार्तण्ड । नारायण दैवज्ञ कृत । पं० कपिलेश्वर शास्त्री कृत 'मार्तण्ड प्रकाशिका' संस्कृत-हिन्दी टीका सहित ४०-००

९. जातकपारिजातः (ज्यौतिष) । वैद्यनाथ कृत । कपिलेश्वर चौधरी कृत 'सुधाशालिनी' सं. टी. तथा मातृप्रसाद पाण्डेय कृत 'विमला' हिन्दी टीका १२५-००

१०. ग्रहलाघवम् । श्री गणेश दैवज्ञ कृत । श्री विश्वनाथ दैवज्ञ कृत संस्कृत टीका तथा श्री युगेश्वर झा कृत 'माधुरी' संस्कृत हिन्दी टीका नोट्स प्रयोग नवीन उदाहरण आदि सहित ३०-००

११. शीघ्रबोध । श्रीकाशीनाथ दैवज्ञ प्रणीत । 'कुन्तला' संस्कृत, 'ज्योति' हिन्दी व्याख्या सहित । पं० रामचन्द्र पाठक २०-००

१२. फलित संग्रहः । संस्कृत, हिन्दी टीका सहित । संग्रहकर्ता । रामयत्न ओझा टीकाकार—डॉ० रामचन्द्र पाठक एवं डॉ० कामेश्वर उपाध्याय । ५०-००

प्राप्तिस्थान-चौखम्भा संस्कृत संस्थान, पो. बा. नं. ११३९, वाराणसी